सामाजिक न्याय के योद्धा

विजय सिंह पथिक

शंकर सहाय सक्सेना

सामाजिक न्याय के योद्धा

विजय सिंह पथिक

शंकर सहाय सक्सेना

विजय सिंह पथिक शोध संस्थान

ग्रेटर नोएडा उत्तरप्रदेश

फोन : 9313203731

प्रकाशक
राजकुमार भाटी

अध्यक्ष
विजय सिंह पथिक शोध संस्थान

© लेखकाधीन

प्रथम संस्करण

मूल्यः पचास रूपये

मुद्रकः मोडकेयर इन्टरप्राइजेज
जी-17डी, साउथ एक्स-II
नई दिल्ली - 110049
मो.9899223380

प्रकाशकीय

महान स्वतन्त्रता सेनानी, लेखक, कवि, पत्रकार, समाज सुधारक व किसान नेता विजयसिंह पथिक के महत्वपूर्ण कार्यों एवं जीवन–दर्शन को जनता के सम्मुख लाने के मिशन की कड़ी में इस बार यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है। पुस्तक विख्यात लेखक श्री शंकर सहाय सक्सेना द्वारा लिखित है। पुस्तक लेखन की भूमिका के विशय में लेखक ने अपने वक्तव्य में विस्तार से प्रकाश डाला है। यह पुस्तक हम सबके प्रिय और पथिक साहित्य पर पी–एच0डी0 कर रहे स्व0 प्रो0 मनबीर सिंह द्वारा बीकानेर स्थित राजस्थान राज्य अभिलेखागार से खोज कर लाई गई। इतनी महत्वपूर्ण, प्रमाणित और विश्वसनीय पुस्तक को खोज कर लाने के लिए हम सभी प्रो0 मनबीर सिंह जी के आभारी हैं। दुर्भाग्यवश हमारा आभार स्वीकार करने के लिए आज वे हमारे बीच उपस्थित नहीं हैं। पथिकजी के साथ–साथ उनके परम अनुयायी प्रो0 मनबीर सिंह को भी हार्दिक श्रद्धांजलि।

पथिकजी के विशय में अध्ययन की गहराई जितनी बढ़ती जाती है उनका व्यक्तित्व उतना ही विराट और विशाल दिखाई देता है। पथिकजी एक असाधारण व्यक्ति थे। इस देश और समाज पर जो उनका ऋण है, उसे तो हम कोई भी मूल्य चुका कर उतार नहीं सकते किन्तु उनके कार्यों का विवरण अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाकर उन्हें प्रेरणा ग्रहण करने में सहयोग तो प्रदान कर ही सकते हैं। इसी कड़ी में विजय सिंह पथिक शोध संस्थान के द्वारा लगातार पथिकजी के साहित्य प्रकाशन का प्रयास किया जा रहा है।

राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर के निदेश डा. महेन्द्र सिंह खड़गावत जी सहयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय है। जिनके सहयोग के बिना यह महान कार्य पूरा नहीं हो सकता था। इस पुस्तक का आवरण पृष्ठ और विजय सिंह पथिक जी का यह नव निर्मित चित्र विश्व विख्यात चित्रकार डॉ0 लाल रत्नाकर, विभागाध्यक्ष, ड्राईंग एण्ड पेन्टिंग, एम0एम0एच0 कॉलेज, गाजियाबाद द्वारा तैयार किया गया है। विजय सिंह पथिक शोध संस्थान इन सभी सहयोगियों का सदैव आभारी रहेगा।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन का काफी श्रेय मेरे परम मित्र यशवीर सिंह गुर्जर और डॉ0 राकेश राणा जी को है। उनकी लगन, परिश्रम और पथिकजी के प्रति आस्था के कारण ही पुस्तक का प्रकाशन सम्भव हो सका है। पुस्तक प्रकाशन का पूरा व्यय श्री श्यामवीर चौधरी एड़वोकेट जी ने वहन किया है। उनका आभार। संस्थान पथिकजी के सम्पूर्ण साहित्य को प्रकाश में लाने के लिए कृत संकल्प है।

ग्रेटर–नोएडा
27, फरवरी 2018

राजकुमार भाटी
अध्यक्ष,
विजय सिंह पथिक शोध संस्थान

निवेदन

पथिकजी की जीवनी को पाठकों के सामने लेकर उपस्थित होते हुए लेखक को असीम हर्ष और संतोष है। उनका प्रेरणादायक जीवन हमारी तरुणाई में देश तथा पीड़ित मानवता के प्रति प्रेम उत्पन्न करे इसी उद्‌देश्य से लेखक ने सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी, त्याग, शौर्य और स्वाभिमान के प्रतीक, राजस्थान के अग्रदूत, देश के लिए सर्वस्व निछावर कर देने वाले उस महान आत्मा का जीवन लिखा है। लेखक इस तथ्य को स्वीकार करना चाहता है कि पथिक जी की जीवनी लिखने का वह अधिकारी नहीं था। उसने यह अनाधिकार चेष्टा की है। वास्तव में उनका जीवन–चरित्र लिखने के अधिकारी चार व्यक्ति हैं। बिजोल्यां के साधु सीताराम दास, श्री माणिक्यलाल वर्मा, श्री रामनारायण चौधरी, और श्री शोभालाल गुप्त। यह चारों उनके निकट सम्पर्क में आए उनके नेतृत्व में उन्होंने राजस्थान की जागृति का शंख फूंका और देशी राज्यों की निरंकुश सरकारों से संघर्ष किया। इनमें से श्री रामनारायण चौधरी तथा श्री शोभालाल गुप्त लेखनी के धनी और लेखन का धंधा ही करते हैं। लेखक का विश्वास था कि वे पथिकजी का जीवन–चरित्र लिखेंगे। परन्तु वे अन्य कार्यों में व्यस्त रहने के कारण पथिकजी का जीवन–चरित्र नहीं लिख सके।

लेखक को पथिकजी से अधिक घनिष्ठ होने का कभी सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। साधारण परिचय से अधिक उसको और कुछ नहीं कहा जा सकता। परन्तु लेखक के हृदय में उनके महान व्यक्तित्व के प्रति अगाध श्रद्धा थी। यही कारण था कि जब उसे अन्य अधिकारी व्यक्तियों के द्वारा उनकी जीवनी लिखी जाने की आशा नहीं रही तो उसने यह कार्य हाथ में लिया।

लेखक इस बात को भी अस्वीकार करना नहीं चाहता कि पथिकजी के सम्बन्ध में उसकी व्यक्तिगत जानकारी प्रायः नही के बराबर थी। अतएव पुस्तक में बहुत सी कमियां और दोष रह जाना स्वाभाविक है। लेखक जो कुछ सामग्री और जानकारी इकट्‌ठी कर सका, उसी को लेकर उसने पुस्तक लिखी है। पुस्तक जैसी भी है उसे तो केवल यह संतोष है कि वह राजस्थान के युवकों के हाथों में पथिकजी का प्रेरणादायक जीवन चरित्र रख सका।

पुस्तक के लिखने में मुझे बहुत–से महानुभावों से सहायता मिली है। पथिकजी के अनन्य मित्र और सहयोगी बिजोल्यां के साधु सीताराम दास ने अपने संस्मरण लिख भेजे। ओछड़ी के ठाकुर श्री भूपालसिंह (जिनका थोड़े दिन हुए स्वर्गवास हो गया) जिनके यहां पथिकजी अज्ञातवास में छिपकर रहे थे और जिनके साथ उनका अन्त तक स्नेह सम्बन्ध रहा, उन्होंने भी अपने संस्मरण लिखवाकर भिजवाए थे। श्री रामनारायण चौधरी की पुस्तक 'वर्तमान राजस्थान' श्री पृथ्वीसिंह मेहता की पुस्तक 'हमारा राजस्थान', स्वर्गीय बाबा नरसिंहदास की पुस्तक 'राजस्थान की पुकार' पुस्तकों से लेखक को सहायता मिली है। श्री जगदीश प्रसाद जी 'दीपक' द्वारा सम्पादित पथिकजी की संक्षिप्त जीवनी का भी लेखक ने उपयोग किया है। श्री शोभालाल गुप्त के पथिकजी सम्बन्धी लेख तथा अन्य पत्रकारों और लेखकों द्वारा पथिकजी के सम्बन्ध में लिखी हुई सामग्री का उपयोग पुस्तक लिखने में किया है। लेखक उन सभी का हृदय से आभार स्वीकार करता है। बन्धु श्री नाथूराम जी खड़गावत ने पथिकजी के सम्बन्ध में राजस्थान आरकाइव्ज में जो कुछ सामग्री थी वह उपलब्ध कर दी, बिजोल्यां किसान आन्दोलन, मेवाड़ सरकार द्वारा पथिकजी पर जो ऐतिहासिक मुकदमा चलाया गया, उसका विवरण, सभी ज्ञातव्य

बातें मुझे श्री खड़गावत जी से प्राप्त हुई। श्री खड़गावत जी से लेखक को अत्यन्त मूल्यवान सहायता प्राप्त हुई है। लेखक उन्हें धन्यवाद देकर उसके मूल्य को कम नहीं करना चाहता। लाला अमृतलाल का पथिकजी के विरोध में पैम्पलेट भी मैने देखा और पथिकजी का अदालत के सामने वह ऐतिहासिक बयान भी पढ़ा जिसने उस समय देश के राजनैतिक जगत में भारी हलचल मचा दी थी। लेखक ने पुस्तक के अन्तिम परिच्छेद में पथिकजी की साहित्य साधना के सम्बन्ध में थोड़ी सी जानकारी दी है। वह नितान्त अपर्याप्त और अपूर्ण है। कारण यह है कि पथिकजी ने जो शोध और खोज की है, भारतीय गणतन्त्र का जो वृहद् इतिहास लिखा है उसको लेखक ने नहीं पढ़ा और न उनकी कोई अप्रकाशित रचनाएं ही पढ़ी हैं। साथ ही लेखक पथिकजी की साहित्यिक रचनाओं का मूल्यांकन कर सकने का अपने को अधिकारी भी नहीं मानता। पथिकजी का क्रान्तिकारी जीवन इतना रहस्यमय है कि उसका पूरा पता शायद ही किसी को हो। पथिकजी ने कभी किसी को अपने क्रान्तिकारी जीवन के बारे में कुछ बतलाया ही नहीं। यहां तक कि उनकी पत्नी भी उनके क्रान्तिकारी रहस्यमय जीवन से परिचित नहीं हैं। जो कुछ इधर–उधर बिखरी हुई सामग्री मिली है वही देकर लेखक ने संतोष किया है।

पथिकजी का प्रथम विधिवत् जीवन–चरित्र लिखने का श्रेय चित्तौड़ निवासी श्री भीमराज धाड़ोलिया को है। उन्होंने चित्तौड़ के 'ललकार' साप्ताहिक पत्र में पथिकजी का जीवन–चरित्र प्रकाशित किया था। श्री धाड़ोलिया जी का पथिकजी से घनिष्ठ सम्पर्क रहा है और उन्हें स्वयं पथिकजी का अपने सम्बन्ध में लिखा हुआ थोड़ा मैटर मिला था। उन्होंने उस सामग्री के आधार पर शेष स्वयं पथिकजी से पूछकर लिखा था। अस्तु, उनका लिखा हुआ जीवन–चरित्र प्रमाणिक माना जाना चाहिए। लेखक ने धाड़ोलिया जी के लेखों का भी पूरा उपयोग किया है। अन्त में मैं पथिकजी की धर्मपत्नी बहिन जानकी देवी पथिक की सहायता और प्रेरणा का उल्लेख कर देना आवश्यक समझता हूँ। उनकी प्रेरणा और सामग्री एकत्रित करने में सहायता के फलस्वरुप ही लेखक यह कार्य कर सका है। जानकी देवी जी ने अपने गृहस्थ जीवन के संस्मरण लिख भेजे। राजस्थान सेवा संघ टूटने के बाद उनका विवाह हुआ था।

पथिकजी के महान व्यक्तित्व के अनुरुप उनकी यह जीवनी नहीं लिखी जा सकी, क्योंकि लेखक उसका अधिकारी नहीं था परन्तु पथिकजी के प्रशंसक और भक्त यह सोचकर कि जैसी भी है उनकी जीवनी प्रकाशित हो गई, लेखक को क्षमा करेंगे। जिस कृतघ्नता का परिचय राजस्थान ने पथिकजी के प्रति दिया है उसका किंचित्मात्र परिमार्जन हो सके और उनका प्रेरणादायक जीवन देश के युवकों में देशप्रेम जागृत करे। इसी उद्देश्य से लेखक ने उनका जीवन लिखा है।

जयपुर **शंकर सहाय सक्सेना**

प्रथम अध्याय

प्रथम और अन्तिम दर्शन

बचपन से ही लेखक मेवाड़ के गौरवशाली अतीत इतिहास को मातृभूमि की बलिवेदी पर अपने को बलिदान कर देने वाले वीरों की विरुदावलि सुनकर और प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप की जीवन गाथा पढ़कर, मेवाड़ की ओर आकर्षित हो गया था। जब उसने किशोर अवस्था में कर्नल टाड लिखित राजस्थान का इतिहास पढ़ा तो वह आत्म–विभोर हो उठा। उस समय लेखक केवल चौदह वर्ष का था। कर्नल टाड के इतिहास के चित्र उसके मानसपटल पर ऐसी गहराई से अंकित हो गए कि वह बहुधा अकेले में बैठकर उनकी कल्पना किया करता। उसकी आँखों के सामने प्रातः स्मरणीय प्रताप, पन्ना धाय, जयमल, फत्ता, झाला, अज्जा, राणा सांगा, पद्मिनी के चित्र घूमते और मन करता कि चित्तौड़ और हल्दीघाटी की तीर्थयात्रा के लिए जाया जाए। दिजेन्द्रलाल राय के नाटकों में मेवाड़ पतन, दुर्गादास आदि को पढ़कर मेवाड़ के प्रति लेखक का आकर्षण और भी अधिक बढ़ गया। उसके हृदय के गहन तल में मेवाड़ बस गया, किन्तु मेवाड़ पहुंचने का उसके पास न तो कोई साधन था और न ही कोई उपाय ही था। अतएव वह मेवाड़ के सम्बन्ध में जो भी जानकारी प्राप्त हो सकती उसको प्राप्त करने का प्रयास करता। उसी समय बिजोल्यां किसान सत्याग्रह आरम्भ हुआ। स्वर्गीय गणेश शंकर विद्यार्थी के सम्पादकत्व में कानपुर का 'प्रताप' बिजोल्यां के किसानों के उस अनोखे वीरतापूर्ण संघर्ष की रोमांचकारी कहानी सुनाने लगा। पथिकजी के क्रान्तिकारी नेतृत्व में बिजोल्यां के निरीह और निर्धन किसान ब्रिटिश शासन और मेवाड़ राज्य की क्रूर और दुर्दमनीय शक्ति से लोहा ले रहे थे। मेवाड़ पुलिस की क्रूरता और ठिकाने का दमन चरम सीमा पर पहुंच गया था। बिजोल्यां सत्याग्रह ने समस्त देश का ध्यान पुनः मेवाड़ की ओर आकर्षित किया। लेखक बड़े चाव से 'प्रताप' में प्रकाशित बिजोल्यां संघर्ष की कहानी पढ़ता। तभी लेखक पथिकजी के नाम से परिचित हुआ। सोचता, कौन है यह व्यक्ति जिसने इन निर्धन निरीह और पीड़ित किसानों में अदभुत शौर्य, साहस और बलिदान की भावना भर दी है। जो जागीरदार, मेवाड़ राज्य और ब्रिटिश शासन की सम्मिलित शक्ति को ऐसी दृढ़ता से चुनौती दे रहे हैं। तभी से लेखक का पथिकजी के नाम से परिचय हुआ। लेखक हाईस्कूल परीक्षा पास कर सनातन धर्म कॉलेज कानपुर में वाणिज्य विषय का अध्ययन करने आया तब वह प्रताप तथा उसके यशस्वी संपादक स्वर्गीय गणेश शंकर विद्यार्थी के अधिक समीप आया और पथिकजी और बिजोल्यां आन्दोलन की अधिक जानकारी प्राप्त कर सका। ब्रिटिश शासन के संकेत पर पथिकजी जेल में कैद कर दिये गये। किसानों पर और दमन किया गया परन्तु पथिकजी द्वारा जो अग्नि प्रज्वलित कर दी गयी थी वह नहीं बुझी। किसान नतमस्तक नहीं हुए, उन्होंने दमन का दृढ़ता के साथ मुकाबला किया। लेखक का मेवाड़ के प्रति आकर्षण बढ़ता ही जा रहा था। अब पथिकजी भी उनके आकर्षण का केन्द्र बन गए। लेखक ने 1926 ई0 में बी0कॉम0 परीक्षा उत्तीर्ण की और सनातन धर्म कॉलेज में एम0ए0 अर्थशास्त्र में प्रवेश ले लिया। उसी समय महाराणा कॉलेज उदयपुर के लिए भूगोल अध्यापक की आवश्यकता का ज्ञापन पत्रों में प्रकाशित हुआ। सोचा कि क्यों न उस स्थान के लिए प्रार्थना पत्र भेज दूँ। यदि साक्षात्कार के लिए बुला लिया गया तो अनायास ही राज्य के व्यय से उदयपुर की यात्रा होगी और उदयपुर, चित्तौड़ तथा हल्दीघाटी को देखने की

चिरपोषित स्वप्निल अभिलाषा पूरी हो जावेगी। नौकरी तो उस समय करने की कोई इच्छा भी नहीं क्योंकि सनातन धर्म कॉलेज में लेखक को पचास रुपये की छात्रवृत्ति मिलती थी। पचास रुपये मासिक में उस समय कॉलेज का व्यय भली–भांति चल जाता था। पचास रुपये की छात्रवृत्ति छोड़कर सौ रुपये मासिक की नौकरी करना बुद्धिमानी नहीं थी। फिर भावी उन्नति की दृष्टि से एम0ए0 करना आवश्यक था। परन्तु मेवाड़ को देखने की लालसा इतनी तीव्र थी कि बिना किसी से परामर्श लिए ही प्रार्थना पत्र भेज दिया। उस समय सोचा था कि मैं ले ही लिया जाऊंगा यह आवश्यक नहीं है। यदि ले भी लिया जाऊं तो अधिक वेतन की मांग करने से बच जाऊंगा। किन्तु साक्षात्कार के लिए बुलाए जाने पर राज्य के व्यय से अनायास ही मेवाड़ के दर्शन कर सकूंगा। प्रार्थना पत्र भेजकर मैं प्रायः भूल गया। कई महीने हो गए। साक्षात्कार के लिए कोई सूचना नहीं आई। बात आई हो गई। अक्टूबर आ गया। एक रात्रि को कॉलेज के छात्रावास में जब मैं सो रहा था, रात्रि के दो बजे थे तो तार बांटने वाले ने आकर जगाया। तार पढ़ा तो ज्ञात हुआ कि महाराणा कॉलेज में भूगोल अध्यापक के पद पर मेरी नियुक्ति की गई है और मुझे शीघ्र से शीघ्र आने के लिए लिखा गया था। बड़े असमंजस में पड़ गया। सोचा कि क्या करना चाहिए। एक ओर मेवाड़ का तीव्र आकर्षण और दूसरी ओर उच्च शिक्षा का स्वप्न तथा मेरे पूज्य गुरुदेव प्रिंसिपल शंकरप्रसाद भार्गव की असहमति का भय। सो नहीं सका। प्रातःकाल होते–होते मैने निश्चय कर लिया कि उदयपुर जाऊंगा। प्रातःकाल उठकर सीधे श्रद्धेय आचार्य जी के पास गया, उन्हें सारी परिस्थिति बतलाई। पहले तो वो मेरी मूर्खता और अनुभवहीनता पर थोड़ा क्रुद्ध हुए किन्तु मेवाड़ के प्रति मेरे दृढ़ मोह को देखकर आज्ञा दे दी। मैं उसी दिन मित्रों से विदा लेकर गुरुजनों के चरण स्पर्शकर मेवाड़ की ओर चल पड़ा।

हृदय में विचार तेजी से आते जाते, सोचता कि मैने एक बहुत बड़ा निर्णय किया है। यदि इसका परिणाम मेरे भावी जीवन के लिए अच्छा न रहा तो परिचित लोग मुझे मूर्ख कहकर मुझपर हसेंगे। किन्तु साथ ही मेवाड़ दर्शन करने चित्तौड़ और हल्दीघाटी की यात्रा करने तथा बिजोल्यां आन्दोलन के नेता पथिकजी से मिल सकने की आशा मुझे प्रोत्साहित कर रही थी। जब मैं यात्रा कर रहा था तो रेल में यही विचारद्वन्द मेरे मन में चल रहा था। कानपुर से उदयपुर बहुत लम्बा रास्ता था। जीवन में इतनी लम्बी यात्रा पहली बार की थी। रेल जब चित्तौड़गढ़ पहुंची तो ठीक से प्रातःकाल का प्रकाश नहीं फैला था। किन्तु दूर पर गौरवशाली महादुर्ग चित्तौड़ अपना मस्तक ऊँचा किए खड़ा स्पष्ट दिखलाई दे रहा था। वह दृश्य आज भी लेखक की दृष्टि के सामने घूम जाता है। मैं रोमांचित हो उठा। थोडी देर के लिए अपने को भूल गया। चित्तौड़ का रोमांचकारी तथा स्फूर्तिदायक इतिहास मेरी आंखों के सामने चलचित्र की भांति घूमने लगा। सोच रहा था कि यही वह पवित्र भूमि है जहां कि स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर मर मिटने वाले वीरों ने मातृभूमि की रक्षा के लिए हंसते–हंसते अपने प्राणों की आहुति दे दी थी। आत्मविभोर हो बड़ी देर तक चित्तौड़गढ़ के दर्शन करता रहा। उदयपुर चित्तौड़गढ़ रेलवे के प्लेटफार्म पर खड़ा होकर मैं बालपन से संचित चित्तौड़ दर्शन की उत्कट अभिलाषा को आंशिक रुप में ही सही पूरी होने पर उल्लास और उत्साह से भर गया। गार्ड ने सीटी दी और हरी झण्डी हिलाई। चित्तौड़गढ़ को मन ही मन में प्रणाम कर गाड़ी में बैठ गया। मेरा मन हर्षातिरेक से कल्पनातीत सुख का अनुभव कर रहा था।

उदयपुर पहुंचकर मैने कॉलेज में कार्य करना आरम्भ कर दिया तो कॉलेज में जब अवकाश होता तब हल्दीघाटी, चित्तौड़, इत्यादि ऐतिहासिक तथा दर्शनीय स्थानों का कार्यक्रम रखता किन्तु पथिकजी के दर्शनों का प्रश्न खतरनाक और टेढ़ा था।

प्रथम दर्शन

पथिकजी राजनीतिक बन्दी थे। ब्रिटिश सरकार उन्हें अत्यन्त खतरनाक क्रान्तिकारी के रूप में देखती थी। तत्कालीन महाराणा फतहसिंह जी को ब्रिटिश सरकार ने शासनाधिकारों से वंचित कर दिया था। शासन अधिकार महाराज कुमार भूपालसिंह के निर्बल हाथों में आ चुका था। सच तो यह था कि मेवाड़ का शासन उदयपुर रेजीडेन्ट के संकेतों पर होता था। महाराजकुमार भूपालसिंह जैसे निर्बल शासक में भारत सरकार के पररराष्ट्र विभाग की इच्छाओं की अवहेलना करने का न तो साहस था और न क्षमता ही थी। निर्बल किन्तु दयावान महाराजकुमार भूपालसिंह को भ्रष्ट, चाटुकार, और स्वार्थी दरबारियों ने घेर रखा था। वे महाराजकुमार की दया और कृपा तथा शारीरिक निर्बलता का लाभ उठाकर राज्य को लूट रहे थे। प्रजा कष्टों से कराह रही थी। वे दरबारी प्रजा का अनवरत शोषण कर रहे थे, प्रजा के कष्टों को कोई सुनने वाला नहीं था। भ्रष्ट, स्वार्थी किन्तु चतुर दरबारी जानते थे कि यदि राजनीतिक दृष्टि से जैसा ब्रिटिश सरकार चाहती है वैसी ही नीति स्वीकार की जावे तो फिर राज्य को मनमाना लूटा जा सकता है, रेजीडेंट तथा पररराष्ट्र विभाग कोई हस्तक्षेप करने वाला नहीं है और न महाराजकुमार के अधिकारों पर कोई आंच आने वाली है। वे निर्बल और पंगु महाराजकुमार भूपालसिंह को भी ब्रिटिश शासन के संकेतों पर चलने की ही सलाह देते थे। उस समय मेवाड़ का समस्त वातावरण मानों दम घोटने वाला था। देशभक्ति, साहस, शौर्य, स्वाभिमान और तेजस्विता के लिए मेवाड़ में उस समय कोई स्थान नहीं था। स्वतन्त्रता का अनन्य उपासक मेवाड़ उस समय एक विशाल कारागृह में परिणत हो गया था। ऐसी दशा में पथिकजी जैसे क्रान्तिकारी और स्वतन्त्रताप्रेमी देशभक्त को यदि राज्य अधिकारी अपने गौरांग प्रभुओं को प्रसन्न करने के लिए बहुत अधिक खतरनाक समझते थे और उनके साथ अत्यन्त कठोर व्यवहार किया जाता था तो कोई आश्चर्य की बात नहीं थी।

उदयपुर में आये मुझे एक महिना हो गया था किन्तु मैने किसी से भी पथिकजी के सम्बन्ध में कोई बात नहीं की थी। क्योंकि मैं यह जान गया था कि पथिकजी के सम्बन्ध में बात करना भी जोखिम से खाली नहीं है। केवल अत्यन्त विश्वसनीय व्यक्ति से ही उनके सम्बन्ध में बात की जा सकती थी। परन्तु जब तक मुझे ऐसा कोई भी विश्वसनीय प्रभावशाली व्यक्ति नहीं मिला था जिससे मैं पथिकजी के सम्बन्ध में खुलकर अपने मन की बात कह सकता था।

लेखक कॉलेज में इतने समय में ही सर्वप्रिय हो गया था। कॉलेज के सहयोगी अध्यापकों और विद्यार्थियों का वह स्नेहपात्र बन गया था। कॉलेज के एक वरिष्ठ अध्यापक मेरे कुछ अधिक नजदीक आ गये थे। हम लोग बहुधा साथ–साथ दूध तलाई की ओर सांयकाल टहलने जाते थे। बहुत तरह की बातें होतीं। एक दिन मैने साहस कर पथिकजी की बात छेड़ी। पथिकजी का नाम लेते ही मानों उन्हें लकवा मार गया हो। उनकी मुखाकृति देखकर ऐसा लगता था कि वे अत्यन्त भयभीत हो उठे हैं। इधर–उधर देखा किसी को समीप न देखकर थोड़े आश्वस्त हुए, और धीरे से कान में कहा भविष्य में कभी किसी के सामने पथिकजी का नाम न

लेना। उस समय तो मैने यही समझा कि मेरे वे वरिष्ठ सहयोगी अत्यन्त भीरु और कायर है, परन्तु थोड़े दिनों में मुझे उनके कथन की सत्यता का थोड़ा आभास हो गया। बात यह हुई कि कॉलेज के एक छात्र शिवशंकर जी के पिताश्री को केवल इस संदेह पर कुम्भलगढ़ जेल में बन्द कर दिया गया कि उनके बारे में यह शंका हो गई थी कि उन दिनों कुछ राज्य विरोधी समाचार 'प्रताप' आदि में छपे थे। उनके छपवाने में शिवशंकर जी के पिताश्री का हाथ था। पुलिस लम्बे समय से उनके विरुद्ध प्रमाण जुटाने में प्रयत्नशील थी। समाचारपत्रों के कार्यालयों तक को खुफिया पुलिस ने छान डाला था किन्तु उनके विरुद्ध कोई भी प्रमाण पुलिस को नहीं मिला। अस्तु बिना उन पर कोई मुकद्दमा चलाये उन्हें राजद्रोह के अपराध के संदेह में जेल में बन्द कर दिया। वह थी थोड़े समय के लिए नहीं बल्कि लम्बें वर्षों तक उन्हें जेल की भीषण यातनाएं सहनी पड़ीं। निरंकुशता की चरम सीमा थी, परन्तु यह घटना मानों मेवाड़ में साधारण थी। लोग शिवशंकर जी से उनके पिताश्री के बारे में भूलकर भी बात नहीं करते थे। मानों जैसे कुछ हुआ ही नहीं। अब मैं समझ गया कि मेरे वरिष्ठ सहयोगी पथिकजी का नाम सुनकर संज्ञाशून्य से होकर भय के कारण अवाक क्यों हो गये थे।

मेरे मन में पथिकजी के दर्शन करने की लालसा और भी अधिक तीव्र हो उठी और मैं प्रतिदिन यही सोचता रहता कि किस प्रकार उनके दर्शन किये जाएं। भाग्यवश मुझे एक सूत्र मिल गया और मेरी इच्छा पूरी हुई। लेखक को अध्ययन और लेखन में तो रुचि थी ही, खेलने में भी उतनी ही गहरी रुचि थी। विद्यार्थी जीवन में लेखक हॉकी, फुटबॉल, क्रिकेट का अच्छा खिलाड़ी रहा था और सनातनधर्म कॉलेज कानपुर की तीनों टीमों का कैप्टन रहा था। अस्तु जब वह महाराणा कॉलेज उदयपुर में अध्यापक बनकर आया तो खिलाड़ी लड़के उसकी ओर विशेष रुप से आकर्षित हुए। कॉलेज में क्रिकेट खेलने की तो व्यवस्था थी किन्तु हॉकी का कोई प्रबन्ध नहीं था। उदयपुर में केवल सेना में हॉकी के कुछ खिलाड़ी थे और सेना की छावनी में हॉकी का खेल मैदान था। लेखक ने विद्यार्थियों की एक निज की हॉकी टीम बनाई और सेना के खेल के मैदान पर जाकर उन्हें हॉकी खिलाने लगा। खेल के माध्यम से सेनाध्यक्ष महोदय से मित्रता हो गई। कुछ समय के उपरान्त बाहर से किसी राज्य की सेना की हॉकी टीम उदयपुर की सेना से हॉकी का मैच खेलने आई। मेवाड़ की सेना के सेनाध्यक्ष ने लेखक से मेवाड़ सेना की टीम में खेलने का आग्रह किया जिसे लेखक ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। उस मैच को देखने के लिए स्वयं तत्कालीन महाराजकुमार श्री भूपालसिंह जी आए। लेखक को तब तक उदयपुर आए बहुत कम समय हुआ था। अतएव विद्यार्थियों के अतिरिक्त उसे कोई नहीं जानता था। महाराजकुमार की उपस्थिति के कारण राज्य के सभी कर्मचारी उपस्थित थे। उस मैच में खेलने के कारण बहुत से उच्च राज्य कर्मचारियों से परिचय हो गया था। उदयपुर केन्द्रीय जेल के सुपरिन्टैन्डैन्ट जेलर एक वयोवृद्ध सज्जन थे। वे भी मुझसे मिले और खेल के सम्बन्ध में बातें करते रहे। आज मुझे उनका नाम याद नहीं रहा परन्तु वे वाजपेयी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। रुढ़ियों में पले हुए वंश परम्परा के अंध भक्त। जेलर महोदय ने फैजाबाद के एक निर्धन किन्तु ऊँचे वंश वाले युवक से अपनी पुत्री का विवाह कर दिया था और अपने जामाता को उदयपुर अपने पास रखकर पढ़ा रहे थे। उनका जामाता मेरा शिष्य था और खेल में अधिक रुचि रखने के कारण मेरे अधिक समीप आ गया था। वह मेरी प्रशंसा बहुधा अपने श्वसुर महोदय से करता था। जेलर महोदय अपनी युवा अवस्था में क्रिकेट के खिलाड़ी रहे थे और उनके दो लड़के भी क्रिकेट के अच्छे खिलाड़ी

थे। अस्तु उन्होंने जेल पर एक क्रिकेट क्लब बना रखा था। उस मैच में परिचय होने पर उन्होंने अगले रविवार क्रिकेट खेलने का आग्रहपूर्ण निमंत्रण दिया। मेरे लिए यह अलभ्य अवसर था, मैने निमंत्रण स्वीकार कर लिया। रविवार को केन्द्रीय जेल पहुंचा। दोपहर को खेल प्रारम्भ हुआ। खेल समाप्त होने के उपरान्त बैठकर बातचीत होती रही। उत्तर प्रदेश के होने के नाते जेलर महोदय से घनिष्ठता बढ़ती गयी। जब कुछ दिनों के उपरान्त मैं उनसे बहुत अधिक घनिष्ठ हो गया तो एक दिन मैने अपने हृदय की बात कह दी। पहले तो वे भी अत्यन्त भयभीत हुए किन्तु मेरे आश्वासन देने पर वे मुझे पथिकजी के दर्शन कराने के लिए तैयार हो गये। उनके लिए मुझे पथिकजी से थोड़ी देर के लिए मिलाना तनिक भी कठिन नहीं था। क्योंकि मेवाड़ सरकार पथिकजी को इतना अधिक खतरनाक समझती थी कि उनके लिए एक पृथक 'पथिक वार्ड' बनाया गया था जहां वे अन्य बन्दियों से अलहदा अकेले रक्खे गये थे। निश्चित दिन निश्चित समय जेल में पहुंचा। अन्धेरा होने में देर थी। जेलर महोदय अन्तिम सांयकालीन राउंड लगाने के लिए गए तो मुझे भी साथ ले लिया। खेल के कारण वार्डर इत्यादि सभी मुझे भली भांति जान गये थे। अतएव किसी को कोई संदेह नहीं हो सकता था। अन्त में हम लोग 'पथिक वार्ड' में गए। वार्डर को जेलर महोदय ने कुछ कार्य के बहाने बाहर जेल भेज दिया और पथिकजी से कहा कि यह हैं सक्सेना जी; इन्हें आपके दर्शन करने की उत्कट अभिलाषा थी।

पथिकजी मेरे सामने खड़े थे। मैने देखा कि 6 फुट लम्बा व्यक्ति जिसकी आंखों में तेज और दृढ़ता झलकती थी, जिसका व्यक्तित्व तेजवान और प्रभावशाली था, मेरे सामने खड़ा था। उस समय पथिकजी लम्बे बाल और राजपूती दाढ़ी रखते थे। उनका व्यक्तित्व सब मिलाकर अत्यन्त प्रभावशाली था और कोई भी व्यक्ति उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था। मैने श्रद्धा सहित उन्हें नमस्कार किया। उन्होंने मुस्कराकर अभिवादन का उत्तर देकर, बातचीत शुरु की। उस समय साधारण शिष्टाचार की बातें हुईं। मैने उनसे स्वास्थ्य इत्यादि के सम्बन्ध में पूछा और पूछा कि कोई विशेष कष्ट तो नहीं है, तो वे जेलर महोदय की तरफ इशारा करते हुए हंसने लगे। जेलर महोदय मन में घबड़ा रहे थे। मैने उनकी उदारता और कृपा का अनुचित लाभ न उठाने की दृष्टि से पथिकजी से विदा ली और घर आया। मेरे मन में विचारों का अंधड़ चल रहा था। मैं जेल से अपने निवासस्थान की ओर बढ़ता जा रहा था। एक के बाद एक दूसरा विचार मेरे मस्तिष्क में आता जाता था। सोचता कि यह एक व्यक्ति है जिसने जीवन के सभी सुखों को लात मारकर देश के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया है और दूसरी ओर वे देशद्रोही हैं जो देश की दासता की श्रृंखलाओं को और अधिक मजबूत बनाने में अंग्रेज सरकार की सहायता करते हैं। मेरा मन पथिकजी के प्रति श्रद्धा से भर गया। उस रात्रि को मैं बहुत प्रसन्न था। मेरी पथिकजी के दर्शन की अभिलाषा पूरी हो गयी थी।

इसके उपरान्त मैं कभी–कभी जेल जाकर उनके दर्शन करता। मेरा शिष्य जेलर का जामाता अवधबिहारी वाजपेयी पथिकजी के बारे में कुछ अधिक नहीं जानता था। मैने उसे पथिकजी के ऊँचे व्यक्तित्व से और देश सेवा से परिचित कराया। वह भी उनकी श्रद्धा करने लगा। अब मैने जेलर महोदय से छिपाकर उसके द्वारा पथिकजी को पत्र लिखना प्रारम्भ किया। मेरा शिष्य पत्र ले जाता और उत्तर ले आता था। मैं बहुधा लिखता कि आपको किसी वस्तु की आवश्यकता हो तो निस्संकोच लिखें, मैं भिजवा दूंगा। किन्तु उन्होंने लेखन सामग्री तथा पुस्तकों

के अतिरिक्त कभी कुछ नहीं मंगवाया। हां वे कभी–कभी बाहर अपने मित्रों तथा सहयोगियों को पत्र लिखकर मेरे पास भिजवा देते और मैं उन पत्रों को बताए हुए पतों पर भिजवा देता।

मेवाड़ की जेल में कष्टों की कल्पना वे लोग नहीं कर सकते जो कि ब्रिटिश प्रान्तों की जेलों में रहे हैं। परन्तु पथिकजी ने कभी भी जेल की कठिनाईयों का उल्लेख तक नहीं किया। 1929 में लेखक महाराणा कॉलेज से त्यागपत्र देकर बरेली कॉलेज, बरेली में चला गया। किन्तु ग्रीष्मावकाश में प्रताप जयन्ती के अवसर पर तथा अन्य अवसरों पर उदयपुर आता था। जब पथिकजी जेल से छूटे तो राजस्थान सेवा संघ कार्यकर्ताओं के आपसी मतभेदों के कारण समाप्त हो गया था। पथिकजी एकांकी से हो गये थे। उस समय कई बार उनसे अजमेर में उनके निवासस्थान पर मिलने का अवसर मिला। लम्बे समय तक देश की राजनीति के सम्बन्ध में बातें हुईं। तब वे समाजवादी विचारधारा के बन चुके थे। उनसे बात करने पर मुझे एक बात का बहुत आश्चर्य हुआ कि राजनीति, इतिहास तथा अन्य विषयों का उनका अध्ययन बहुत गहरा था। वे कई भाषाओं के ज्ञाता थे। उनकी लेखनी बहुत समर्थ और सबल थी और वे एक अत्यन्त निर्भीक और स्वाभिमानी सम्पादक थे। उन्होंने कई पत्रों का सम्पादन किया। वे साधनहीन थे। चपरासी से लेकर सम्पादक का कार्य स्वयं करते किन्तु पत्रों का स्तर नहीं गिरने देते। यद्यपि मेरा पथिकजी से परिचय था किन्तु कभी अधिक घनिष्ठता का सौभाग्य मुझे नहीं मिला। इस कारण उनके जीवन के दो महत्वपूर्ण पक्षों पर कभी मेरी बात नहीं हुई। एक तो यह कि उन्होंने राजनीति, इतिहास आदि विषयों का विस्तृत ज्ञान, भाषाओं की जानकारी कहां प्राप्त की? क्योंकि उनकी विधिवत कभी शिक्षा नहीं हुई थी। वे क्रान्तिकारी कैसे बने, तथा राजस्थान सेवा संघ में जो मतभेद उठ खड़े हुए जिनके कारण उसका विघटन हो गया, वे क्या थे? आज जबकि मैं उनका जीवन–चरित्र लिख रहा हूँ तब भी कोई इन प्रश्नों पर प्रकाश डालने को तैयार नहीं है। राजस्थान सेवा संघ में कौन–से ऐसे मतभेद उठ खड़े हुए कि जिनके कारण उसका विघटन हो गया। इस पर दो व्यक्ति साधिकार प्रकाश डाल सकते हैं, श्री रामनारायण चौधरी और श्री शोभालाल गुप्त। परन्तु दोनों ही इस सम्बन्ध में चुप रहना ही पसंद करते थे। बाद में पथिकजी से मेरा सम्पर्क टूट गया। वे परिस्थितिवश एक स्थान पर न रहकर इधर–उधर रहते और मैं भी उनसे न मिल सका।

1948 ई0 में देश के स्वतन्त्र होने पर जब पूर्व–राजस्थान का निर्माण हुआ और श्री माणिक्यलाल वर्मा मुख्यमंत्री तथा श्री प्रेमनारायण माथुर शिक्षा मन्त्री बने तो मैं महाराणा भूपालसिंह कॉलेज, उदयपुर का आचार्य नियुक्त हुआ। उस समय मेरा पथिकजी से सम्पर्क टूट चुका था। कोई पत्र–व्यवहार भी नहीं था। वर्षों से हम लोग एक–दूसरे से नहीं मिले थे।

यद्यपि देश स्वतन्त्र हो चुका था। देश के जीवन में राष्ट्रीय सेवकों का प्रभाव बहुत अधिक बढ़ गया था। सभी राज्य सरकारें स्थापित हो चुकी थीं। राजस्थान में भी देशी नरेशों की सत्ता समाप्त हो चुकी थी। शासन की बागडोर जनता के प्रतिनिधियों के हाथों में आ गई थी, परन्तु पथिकजी की परिस्थिति में कोई अन्तर नहीं हुआ था। सत्तारुढ़ व्यक्ति यद्यपि उनके सहयोगी और सहकर्मी रहे थे। उन्होंने पथिकजी के नेतृत्व में जनसेवा का कार्य किया था, किन्तु पथिकजी का उन लोगों से सैद्धान्तिक मतभेद था। पथिकजी एक सुदृढ़ चट्टान की भाँति अडिग थे। वे परिस्थिति और सुविधा के अनुसार अपने को बदल लेने वालों में से नहीं थे। अतएव इस महान परिवर्तन के बाद भी वे उपेक्षित ही रहे। राजस्थान में जो राजाओं की सत्ता

समाप्त होकर जनसत्ता का उदय हुआ उसमें पथिकजी का कहीं कोई स्थान नहीं था। वे उन लोगों से बहुत दूर पड़ गये थे जिनके हाथ में शासन सत्ता आ गई थी। जिन लोगों के हाथों में सत्ता आ गई थी उन्हें न तो यह देखने का अवकाश ही था और न इच्छा ही थी कि पथिकजी कहाँ हैं? वे उन्हें भूल जाना चाहते थे। वे नहीं चाहते थे कि राजस्थान में पथिकजी पुनः सक्रिय और प्रभावशाली बन जावें। परन्तु पथिकजी का जन्म तो मानों सतत् संघर्ष करते रहने के लिए ही हुआ था। वे प्रतिकूल परिस्थितियों के सामने झुकने वाले नहीं थे। उपेक्षा और विरोध की परवाह न कर वे पुनः राजस्थान में जमकर जन–जागरण का कार्य करना चाहते थे और इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे इधर–उधर दौड़–भाग कर रहे थे। उसी समय कोटा में सहसा उनसे मेरा मिलना हो गया।

अन्तिम दर्शन

दिन तो आज याद नहीं रहा। फरवरी 1954 की बात है। मैं राजस्थान विश्वविद्यालय की ओर से गवर्नमेन्ट कॉलेज का निरीक्षण करने गया था। प्रथम दिन प्रातःकाल से सायंकाल तक निरीक्षण करता रहा। इस कारण अतिथिगृह तथा कॉलेज के अतिरिक्त और कहीं जाने का अवकाश नहीं मिला। दूसरे दन भी सायंकाल पांच बजे तक कॉलेज में ही व्यस्त रहा। उसी रात्रि को मुझे उदयपुर की ओर प्रस्थान करना था। अतएव पांच बजे मैं अपने पुराने मित्र, राजस्थान पत्र के प्रकाशक और सम्पादक श्री ऋषिदत्त मेहता, से मिलने के लिए चल पड़ा। श्री ऋषिदत्त मेहता ने अजमेर से हटकर कोटा से राजस्थान निकालना प्रारम्भ कर दिया था। मैने मेहताजी को कोई पूर्व सूचना नहीं दी थी। कॉलेज में उनके निवासस्थान का पता लगाकर ड्राइवर को उनके निवास स्थान पर ले चलने के लिए कहा। मैं जब मेहताजी के निवास स्थान पर पहुंचा तो कुछ–कुछ अंधेरा हो चुका था। मेहताजी बून्दी गये हुए थे, केवल उनका छोटा पुत्र वहां था। उससे थोड़ी देर बातचीत करता रहा। मेहताजी, उनके पिता श्री नित्यानन्दजी तथा उनकी पत्नी श्रीमती सत्यभामाजी के कुशल समाचार पूछकर मैं मकान से बाहर निकला ही था कि पथिकजी आते हुए मिले। वे भी ऋषिदत्त जी से ही मिलने आये थे। वे मुझे नहीं पहचान सके किन्तु मैने उन्हें तुरन्त पहचान लिया। जब मैने अपना परिचय दिया तो झट पहचान लिया और बड़े ही स्नेह से मिले। बोले, चलो ऋषिदत्तजी से तो मिलना नहीं हुआ परन्तु अनायास आपसे मिलना हो गया। हम दोनों बहुत देर तक बैठकर बातें करते रहे। पथिकजी की बाह्य वेश–भूषा देखकर मन को बहुत पीड़ा और ग्लानि हुई। वे आधी बांहों की छोटी कमीज या कुर्ता पहने हुए थे जो उनकी कमर से कुछ ही नीचा था। उनकी जीर्णता के चिन्ह स्पष्ट दिखलाई पड़ते थे। उस पर एक सूती खादी की जवाहर खण्डी थी जो जगह–जगह फटी हुई थी। एक जांघिया वे पहने हुए थे जो घिसा हुआ अपनी जीर्णता का परिचय दे रहा था। पैरों में पुराने देशी जूते थे। हाथ में एक झोला था, उसमें सम्भवतः एक कुर्ता और अंगोछा तथा कुछ कागज–पत्र और पुस्तकें थीं। उनके पास यही सारा सामान था और वे जाड़े में रात्रि को मेहताजी के पास उनसे कुछ बातचीत करने के लिए रहने आये थे। उन्हें अधिक कठिनाईयों से गुजरना पड़ रहा था। यह स्पष्ट था किन्तु उसका उनके मन पर तनिक भी प्रभाव नहीं था। हम लोग तीन घंटे तक देश की परिस्थिति के सम्बन्ध में बात करते रहे किन्तु उन्होंने अधिक कठिनाई का उल्लेख तक नहीं किया और न ही तत्कालीन सत्तारुढ़ अपने सहयोगियों की कोई शिकायत ही की। बोले, सक्सेना जी, देश के स्वतन्त्र हो जाने और राजस्थान तथा मध्य भारत

और अन्य रजवाड़ों में सामन्तशाही के समाप्त हो जाने से ही हमारा कार्य समाप्त नहीं हो गया, अभी क्रान्ति सफल होने में देर है। उसके लिए और भी अधिक त्याग–तपस्या और बलिदान की आवश्यकता है। नहीं तो केवल गौरांग प्रभुओं के हटने और सामन्तशाही के धराशायी हो जाने मात्र से सर्वहारा वर्ग को सुख प्राप्त नहीं होगा। साधारण नागरिक का जीवन पहले की ही तरह कष्टमय बना रहेगा। किसी भी देश के जीवन में वह काल बहुत संकट का होता है जबकि विजातियों की दासता से स्वतन्त्रता प्राप्त करता है। उस समय वे ही राष्ट्रविरोधी तत्व जो स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले विदेशी सत्ता के स्तम्भ थे। देश के जीवन पर छा जाने का प्रयत्न करते हैं; और वे राष्ट्रीय आन्दोलन के कतिपय नेताओं को सामने रख अपना वर्चस्व बनाये रखना चाहते हैं। भारत का राष्ट्रीय जीवन और अधिक उलझनों से भरा हुआ है, अतएव अभी वास्तविक स्वतन्त्रता को प्राप्त करने, देश की राष्ट्रीय एकता को दृढ करने के लिए पुनः कार्यरत होना होगा, और जन–जागरण का कार्य करना होगा। हमारा युद्ध अभी समाप्त नहीं हुआ है, कमर खोलकर आराम करने का समय अभी नहीं आया। जनता को जागृत करने, उसमें स्फूर्ति, राजनैतिक चैतन्य, और तेज उत्पन्न करने के लिए पुनः संघर्ष और संगठन करना होगा। इसी उद्देश्य को लेकर वे पुनः एक बार कार्यक्षेत्र में उतरना चाहते थे। उनकी योजना थी कि राजस्थान सेवा आश्रम की स्थापना की जावे। उत्साही कार्यकर्ताओं को सेवा कार्य के लिए प्रशिक्षित किया जावे, और जन–जागृति उत्पन्न करने के लिए उन्हें भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में भेजा जावे। एक पत्र निकाला जावे तथा साहित्य प्रकाशित किया जावें। उसी योजना को मूर्त रुप देने के लिए वे पुराने मित्रों तथा अन्य व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित कर रहे थे। वे बोले क्रान्ति को अन्तिम आहुति तो अब देनी है, उसके लिए तैयारी करनी है। रात्रि के 9 बज गये थे, मुझे भी रात्रि की गाड़ी से उदयपुर आना था। मैने पथिकजी से विदा ली। उन्होंने भी अपना झोला उठा लिया और वे भी मेहताजी के मकान से चल पड़े। मैं राजकीय अतिथिगृह आया; सोचता था कि अदभुत है यह व्यक्ति। जीवन के लम्बे संघर्ष ने निराशा और मित्रों की उपेक्षा ने उनके भीतर जलती हुई अग्नि को तनिक भी शान्त नहीं किया। उनके मन पर उनकी विपरीत परिस्थितियों का तनिक भी प्रभाव नहीं था। उनके व्यक्तित्व का तेज, शौर्य, स्वाभिमान और निर्भीकता ज्यों–की–त्यों थी। सिद्धान्तों का वे समझौता कर नहीं सकते थे। वे उन वीर पुरुषों में थे जो टूट सकते हैं किन्तु झुक नहीं सकते। उन विपरीत परिस्थितियों और बढ़ी हुई आयु में भी जन–जागरण का काम करने का उनके हृदय में वैसा ही जोश था जैसा कि सामन्तशाही से टक्कर लेते समय था। उस दिन भी मैने उनके व्यक्तित्व को तनिक भी थका हुआ, निराश और शिथिल महसूस नहीं किया। क्रान्तिकारी पथिकजी उस दिन भी उतना ही तेजवान थे जितना तीस वर्ष पूर्व मैने देखा था। लेखक बहुत से कार्यकर्ताओं को जानता है जिनका जोश विपरीत परिस्थितियों में कैसे झुक गया, परन्तु एक पथिकजी थे जिन पर घोर विपरीत परिस्थितियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। जिस प्रकार सुदृढ़ चट्टान टकराते हुए जल की उपेक्षाकर अपना मस्तक ऊँचा किये खड़ी रहती है उसी प्रकार पथिकजी उपेक्षा और विरोध की परवाह किये बिना अडिग खडे थे और जन–जागरण के कार्य में जुट जाने की तैयारी में लगे थे।

पथिकजी की इस अदभुत क्षमता की बात सोचते–सोचते मैं रात्रि में ट्रेन में सो गया। मुझे क्या मालूम था कि यही उनका अन्तिम दर्शन था। ग्रीष्मावकाश में सहसा सुना था कि उनका स्वर्गवास हो गया है। सहसा विश्वास नहीं हुआ। लगातार धूप–दौड़ करने वाले पथिकजी

को अजमेर में लू लग गई और वे चल बसे। सोचा कि क्रान्तिकारी, देशभक्त और देशसेवकों की नेताजी सुभाष और रासबिहारी बोस की जाति का एक प्रकाशवान नक्षत्र डूब गया। शायद इस श्रेणी के देशभक्तों के भाग्य में यही लिखा होता है कि जीवन भर वे अपने को देश के लिए तिल–तिल मिटाते रहें और उन्हें उपेक्षित रहकर जीवन व्यतीत करना पड़े। मरने के उपरान्त भी वे लोग जिनके लिए इन वीर देशभक्तों ने अपने को मिटा दिया उन्हें भूल जाने का प्रयत्न करें। कृतघ्नता की यह परम्परा भारत देश में कोई नई नहीं है, वरन् वह बहुत पुरानी है। इसी राजस्थान में वीरवर दुर्गादास को उसी जोधपुर नरेश द्वारा देश से निष्कासित होना पड़ा जिसकी स्वयं की रक्षा के लिए और मारवाड़ राज्य को औरंगजेब जैसे प्रबल और कट्टर सम्राट से बचाने के लिए अपने को उस वीरशिरोमणि ने खपा दिया था। दूर की बात क्यों सोची जावे? अभी हाल ही में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस का उदाहरण हमारे सामने है। जिस व्यक्ति ने अपना सारा जीवन का प्रत्येक क्षण देश को समर्पित कर दिया, मृत्युपर्यन्त वह देश के लिए जिया और अन्त में देश के लिए मरा, जिसमें देशभक्ति, वीरता, शौर्य, राजनीतिक दूरदर्शिता, रणचातुर्य, राजनीतिज्ञता, संगठन–शक्ति, और नेतृत्व के गुण कूट–कूट कर भरे थे, जिसमें प्रातःस्मरणीय प्रताप और वीरवर शिवाजी के सम्मिलित गुण विद्यमान थे, जो मुर्दा देशवासियों में जीवन डालता था और जिसने बीसवीं शताब्दी में वह कर दिखाया जो असम्भव था, जिसने मर कर भी भारत की स्वतन्त्रता के युद्ध में योगदान दिया, जिस वीरवर सुभाष की पंक्ति में बैठने योग्य संसार के इतिहास में गिने देशभक्त भी नहीं हैं, क्या हम कृतघ्न भारतवासी उनको भूल नहीं गये? कृतघ्नता हम भारतीयों का राष्ट्रीय गुण है। जो देश वीर श्रेष्ठ प्रातःस्मरणीय नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की उपेक्षा कर सकता है, यदि वहां पथिकजी की उपेक्षा हुई तो किसी को आश्चर्य क्यों होना चाहिए?

लेखक को वह दिन याद आया जबकि 1921 और उसके बाद स्वतन्त्रता संग्राम के दिनों में जोश में भरे हुए मस्त युवकों की टोलियां ब्रिटिश सरकार के दमन का सामना करते हुए गाती चलती थीं–

"शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले,

वतन पर मरनेवालों का यही बाकी निशां होगा।"

उन भावुक युवकों को क्या मालूम था कि हम भारतीय साधारण देश भक्तों का तो क्या कहना, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस को भी विस्मृत कर देने की अद्‌भुत क्षमता रखते हैं।

हाँ तो यदि पथिकजी देश के लिए जिए, राजस्थान में सामन्तशाही के विरुद्ध उन्होंने प्रबल जन–आन्दोलन किया, वर्षों जेल में पड़े रहे, और जंगल–जंगल, पहाड़–पहाड़ भटकते रहे, यदि उनको हमने विस्मृत कर दिया तो उसमें आश्चर्य की क्या बात है? हम भारतीयों की परम्परा के अनुकूल ही हुआ है।

पथिकजी हम भारतीयों की निर्बलता को पहचानते थे। उनकी कविता "न भूल जाना" में उन्होंने वे उद्‌गार बड़ी सुन्दरता से प्रगट किये हैं–

"न भूल जाना खुशी के दिन तुम वतन परस्तों के वे फसाने।

कि जिनके बदले हुए मुय्यसर हैं ये जशन महफिलें और तराने।।

लेटों पलंग पर तब याद करना उन नौजवानों की जान बाजी।

जिन्होंने फांसी के तख्ते पर ही थे नींद लेने को पैर ताने।।"

लेकिन हम भारतवासी तो यदि और किसी गुण में नही तो कम से कम कृतघ्नता के गुण में तो सर्वोपरि हैं। जिन्होंने देश को स्वतन्त्र कराने के लिए मातृभूमि की दासता की श्रृंखलाओं को काटने के लिए, अपने जीवन के समस्त सुखों को बलिदान कर अपने को मिटा दिया, आज हम उनको याद रखने का कष्ट भी उठाना नहीं चाहते।

द्वितीय अध्याय

क्रान्तिकारी जीवन

मालागढ़ के युद्ध में पथिकजी के पितामह नवाब की सेना के सेनाध्यक्ष की हैसियत से बड़ी वीरता के साथ युद्ध करते हुए धराशायी हो गये। मालागढ़ पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया और पठान सरदार मालागढ़ का नवाब जो लखनऊ की ओर चला गया था, उसको पकड़कर अंग्रेजों ने लखनऊ में उसे फांसी दे दी। बाद में मालागढ़ नवाब की जागीर को अंग्रेजों ने उसके विश्वासघाती सम्बन्धियों और नौकरों में विश्वासघात के पारितोषिक स्वरुप बांट दी। गुठावली तथा समीपवर्ती कुछ गांव विश्वासघाती देशद्रोही सैयद मुश्ताक अली को दिये गये। भूपसिंह (विजयसिंह पथिक) के पिताश्री और उनके परिवार के लोगों को लम्बे समय तक फरार रहना पड़ा जिसका वर्णन हम पथिकजी के संस्मरण में पढ़ चुके हैं। भारत के प्रथम स्वतन्त्रता युद्ध में विफल हो जाने पर और अंग्रेजों द्वारा ग्राम मुआफी की घोषणा के बाद जब वे पुनः अपने गांव लौटे और गांव में बस गए तो भी अंग्रेजों और उन देशद्रोही विश्वासघाती जमींदारों ने उन्हें चैन नहीं लेने दी।

अंग्रेज उस ग्रामीण प्रदेश और विशेषकर भूपसिंह के परिवार को बहुत खतरनाक समझते थे। देशद्रोही नए जमींदार तो उनके कट्टर शत्रु थे ही। अंग्रेज अधिकारी यह चाहते थे कि भूपसिंह के परिवार के लोग यदि सेना में भर्ती हो जावें तो उस क्षेत्र के लोग अंग्रेजी सेना में नौकरी करने लगेंगे और फिर उनसे भविष्य में कोई खतरा नहीं रहेगा। इसी कारण पुलिस और अधिकारी उनको परेशान करने लगे। उनके परिवारवालों को देशद्रोही जमींदारों और ब्रिटिश पुलिस के सम्मिलित त्रास का बहुत दिनों तक शिकार होना पड़ा। भूपसिंह के पिताश्री का स्वर्गवास उनके शैशव काल में ही इन्हीं कठिनाईयों की परिस्थिति में हो गया था और उनके परिवारवालों को ब्रिटिश सेना में नौकरी करने पर ही उस त्रास से मुक्ति मिली थी। भूपसिंह के एक चाचा इस प्रकार सेना में नौकर हुए और इन्दौर–मऊ की छावनी में सूबेदार थे।

पथिकजी द्वारा स्वयं लिखित गुठावली ग्राम के संस्मरण पढ़ने पर पाठक यह भी जान गये होंगे कि बालक भूपसिंह के मन और रुधिर में अंग्रेजों से घृणा, मातृभूमि को स्वतन्त्र कराने की उत्सुक लालसा, देश के लिए मर मिटने की चाह, गांव के जीवन को भाईचारे के आधार पर संगठित करने और पंचायत को एक प्रभावशाली और सबल प्रशासन संस्था बनाने की आवश्यकता उन्हें विरासत में मिली थी। देशी राजा और नवाबों की कायरता और भीरुता तथा अंग्रेजी शासन के सहायक बन जाने के कारण बालक भूपसिंह के मन में उनके प्रति भी घृणा का उदय हो गया था।

उनके दादा तो मालागढ़ नवाब की सेना के सेनाध्यक्ष के रुप में अन्तिम क्षण तक देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे। उनके बड़े ताऊ ने भी अपने पिताश्री के साथ युद्ध में भाग लिया था। उनके सारे परिवार और गांव वालों को 1857 की सशस्त्र क्रान्ति में गुरिल्ला युद्ध करते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान को भागना पड़ा था। पश्चिमी उत्तर प्रदेश और धौलपुर, करौली और ग्वालियर के जंगलों और बीहड़ों में लम्बे समय तक पड़े रहकर उनके परिवारवालों और गांववालों ने देश की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध किया था। उनके कितने

ही स्वजन और सम्बन्धी तथा ग्रामवासी भारतीय स्वतन्त्रता के प्रथम युद्ध में काम आये थे। उनके परिवार तथा जाति के पुरुषों ने ही नहीं, वरन् महिलाओं ने भी उस सशस्त्र क्रान्ति में भाग लिया था। उनकी साधना, कार्यक्षमता, कष्टसहिष्णुता, त्याग, बलिदान, और वीरता की कहानियां बालक भूपसिंह के मन को सदैव उत्तेजित करती रहती थीं। उनकी माता 'कंवल कुँवर' बड़े जीवट की वीर साहसी महिला थीं। स्वतन्त्रता के प्रथम युद्ध में कितने ही फिरंगियों को उन्होंने बन्दी बना लिया था। गुरिल्ला युद्ध के समय उन्होनें बड़े साहस का परिचय दिया था। वे अत्यन्त साहसी, निर्भीक और वीर थीं। वीर माता की संतान होने के कारण बालक भूपसिंह को साहस, वीरता, देशभक्ति, अंग्रेजों से घृणा और देश के लिए बलिदान हो जाने की भावना उत्तराधिकार में मिली थी। गुठावली ग्राम में पंचायत का सुदृढ संगठन और भाईचारे की दृढ भावना ने बालक भूपसिंह को बहुत अधिक प्रभावित किया था। व्यक्ति को केवल अपने स्वार्थ को ही नहीं सामुहिक स्वार्थ को देखना चाहिए। दूसरे के लिए त्याग करना, दूसरों की सेवा करना और स्नेह और प्रेम के सूत्र को मजबूत बनाना ही सच्चा मानव धर्म है, यह विचार उसके बालक मन पर अंकित हो गये थे। क्रान्तिकारी भूपसिंह को बिजोल्यां किसान आन्दोलन के नेता और राजस्थान सेवा संघ के जनक की हैसियत से पथिकजी को उन्होंने देखा है। वे भली–भांति जानते हैं कि उन पर बालकपन में पड़े संस्कारों का कितना गहरा प्रभाव था। वास्तव में गुठावली ग्राम में रहते अपनी वीर माता 'कंवल कुँवर' से स्वतन्त्रता के प्रथम युद्ध की रोमांचकारी कहानी सुनते हुए बालक भूपसिंह में वे संस्कार उदय हो रहे थे जिन्होंने उन्हें क्रान्तिकारी देशभक्त बना दिया था।

बिजोल्यां और बेगूं के किसान आन्दोलन में पथिकजी ने किसानों की मनोवृत्ति को समझने और उनको संगठित करने की जिस अदभुत क्षमता का परिचय दिया, व पंचायत को प्रभावशाली बनाने का जो कार्य किया उसके अंकुर उनके मन में गुठावली ग्राम में ही उग चुके थे। राजस्थान सेवा संघ के नेता की हैसियत से और उसके पूर्व क्रान्तिकारी जीवन में उन्होंने जिस संयम, धैर्य, सादगी, त्याग, कष्टसहिष्णुता, साहस, और देशभक्ति का परिचय दिया, उसके बीज भी बालकपन में ही पड़ गये थे। यह गुण उन्हें उत्तराधिकार के रुप में मिले थे। प्रतिभा और नेतृत्व का गुण उनमें जन्मजात था। तब कौन जानता था कि एक निर्धन परिवार मे जन्म लेने वाला गुठावली ग्राम का बालक ऐसा तेजस्वी निकलेगा कि जिसके आतंक से राजस्थान के बड़े–बड़े नरेश भयभीत होकर कांपेंगे।

भूपसिंह की शिक्षा–दीक्षा आगे चलकर किस प्रकार हुई और वे किस प्रकार क्रान्तिकारी बने इसकी जानकारी वास्तव में पूरी तरह किसी को भी नहीं है क्योंकि पथिकजी अपने क्रान्तिकारी जीवन के सम्बन्ध में किसी से बात नहीं करते थे। उनके जीवन का यह काल अत्यन्त रहस्यपूर्ण था। परन्तु जो थोड़ी से जानकारी प्राप्त है, उसी के आधार पर हम उनके क्रान्तिकारी जीवन की कथा लिखेंगे।

हम पथिकजी के संस्मरण में पढ़ चुके हैं कि उनकी बड़ी बहिन ने ही उन्हें हिन्दी पढ़ाना आरम्भ किया था। जब उनका विवाह हुआ तो भूपसिंह उनके साथ श्वसुरगृह गये और उनके साथ ही लौट आये। इसी बीच उन्होंने भूपसिंह को हिन्दी पढ़ाना प्रारम्भ किया। कुछ दिनों उपरान्त वे मालागढ़ की पाठशाला में पढने लगे। परन्तु दुर्भाग्य से उनकी वीर माता 'कंवल कुंवरी' की छत्र–छाया और उनका वरदहस्त भी उन पर से शीघ्र ही उठ गया। वे पितृहीन तो

थे ही मातृहीन भी हो गए। नियति भूपसिंह को कठिनाईयां और संघर्ष झेलने के लिए तैयार कर रही थी; अतएव उसने माँ की ममतामयी गोद भी छीन ली।

तब वे अपनी बडी बहिन 'मुहर बाई' के पास चले गए। उनके बहनोई अंग्रेजी जानते थे और अरबी एवं फारसी के विद्वान थे। भूपसिंह को उन्होंने अंग्रेजी, अरबी और फारसी की घर पर ही शिक्षा दी थी। बाद को एक स्वामीजी से उन्होंने हिन्दी और संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की। स्वामीजी ने उन्हें धर्मशास्त्रों का अध्ययन करवाया। वे चाहते थे कि वे उनके शिष्य बनें परन्तु भूपसिंह तो देश के सैनिक बनने के लिए उत्पन्न हुए थे। एक दिन इसी प्रश्न पर गुरु–शिष्य में घोर मतभेद हो गया और भूपसिंह अलग हो गए।

यह ध्यान देने की बात है कि मालागढ़ की प्राथमिक पाठशाला में शिक्षा पाने के उपरान्त बालक भूपसिंह को कभी विधिवत किसी स्कूल या कॉलेज में शिक्षा प्राप्त करने का सुअवसर कभी प्राप्त नहीं हुआ। जो कुछ उनकी शिक्षा–दीक्षा हुई वह घर पर ही हुई अथवा उदारमना विद्वान के सहवास में हुई। भूपसिंह ने ऐसी परिस्थितियों में इतना ज्ञान किस प्रकार अर्जित कर लिया· यह साधारण व्यक्ति को आश्चर्य में डाल देता है। वे हिन्दी, उर्दू , अंग्रेजी, फारसी, संस्कृत, मराठी, बंगला और गुजराती भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे ही उन्होंने इतिहास, राजनीति, दर्शन, साहित्य, धर्मशास्त्र, समाजवाद, इत्यादि विषयों का गम्भीर अध्ययन किया था। वे उन विषयों पर साधिकार बोलते और लिखते थे। जिस व्यक्ति के शैशव–काल में ही वह पिता की अभिभावकता से वंचित हो गया और बालकपन में ही माता की ममतामयी गोद के सुख से भी नियति ने वंचित कर दिया, जिसकी कोई विधिवत शिक्षा नहीं हुई वह इतनी भाषाओं और विषयों का ऊँचे दर्जे का जानकार हो, यह प्रत्येक व्यक्ति को आश्चर्य में डालने वाली बात है। वे केवल भाषाओं के ही विद्वान नहीं थे, वे एक ऊँचे दर्जे के लेखक, कवि, शिक्षक और सम्पादक भी थे। इस सम्बन्ध में हमें यह न भूल जाना चाहिए कि क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित होने के उपरान्त उन्हें स्वयं अध्ययन करने के लिए तनिक भी अवसर नहीं मिला। ब्रिटिश साम्राज्यशाही को चुनौती देने वाले क्रान्तिकारियों को प्रति क्षण सशंक रहना पड़ता था। पुलिस से अपने को बचाते हुए क्रान्ति का संदेश लेकर वे एक स्थान से दूसरे स्थान को भागते–फिरते थे। ऐसी दशा में उन्हें गम्भीर अध्ययन कर सकने का अवकाश मिल सकना असम्भव था। तब उन्होंने जो ज्ञान अर्जन किया वह बहुत करके क्रान्तिकारी बनने के पहले ही किया होगा और यह भी संभव है कि प्रसिद्ध क्रान्तिकारी शचीन्द्र सान्याल और रासबिहारी बोस के सम्पर्क में आने पर ही उन्हें अध्ययन की सुविधा मिली हो। जो भी हो यह इस बात का प्रमाण है कि भूपसिंह अत्यन्त मेधावी, कुशाग्र बुद्धि और महान प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति थे। अन्यथा इन विपरीत परिस्थितियों में कोई भी व्यक्ति इतना अधिक ज्ञान अर्जन नहीं कर सकता था। यदि उन्हें शिक्षा प्राप्त करने की सभी सुविधाएं और अवकाश मिला होता तो आज उनका नाम महान विचारकों, विद्वानों और कवियों की अग्रिम श्रेणी में होता।

हां तो हम यह तो पहले ही कह आए हैं कि उनकी ममतामयी वीर माता के स्वर्गवासिनी हो जाने के उपरान्त वे अपनी बड़ी बहिन के पास निजामाबाद (यह निजामपुर गांव है, जो सिकन्द्राबाद [बुलन्दशहर] के पास है –सम्पादक) चले आये थे। उन्हीं दिनों उनके बहनोई होल्कर राज्य में वन विभाग में ऊँचे पद पर नियुक्त होकर चले गए और वे उनके साथ इन्दौर

गए। कुछ समय के उपरान्त वे राजस्थान के किशनगढ़ राज्य में पुलिस विभाग के अधिकारी होकर आए। तब भूपसिंह भी राजस्थान में आए। राजस्थान से उनका सम्बन्ध तभी से जुड़ गया।

भूपसिंह के एक चाचा श्री बलदेवसिंह जी ने अंग्रेजी सेना में नौकरी कर ली थी और वे उस समय मऊ–इन्दौर की अंग्रेजी छावनी में सूबेदार थे। श्री पृथ्वीसिंह मेहता ने अपनी पुस्तक 'हमारा राजस्थान' में लिखा है– "बालक भूपसिंह का लालन–पालन और शिक्षा–दीक्षा सब इसी चाचा के पास मऊ और इन्दौर में हुई थी।" यह बहुत सम्भव है कि जब बालक भूपसिंह अपनी बहिन के साथ इन्दौर पहुंचा तो वह अपने चाचा बलदेव सिंह जी के पास चले गए हों और फिर उनका लालन–पालन और शिक्षा–दीक्षा उन्हीं की देखरेख में मऊ और इन्दौर में हुई हो।

उनके चाचा श्री बलदेवसिंह ने यद्यपि अंग्रेजी सेना में नौकरी कर ली थी परन्तु उनके हृदय में अंग्रेजों के प्रति घृणा और देश को स्वतन्त्र करने की भावना परिवार द्वारा विरासत में मिली थी।

1892 के उपरान्त इन्दौर के तत्कालीन महाराजा शिवाजीराव होल्कर ने जब अंग्रेजों के विरुद्ध सैनिक विद्रोह खड़ा कर अंग्रेजों की सत्ता को उखाड़ फैंकने का पुनः प्रयत्न प्रारम्भ किया था तो भूपसिंह के चाचा बलदेवसिंह का उस सशस्त्र विद्रोह की तैयारी में पूरा हाथ था। मऊ छावनी की सेनाओं से महाराजा शिवाजीराव होल्कर का सम्पर्क श्री बलदेवसिंह के द्वारा ही स्थापित हुआ था। वे होल्कर महाराज के साथ विद्रोह में शामिल थे।

भूपसिंह को सैनिक शिक्षा तथा बन्दूक इत्यादि अस्त्र–शस्त्र चलाने की शिक्षा सम्भवतः अपने चाचा के पास रहने पर ही मिली होगी और वहां रह कर उनके मन में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध घृणा की भावना और बलवती हो गई होगी।

जब वे इन्दौर में पढते थे तो 1907 में अपने एक साथी के द्वारा उनका सम्पर्क प्रसिद्ध क्रान्तिकारी देशभक्त देशभक्त शचीन्द्र सान्याल से स्थापित हुआ। भूपसिंह उस क्रान्तिकारी देशभक्त के व्यक्तित्व, देशप्रेम और आत्म–त्याग से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उनके क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हो गये। बाद को उन्होंने ही भूपसिंह का परिचय रासबिहारी बोस से करवाया।

प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता शचीन्द्र सान्याल और रासबिहारी बोस प्रसिद्ध क्रान्तिकारी संस्था बंग अनुशीलन समिति के प्रमुख कार्यकर्ता थे। बंगाल से निकलकर वे समस्त भारत में सशस्त्र क्रान्ति की तैयारियां कर रहे थे और क्रान्तिकारी युवकों को अपने दल में भर्ती कर रहे थे। वे बिहार, बंगाल, उत्तर प्रदेश और पंजाब में दलों का संगठन कर चुके थे। राजस्थान और मध्य भारत के देशी राज्यों में भी वे अपने दल संगठित कर रहे थे।

अनुशीलन समिति के नेता अपने क्रान्तिकारी सदस्यों में बौद्धिक चेतना जागृत करने के लिए उनके अध्ययनशील होने पर देश की संस्कृति, साहित्य, दर्शन, भाषाएं, इतिहास और राजनीति इत्यादि का अध्ययन करने पर बल देते थे। अस्तु यह बहुत सम्भव है कि शचीन्द्र सान्याल तथा रासबिहारी बोस के सम्पर्क में आने पर तथा क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित होने पर भूपसिंह को अध्ययन की सुविधा मिली हो। जो भी हो भूपसिंह की यद्यपि विधिवत् किसी कॉलेज में शिक्षा नहीं हुई परन्तु उनका अध्ययन बहुत विस्तृत और गम्भीर था।

क्रान्तिकारी गतिविधियां

उस समय समस्त भारत में शिक्षित तरुण क्रान्तिकारी युवक विदेशी सत्ता को सशस्त्र विद्रोह के द्वारा समाप्तकर देश को स्वतन्त्र करने के लिए झटपटा रहे थे। सशस्त्र विद्रोह की तैयारियां बड़े जोरों से हो रही थीं। देश के अन्दर तथा विदेशों में भारतीय क्रान्तिकारी एक बार फिर भारत माता की दासता की श्रृंखलाओं को काटकर उसे स्वतन्त्र कराने के लिए प्रयत्नशील थे। राजस्थान भी इस प्रयत्न में पीछे नहीं था। केवल साधारण जन ही नहीं राजस्थान के कुछ राजे और महाराजे और जागीरदार भी भीतर ही भीतर क्रान्तिकारी देशभक्तों से मिले हुए थे और ब्रिटिश सत्ता को देश से उखाड़ फेंकना चाहते थे। सच तो यह है कि भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के प्रायः सभी सूत्रधार राजस्थान से सम्बन्धित थे। भारत में राष्ट्रीय भावना के प्रथम प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जिन्होंने भारतीयों से कहा "स्वराज्य चाहे कितना ही गया बीता क्यों न हो अच्छे से अच्छे विदेशी शासन से बदला नहीं जा सकता" का कार्यक्षेत्र मुख्यतः राजस्थान था। उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह, शाहपुरा नरेश तथा जोधपुर नरेश स्वामी दयानन्द के सम्पर्क में आकर ही राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हो गये थे। इन्दौर के शासक शिवाजीराव होल्कर जिनके सम्बन्ध में हम पहले ही लिख चुके हैं, स्वामी विवेकानन्द, मेवाड़ राज्य के दीवान प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्यामजी कृष्ण वर्मा, अरविन्द घोष, वारीन्द्र इत्यादि भारतीय क्रान्ति के अग्रदूत सभी का निकट का सम्बन्ध राजस्थान से रहा था। अतएव क्रान्तिकारियों की आंख राजस्थान पर विशेष रुप से थी। कारण यह था कि देशभक्त क्रान्तिकारी यह मानते थे कि आखिर राजे महाराजे भारतीय हैं, उन्हें भी अंग्रेजों की दासता अखरती होगी। फिर उनके वंशों ने अपनी स्वतन्त्रता के लिए अपना बलिदान दिया है उनका पूर्व इतिहास गौरवशाली है। यदि भारतीय स्वतन्त्रता के लिए उनका सहयोग प्राप्त किया जा सके तो क्रान्ति का कार्य सरल हो जावेगा। जब सम्पूर्ण भारत में सशस्त्र विद्रोह करने की तैयारी हो रही थी तो राजस्थान को कैसे छोड़ा जा सकता था। वह तो सशस्त्र विद्रोह की प्रथम पंक्ति में रहने वाला था। क्रान्ति के नेताओं की दृष्टि में राजस्थान का बहुत अधिक महत्व था।

उस समय रासबिहारी बोस, शचीन्द्र सान्याल के नेतृत्व में देश में सशस्त्र विद्रोह की तैयारियां की जा रही थीं। ढाका अनुशीलन समिति के नेतृत्व में देश में फैले हुए क्रान्तिकारी बल संगठित किये जा रहे थे। राजनैतिक डाके अर्थ संचय करने के लिए, राजनीतिक हत्याएं ब्रिटिश सरकार को आतंकित करने के लिए, भारतीयों में उत्साह उत्पन्न करने तथा सरकार से दमन का बदला लेने के लिए की जा रही थीं। बम बनाने की शिक्षा व्यापक पैमानें पर दी जाती थी। एक बम बनाने में दस रुपये से बीस रुपये तक का व्यय होता था। स्थान–स्थान पर बम बनाने के छोटे–छोटे कारखाने स्थापित किये गये थे। अस्त्र–शस्त्र पूर्व में चंदन नगर के द्वारा विदेशों से मंगवाये जाते थे। अस्त्र–शस्त्र का कारोबार करनेवाली फर्मों से चोरी करके पिस्तौल, बन्दूकें तथा कारतूस इकट्ठे किये जाते थे। फर्जी लाइसेंस लिए जाते थे और राजस्थान जहां कि उस समय कोई लाइसेंस नहीं था वहां से अस्त्र–शस्त्रों को इकट्ठा करने का प्रयत्न किया जाता था।

युवक भूपसिंह जब इन्दौर में शचीन्द्र सान्याल के सम्पर्क में आए और क्रान्तिकारी बल में सम्मिलित हुए तो शचीन्द्र सान्याल उनके परिवार की वीरता, देशभक्ति की परम्पराओं से तथा

स्वर्य भूपसिंह के उत्साह और लगन, आत्मविश्वास की भावना से बहुत अधिक प्रभावित हुए और क्रान्तिकारी बल के लिए उन्हें अत्यन्त उपयोगी समझकर उनका परिचय उन्हें कलकत्ता ले जाकर रासबिहारी बोस से करवाया। रासबिहारी बोस ने युवक भूपसिंह की परीक्षा ली, उनको परखा और उनके परिवार के गौरवपूर्ण इतिहास से परिचित होकर उन्हें अपने दल में सम्मिलित कर लिया।

ऐसा जान पड़ता है कि प्रसिद्ध क्रान्तिकारी रासबिहारी बोस ने युवक भूपसिंह को बहुत उपयुक्त समझकर उनकी शिक्षा–दीक्षा का प्रबन्ध किया। वहां रहकर भी भूपसिंह ने बम बनाने की शिक्षा और आतंकवाद और क्रान्ति के सैद्धान्तिक पक्ष तथा व्यवहारिक पक्ष की शिक्षा प्राप्त की। उसके उपरान्त भूपसिंह को भी राजनैतिक डाकों और हत्याओं के लिए भेजा जाने लगा।

श्री अरविन्द के छोटे भाई बारीन्द्र का माणिकतल्ला में एक उद्यान था। इसी उद्यान में क्रान्तिकारी दल ने बम बनाने तथा अस्त्र–शस्त्र रखने का केन्द्र स्थापित किया था। इस दल के कुछ लोग तो प्रसिद्ध क्रान्तिकारी पत्र 'युगान्तर' निकालते थे और कुछ क्रान्तिकारी युवक माणिकतल्ला उद्यान में बम इत्यादि बनाते थे। भूपसिंह की इसी स्थान पर शिक्षा–दीक्षा हुई होगी। यह सब क्रान्तिकारी अनुशीलन समिति के सदस्य थे जिसका ध्येय ब्रिटिश शासन को सशस्त्र क्रान्ति द्वारा उखाड़ फेंकना था।

उस समय अंग्रेजी सरकार बंगाल में घोर दमन कर रही थी। अंग्रेज यह समझते थे कि यदि बंगाल के क्रान्तिकारियों का दमन कर दिया जावे तो भारत में विप्लवकारी गुप्त संगठन समाप्त हो जावेंगे। अतएव दमन अपनी चरम सीमा पर पहुंचा हुआ था। बंगाल का गवर्नर लार्ड फ्रेजर तथा कलकत्ते का जिलाधीश किंग्सफोर्ड उस दमन नीति के मुख्य संचालक थे। अतएव क्रान्तिकारी दल ने उन दोनों की हत्या करने का निश्चय किया। फ्रेजर की स्पेशल ट्रैन को बम द्वारा उलटने का षड़यंत्र किया गया किन्तु असफल हुआ। बम के विस्फोट से केवल गाड़ी का इंजन ही बेकार हो सका, पटरी भी टेढ़ी हो गई किन्तु गाड़ी नहीं उलटी।

हत्याओं की सूची में फ्रेजर के बाद किंग्सफोर्ड का नाम था। अंग्रेजी सरकार जानती थी कि क्रान्तिकारी किंग्सफोर्ड से अत्यन्त घृणा करते हैं और कलकत्ता में वह सुरक्षित नहीं है। अस्तु सरकार ने उसका तबादला मुजफ्फरपुर में जिला सेशन जज के स्थान पर कर दिया। 17 वर्ष का वीर प्रसिद्ध क्रान्तिकारी युवक खुदीराम बोस और प्रफुल्लचन्द्र चाकी मुजफ्फरपुर में किंग्सफोर्ड की हत्या करने के लिए भेजे गए। कलकत्ते के अधिकारियों को इस बात की खबर लग चुकी थी, उन्होंने मुजफ्फरपुर की पुलिस तथा किंग्सफोर्ड को सचेत कर दिया था। किंग्सफोर्ड के बंगले पर बहुत कड़ा सशस्त्र पुलिस का पहरा था। किंग्सफोर्ड अकेला कम ही निकलता था। अस्तु खुदीराम बोस तथा प्रफुल्ल चाकी ने सोचा कि सायंकाल अन्धेरे में जब किंग्सफोर्ड क्लब से लौटता हो तब उसकी हत्या की जावे। किंग्सफोर्ड जिस प्रकार की फिटन में निकलता था ठीक उसी रंग और नमूने की फिटन वहां के एक अंग्रेज वकील कनेड़ी की भी थी। खुदीराम और चाकी को इस बात का पता न था।

30 अप्रैल 1908 का दिन था। रात्रि के साढ़े आठ का समय था। वे दोनों क्लब के फाटक के समीप वृक्षों की ओट में छिपकर खड़े हो गए। दुर्भाग्यवश उसी समय कनेडी की पत्नी और पुत्री अपनी फिटन पर चढ़कर घर की ओर चलीं। उनकी गाड़ी को किंग्सफोर्ड की गाड़ी

समझकर बोस और चाकी ने उस पर बम फैंक दिया। भीषण धड़ाके के साथ गाड़ी चकना–चूर हो गई और उन दोनों की मृत्यु हो गई। खुदीराम बोस और चाकी भाग गए। बाद को वीर खुदीराम बोस को फांसी हुई और पकड़े जाने पर वीर प्रफुल्ल चाकी ने पिस्तौल से स्वयं गोली मारकर वीरगति प्राप्त की।

अब क्या था, बड़ी तेजी से धर पकड़ आरम्भ हुई। 2 मई 1908 को पुलिस ने माणिकतल्ला उद्यान के गुप्त क्रान्तिकारियों के केन्द्र पर छापा मारा। वहां पुलिस को बम, अस्त्र–शस्त्र, डाइनामाइट, पोटाश साइनेड आदि भयंकर विस्फोटक पदार्थों का भंडार प्राप्त हुआ। इस सम्बन्ध में जो 36 व्यक्ति गिरफ्तार हुए उनमें भूपसिंह भी थे। उन लोगों में अलीपुर के व्यक्ति अधिक थे। मुकदमा हुआ। पन्द्रह व्यक्तियों को कठोर दंड दिया गया। दो को फांसी हो गई और शेष को भूपसिंह सहित कोई प्रमाण नहीं मिलने के कारण पहले ही छोड़ दिए गए थे।

अलीपुर जेल में यह क्रान्तिकारी वीर जब अपने मुकदमें की प्रतीक्षा कर रहे थे। भूपसिंह पहले ही प्रमाण न मिलने के कारण छूट चुके थे। तब नरेन्द्रनाथ गोस्वामी ने विश्वासघात किया और वह सरकारी गवाह बन गया। सरकारी गवाह बनने के बदले 23 जून को उसे क्षमा प्रदान कर दी गई और अभियुक्तों के बीच से हटाकर उसे अस्पताल में योरोपियन पहरेदारों की देखरेख में रख दिया गया। कारण यह था कि जेल के अधिकारियों को उस पर आक्रमण होने का भय था।

नरेन्द्रनाथ गोस्वामी के सरकारी गवाह बन जाने पर आपस में सलाह कर सभी ने निर्णय किया कि समिति के नियमानुसार उसको मृत्युदंड दिया जाना चाहिए। इस खतरनाक कार्य का उत्तरदायित्व सत्येन्द्रकुमार और कन्हाईलाल को सौंप दिया गया।

सत्येन्द्र खांसी की बीमारी का बहाना बनाकर अस्पताल पहुंचा और कन्हाईलाल भी पेट में दर्द का बहाना बनाकर अस्पताल आ पहुंचा। सत्येन्द्र ने अस्पताल पहुंचकर ऐसा प्रदर्शन किया कि जैसे वह बहुत कायर है और अत्यन्त भयभीत हो उठा है। उसने नरेन्द्रनाथ गोस्वामी को कहला भेजा कि मैं भी सरकारी गवाह बनना चाहता हूँ। अच्छा हो कि हम दोनों ही गवाही के बारे में सलाह कर लें।

सत्येन्द्र की बातों पर विश्वासकर नरेन्द्रनाथ एक अंग्रेज की संरक्षता में उससे मिलने अस्पताल में आया। सत्येन्द्र ने अच्छा अवसर देख छिपा हुआ पिस्तौल निकालकर उस पर गोली चलाई। गोली पैर में लगी किन्तु नरेन्द्रनाथ गिरा नहीं, भाग खड़ा हुआ। उसे भागता देखकर कन्हाईलाल आगे बढ़ा। परन्तु उसको नरेन्द्रनाथ के अंग्रेज संरक्षक ने पकड़ लिया। कन्हाईलाल ने उसके हाथ पर गोली चलाई और वह हाथ घायल हो जाने के कारण उन्हें छोड़ एक तरफ खड़ा होकर चिल्लाने लगा। तब तक नरेन्द्रनाथ अस्पताल से बाहर निकल गया था। कन्हाईलाल ने झपटकर उसका तेजी से पीछा किया। फाटक के पहरेदार ने कन्हाईलाल का उग्र रुप और हाथ में पिस्तौल देखकर भय के मारे स्वयं ही दरवाजा खोल दिया और अंगुली के संकेत से यह भी बतला दिया कि नरेन्द्रनाथ ऑफिस की ओर गया है। नरेन्द्रनाथ को देखते ही कन्हाईलाल ने एक के बाद दूसरी गोली छोड़ना आरम्भ की उस समय उनकी उग्र और तेजस्वी भयंकर मूर्ति को देखकर किसी का भी साहस न हुआ कि उनका सामना कर सके। जब नरेन्द्रनाथ मर कर

गिर गया और पिस्तौल खाली हो गई तो छिपे हुए कर्मचारियों ने कन्हाईलाल को गिरफ्तार कर लिया।

सत्येन्द्रकुमार और कन्हाईलाल को नरेन्द्रनाथ की हत्या के अपराध में फांसी का दंड दिया गया। उन दोनों को इस बात की हार्दिक प्रसन्नता थी कि उनका कार्य पूरा हुआ। अपने मरने का उन्हें तनिक भी दुख नहीं था। 10 नवम्बर 1908 तक जिस दिन कि वीरवर कन्हाईलाल को फांसी दी गई, उसका वजन 16 पौंड बढ़ गया था। फांसी के उपरान्त उसका अन्तिम संस्कार बड़ी धूमधाम से हुआ। वीर खुदीराम बोस की भांति ही उसके शव के स्वागत के लिए अपार जन–समूह उमड़ पड़ा। गगन भेदी वंदेमातरम् के घोष के साथ फूलों की वर्षा होने लगी। जिस प्रकार खुदीराम बोस की चिता की भस्म को लेने के लिए छीना झपटी हुई और लोग अत्यन्त श्रद्धा के साथ उसकी चिता की भस्म को ले गए, उसी प्रकार कन्हाईलाल की चिता की भस्म का हाल हुआ। सरकार इस दृश्य को देखकर भयभीत हो उठी। अतएव उसने सत्येन्द्रकुमार को फांसी देकर उसके शव को न देकर जेल में ही उसका अन्तिम संस्कार कर दिया।

यद्यपि कन्हाईलाल और सत्येन्द्रकुमार को फांसी दे दी गई किन्तु बहुत कुछ पता लगाने पर भी पुलिस और सी0आई0डी0 यह पता न लगा सके कि जेल में कन्हाईलाल और सत्येन्द्रकुमार के पास पिस्तौल किसने पहुंचाये थे। पिस्तौल और कारतूस पहुंचाने वाला व्यक्ति और कोई नहीं हमारे चरित्र नायक भूपसिंह ही थे।

भूपसिंह भेष बदलकर उस समय जेल में मजदूर बनकर काम कर रहे थे। किसी को यह कल्पना भी नहीं हुई कि अशिक्षित और गंवार लगने वाला मजदूर भूपसिंह है। यह दोनों रिवॉल्वर उन्हीं के द्वारा सत्येन्द्रकुमार और कन्हाईलाल के पास पहुंचाये गए।

सत्येन्द्रकुमार के शव के न दिए जाने के कारण क्रान्तिकारी दल बहुत उत्तेजित हो उठा और उसने भयंकर वेग से पुलिस पर आक्रमण किया। 1 मई से 15 मई के बीच में कई पुलिस अफसर मारे गए। 15 मई 1908 को कलकत्ते की ग्रे–स्ट्रीट में एक बम फटा जिससे चार व्यक्ति घायल हुए। इसके उपरान्त जून तक रेल के डिब्बों में चार बार बम फेंका गया। ग्रे–स्ट्रीट पर जो बम फटा था उसको फेंकनेवाले भूपसिंह ही थे।

उन दिनों दल को भयंकर आर्थिक कष्ट का सामना करना पड़ रहा था। धन के अभाव में दल की स्थिति बहुत दयनीय हो गई थी। अतएव 2 जून को एक भयंकर डांका डाला गया। उस दिन लगभग पचास व्यक्ति जिसमें भूपसिंह सम्मिलित थे। नकाब पहिनकर बंदूक, रिवॉल्वर और छुरों इत्यादि से लैस होकर नाव में बैठकर बारा नामक गांव गए और वहां के एक धनी व्यक्ति के यहां डाका डाला। उस डांके में 25 हजार रुपये और थोड़ा जेवर मिला। डांका डालकर वे उसी नाव द्वारा वापस चले आए। नाव उस घर से लगभग चार सौ गज की दूरी पर थी। गांव के चौकीदार ने भूपसिंह पर लाठी से प्रहार किया अतएव भूपसिंह ने उसे गोली मार दी। चौकीदार वहीं धराशायी हो गया। उनके नाव पर बैठकर जाने पर भी पूलिस और गांव वालों ने उनका बड़ी दूर तक पीछा किया। भूपसिंह और उनके साथी अपनी रक्षा के लिए लगातार गोली चलाते रहे जिससे तीन व्यक्ति मरे और एक घायल हो गया। जिस नाव में बैठकर यह डांका डाला गया था, वह भी इसी काम के लिए चुराई गई थी।

अलीपुर षड़यंत्र केस में सरकारी वकील विश्वास तथा सरकारी गवाह चटर्जी को अनुशीलन समिति का क्रान्तिकारी दल समाप्त कर देना चाहता था। विश्वास को मारने का काम बसु नामक व्यक्ति को सौंपा गया था और विश्वासघाती चटर्जी को मारने का काम सम्भवतः भूपसिंह को सौंपा गया था। सरकारी वकील की हत्या बसु ने जब वह अदालत से निकल रहे थे, कर दी। वह उसी समय 10 फरवरी 1908 को पकड़ा गया और बाद को फांसी दे दी गई। 3 जून 1909 को क्रान्तिकारियों ने जिनमें सम्भवतः भूपसिंह भी थे, मकान में घुसकर भाई प्रियनाथ चटर्जी को अपनी गोली का शिकार बनाया। अलीपुर षड़यन्त्र मुकदमें में भाग लेकर एक डिप्टी सुपरिटैंडेंट पुलिस जब आ रहा था तो उसको भी गोली मार दी गई।

सम्भवतः भूपसिंह ने क्रान्तिकारी दल के अन्य साहसिक कार्यों में भाग लिया होगा परन्तु इस सम्बन्ध में कोई विस्तृत जानकारी नहीं हैं। क्योंकि पथिकजी ने अपनी धर्मपत्नी को भी अपने पूर्व जीवन की इन घटनाओं का रहस्य नहीं बतलाया।

जो भी हो अपने साहस, वीरता, लगन, प्रतिभा व संगठन शक्ति, कष्टसहिष्णुता और सूझबूझ के कारण उनका क्रान्तिकारी दल में एक विशेष स्थान बन गया था और रासबिहारी बोस उनसे बहुत अधिक प्रभावित हुए। उन्होंने भूपसिंह को भविष्य में अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों के लिए शिक्षा देना आरम्भ किया।

बात यह थी कि वह महान क्रान्तिकारी और देशभक्त सम्पूर्ण देशों में एक व्यापक सशस्त्र क्रान्ति करना चाहता था। रासबिहारी बोस यह भली भांति जानते थे, यद्यपि देश में बहुत से क्रान्तिकारी दल हैं और उनमें हजारों की संख्या में अपना सर्वस्व बलिदान कर देने वाले देशभक्त क्रान्तिकारी लोग मौजूद हैं परन्तु उनके संगठित न होने के कारण कोई योजनाबद्ध व्यापक सशस्त्र क्रान्ति नहीं हो सकती थी और न ही ब्रिटिश शासन को उखाड़ फैंका जा सकता था। इसके अतिरिक्त व्यापक सशस्त्र क्रान्ति के लिए यह भी आवश्यक था कि उन सभी शक्तियों को संगठित किया जावे जो ब्रिटिश सत्ता को भारत से उखाड़ फेंकने में विश्वास रखते हैं। अतएव देश के सभी क्रान्तिकारियों को एक सूत्र में बांधने, उग्र देशभक्तों को उस क्रान्तिकारी संगठन में लाने, धन और अस्त्र–शस्त्र इकट्ठा करने, सेना तथा राजाओं, जागीरदारों तथा अन्य प्रभावशाली व्यक्तियों को सशस्त्र क्रान्ति के लिए तैयार करने की आवश्यकता थी। अतएव रासबिहारी बोस ने अपने योग्यतम और साहसी क्रान्तिकारी युवकों को देश के कोने–कोने में भेजकर देश की स्वतन्त्रता के युद्ध की तैयारियां प्रारम्भ कर दीं।

उस समय समस्त भारत और उन देशों जहां भारतीय जाकर बस गये, वे क्रान्तिकारी आन्दोलन की अग्नि प्रज्जवलित थी। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी लाला हरदयाल ने गदर पार्टी की स्थापना अमेरिका के सैन फ्रांसिसको में की। उसका मुख्य पत्र गदर कई भारतीय भाषाओं में निकलता था। भारत में तो वह बहुत बड़ी संख्या में आता था। कनाड़ा, संयुक्त राज्य अमेरिका, हांगकांग, शंघाई, मलाया, उन सभी प्रदेशों में भारी संख्या में भेजा जाता था जहां भारतीय रहते थे और भारतीय सेनाएं रहती थीं। यही नहीं उन्होंने कनाड़ा और संयुक्त राज्य अमेरिका में रहने वाले सिक्खों और पंजाबियों में देश को स्वतन्त्र करने के लिए विप्लववादी संगठन खड़ा करने के लिए एक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी सिक्ख युवक करतारसिंह के सहयोग से ''युगान्तर–आश्रम' नामक संस्था भी स्थापित कर दी।

महायुद्ध के छिड़ते ही विदेशों से भारतीय भारत में विद्रोह करने और विदेशियों को भारत से निकाल बाहर करने के लिए बड़ी संख्या में भारत की ओर चल पड़े। भारत में भी क्रान्तिकारी बहुत सक्रिय हो गए थे। बंगाल के सभी क्रान्तिकारी दल प्रसिद्ध क्रान्तिकारी जतीन और शचीन्द्र के प्रयत्न से रासबिहारी बोस के नेतृत्व में संगठित हो गए थे।

कनाड़ा और अमेरिका से लौटे हुए क्रान्तिकारी सिक्खों और पंजाबियों के साथ 27 सितम्बर 1914 को बजबज में जो पाशविक अत्याचार हुआ उससे समस्त देश में और जहां विदेशों में भारतीय रहते थे, एक सनसनी फैल गई। इन यात्रियों को लेकर जब कामागाटा मारु जहाज ने बजबज में लंगर डाला तो सरकार उन सभी को कैद करना चाहती थी। उनके स्पेशल ट्रेन में न बैठने पर गोली काण्ड हुआ। बहुत से व्यक्ति मारे गए, बहुत से घायल हुए और बहुत से गिरफ्तार हुए। उनके नेता गुरुदत्तसिंह घायल होकर भी बच निकले।

इसके उपरान्त विदेशों में विशेषकर अमेरिका, कनाड़ा, फिलीपीन्स, चीन, हांगकांग, मलाया, इत्यादि में प्रवासी भारतीयों में क्रान्ति की एक व्यापक लहर फैल गई। विदेशों से बहुत बड़ी संख्या में भारतीय भारत वापस आने लगे। अतएव पंजाब में क्रान्ति की अग्नि तेजी से प्रज्जवलित हो उठी। रासबिहारी बोस ने पहले शचीन्द्र को वहां से क्रान्तिकारियों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए भेजा और फिर वे स्वयं भी वहां पहुंचे। इधर शचीन्द्र ने वाराणसी में अनुशीलन समिति की शाखा स्थापित कर उत्तर प्रदेश में क्रान्तिकारियों का संगठन स्थापित किया। बिहार में भी क्रान्तिकारी संगठन हो गया था। मध्य भारत और राजस्थान में 'अभिनव–भारती' नामक क्रान्तिकारी संगठन स्थापित हो गया था जो ग्वालियर तथा उसके पास के क्षेत्र में सक्रिय था। राजस्थान में 'वीर भारत सभा' नामक एक गुप्त सैनिक संगठन खड़ा किया गया जिसमें राजस्थानियों को विशेषकर, राजपूतों तथा दूसरे अधिकार प्राप्त शासकों और सैनिकों के वर्ग को अपने पूर्ण गौरव का स्मरण दिलाकर बड़ी संख्या में भर्ती करने का प्रयास किया गया। 23 दिसम्बर 1912 को लार्ड हार्डिग ने बड़ी सजधज और शाही शानशौकत से दिल्ली में प्रवेश किया। क्रान्तिकारियों ने रासबिहारी बोस के नेतृत्व में बीच छावनी चौक में उसकी सवारी हाथी पर बम फैंककर उस रौब को गहरा आघात पहुंचाया और अंग्रेजों को मानों यह सूचना दी कि हम तुम्हें देश से बाहर निकाल कर फैंक देना चाहते हैं। बम के फटने से लार्ड हार्डिग के सिर में थोडी चोट लगी किन्तु अंगरक्षक मारा गया। उसी समय समस्त चांदनी चौक को पुलिस ने घेर लिया। बड़ी कडाई के साथ असंख्य स्त्री–पुरुषों की तलाशी ली गई। किन्तु रासबिहारी बोस और उनके साथी पुलिस की इतनी सतर्कता और पुलिस तथा सेना के घेरे से और गहरी छानबीन के होते हुए भी साफ निकल गए। लाख सर पटकने पर भी पुलिस उनका कोई पता न लगा सकी। उस समय रासबिहारी के साथ प्रसिद्ध बारहठ परिवार के ठाकुर जोरावरसिंह, ठाकुर केसरीसिंह बारहठ के भाई, प्रतापसिंह ठाकुर साहब के महान क्रान्तिकारी पुत्र, तथा भूपसिंह भी थे। रासबिहारी बोस और यह क्रान्तिकारी देहली से पुलिस और सेना की आंख बचाकर साफ निकल गए।

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय ने क्रान्तिकारियों की इस वीरता पर मुग्ध होकर लिखा था–

"जिस आदमी ने 1912 में दिल्ली दरबार के मौके पर लार्ड हार्डिंग पर बम फैंक उसने एक स्मरणीय याद रखने लायक काम किया। इस आदमी की दिलेरी व बहादुरी अपना सानी नहीं रखती। इससे भी अधिक हौंसला दिलानेवाली बात यह है कि एक भाक्ति□ाली भाानदार साम्राज्य के सभी साधन और भाक्ति उस वीर का पता लगाने में आज तक असमर्थ साबित हुए हैं।"

इस कांड के उपरान्त क्रान्तिकारियों ने देशव्यापी विप्लव की तैयारियां बड़ी तेजी से आरम्भ कर दीं।

यह हम पहले ही कह चुके हैं कि रासबिहारी बोस ने इस हार्डिंग बम कांड के उपरान्त हमारे चरित्र नायक भूपसिंह को तथा भाई बालकमुकन्दजी को राजस्थान भेजा। भाई बालकमुकन्द जोधपुर महाराज के महाराजकुमार के शिक्षक तथा गार्जियन नियुक्त हो गये और भूपसिंह ने अजमेर में रेलवे वर्कशॉप में इस उद्देश्य से नौकरी की कि अस्त्र–शस्त्रों को बनाने, उनकी मरम्मत करने का काम सीख लें तथा अस्त्र–शस्त्रों को बनाने के कारखाने स्थापित करने के लिए कुशल कारीगरों को क्रान्तिकारी दल में भर्ती किया जावे। बात यह थी कि राजस्थान में अस्त्र–शस्त्रों पर उस समय भी कोई लाइसेंस नहीं था जबकि ब्रिटिश प्रान्तों में कोई तलवार और छुरी भी नहीं रख सकता था। इस कारण राजस्थान में क्रान्तिकारियों के लिए अस्त्र–शस्त्र इकट्ठा करने तथा उनका निर्माण करने के लिए गुप्त कारखाने स्थापित करने का अच्छा अवसर था। इधर राजस्थान के कुछ राजे और जागीरदार भी क्रान्तिकारियों से मिले हुए थे। अतएव उनसे सम्पर्क स्थापित करना और उनको संगठन में लाना आवश्यक था। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए भूपसिंह तथा भाई बालकमुकन्द को राजस्थान भेजा गया।

क्रान्तिकारी बड़ी तेजी से अपना सम्पर्क सेनाओं में बढ़ा रहे थे। भारतीय सैनिकों में क्रान्तिकारी बहुत श्रद्धा और आदर के पात्र बन गए थे। अतएव समय आ गया था कि योजना बनाकर विप्लव किया जावे। रासबिहारी बोस इसी उद्देश्य से राजस्थान को संगठित कर लेना चाहते थे। भूपसिंह तथा भाई बालकमुकन्द को इसी उद्देश्य से राजस्थान भेजा गया था।

राजस्थान में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी ठाकुर केशरीसिंह बारहठ, उनके भाई ठाकुर जोरावरसिंह, ठाकुर केशरीसिंह के पुत्र महान क्रान्तिकारी कुंवर प्रतापसिंह तथा ठाकुर केशरीसिंह बारहठ का समस्त परिवार क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित था। बारहठ परिवार का आत्मबलिदान भारत की स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाने योग्य है। ठाकुर केशरीसिंह का बहुत से राजपूत नरेश बहुत सम्मान करते थे। अस्तु उनकी प्रेरणा से उनमें भी देशभक्ति के भाव उदय हुए।

राजस्थान के कुछ राजपूत नरेश भी मन में अंग्रेजों से घृणा करते थे। जोधपुर नरेश, ईडर का शासक कर्नल सर प्रतापसिंह, बीकानेर के महाराजा गंगासिंह जी, और बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ तो वीर भारत समिति क्रान्तिकारी दल के सदस्य ही थे। उदयपुर के महाराणा फतहसिंह और कोटा के महाराव उम्मेदसिंह क्रान्तिकारियों से सहानुभूति रखते थे।

इनमें कुछ राजे तो वास्तव में जनसत्तापरक राष्ट्रीय राज्य स्थापित करना चाहते थे, उनमें महाराज सयाजीराव गायकवाड़ मुख्य थे। परन्तु कुछ राजे जिसमें राठौर नरेश मुख्य थे। अंग्रेजों को भारत से निकाल कर स्वयं स्वतन्त्र हो अपने राज्य का विस्तार करना चाहते थे। इनमें जोधपुर और बीकानेर मुख्य थे। अतएव वे अच्छे अस्त्र–शस्त्रों तथा साधनों पर अपना अधिकार रखना चाहते थे। वे आपस में चर्चा करते कि यदि सशस्त्र क्रान्ति सफल हो गई, जिसके सफल होने की चारों ओर चल रही क्रान्तिकारियों की तैयारियों, सेना में क्रान्तिकारी भावना के उदय हो जाने से पूरी आशा थी तो उसकी मान्यता थी कि क्रान्तिकारी दल के अधिकांश व्यक्ति तो उस युद्ध में खप चुके होंगे, और जो शेष बचेंगे वे उन्हें अपने उत्तम अस्त्र–शस्त्रों तथा सेनाओं के बल से अपने वश में कर लेंगे। फिर हम अपने राज्यों की सीमाओं का विस्तार करेंगे। बीकानेर के महाराज गंगासिंह की तो दृष्टि बहाबलपुर राज्य, पंजाब के कुछ हिस्से और निकटवर्ती प्रदेश पर लगी हुई थी।

भूपसिंह जब राजस्थान में आये तो रासबिहारी बोस के आदेशानुसार वे इन राजाओं से मिलें और शीघ्र ही उनमें घुल मिल गए। बात यह थी कि भूपसिंह के तेजस्वी व्यक्तित्व से राजपूत नरेश उन्हें राजपूत समझते थे। उन्होंने भी कभी उस भ्रम को दूर करने का प्रयत्न नहीं किया वरन उन्होंने अपने को भी राठौर प्रसिद्ध कर दिया। अतएव जोधपुर तथा बीकानेर नरेशों से वे घुल मिल गए। जब भूपसिंह को इन राजपूत राजाओं के संगठन में घुल मिल जाने पर यह पता लगा कि उनकी हार्दिक अभिलाषा क्रान्ति के सफल हो जाने के उपरान्त अपने राज्यों का विकास करने की है तो उन्होंने इस बात की सूचना रासबिहारी बोस को दे दी। अतएव क्रान्तिकारियों को राजाओं की मनोवृत्ति का पता चल गया। वे भी सतर्क थे। उन्होंने भी सावधानी से इस प्रकार की योजना बनाई कि अंग्रेजों को निकाल कर जनसत्तात्मक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना की जावे और इन राजाओं की योजना को विफल कर दिया जावे।

क्रान्तिकारी अपनी तैयारी ही कर रहे थे कि 4 अगस्त 1914 को यूरोप में अंग्रेजों का जर्मनी से महायुद्ध छिड़ गया। अंग्रेजों पर भारत में प्रहार करने का अनुकूल समय आ गया था। अतएव भारतीय क्रान्तिकारियों ने विप्लव की तैयारियां और भी तेज कर दीं। अमेरिका में भारत की आजादी के लिए लडने वाले स्वयंसेवकों की भर्ती गदर पार्टी में खुले आम होने लगी। झुण्ड के झुण्ड पंजाबी और सिक्ख स्वतन्त्रता के युद्ध के लिए भारत पहुंचने लगे।

इधर राजस्थान में बीकानेर के महाराजा गंगासिंह अंग्रेजों की मदद के बहाने पच्चीस हजार सेना भर्ती कर लेना चाहते थे। अंग्रेज महाराज गंगासिंह से सशंक हो उठे थे। अतएव उन्होंने उसकी आज्ञा नहीं दी। इसके विपरीत बीकानेर सेना में सबसे उत्तम भाग गंगा रिसाला स्वेज नहर क्षेत्र की रक्षा के बहाने मिस्त्र में भेज दिया गया। महाराज ने बहुत चाहा कि उसे भी अपनी सेना के साथ रहकर युद्ध का अनुभव प्राप्त करने का अवसर दिया जावे, परन्तु अंग्रेज सतर्क थे। उन्होंने बीकानेर नरेश की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। यही नहीं महाराजा गंगासिंह को अपने राज्य में रहने देना भी खतरनाक समझकर उन्होंने उन्हें सम्राट का अंगरक्षक बनाकर इंग्लैण्ड जाने पर विवश किया। बात यह थी कि केशरीसिंह की तलाशी में वीर भारत समिति के सदस्यों की सूची मिल गई थी। इससे अंग्रेज इन शासकों से सशंक हो उठे थे। उधर भाई बालकमुकन्द जो जोधपुर महाराजकुमार के शिक्षक और गार्जियन थे, देहली षड़यन्त्र में फंस चुके थे और उसके अभियुक्त बन चुके थे। बाद में इन्हें फांसी की सजा हुई। इसके

फलस्वरुप महाराज सरदारसिंह को गद्दी से उतारकर कुछ दिनों पंचमढ़ी में नजरबन्द कर दिया गया और जोधपुर का शासन सर प्रताप के नेतृत्व में एक शासन समिति को सौंप दिया गया।

उधर लाला हरदयाल जर्मनी से मिलकर भारत को स्वतन्त्र कराने के प्रयत्न कर रहे थे। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी भूपेन्द्रनाथ, बरकतउल्ला, चम्पक रामन पिल्ले, तारकनाथ दास, राजा महेन्द्र प्रताप जो महायुद्ध छिड़ने से पूर्व ही यूरोप चले गए थे, सभी ने मिलकर वहां एक क्रान्तिकारी संगठन स्थापित किया था।

भूपसिंह राजस्थान में बहुत सक्रिय थे। युद्ध के कुछ समय पूर्व विलायत में एक समय में एक कारतूस भरकर चलानेवाली तोड़ेदार हैंड्रो–मार्टन बन्दूकों की जगह एक ही समय एक बार चार कारतूस भरकर एक के बाद एक चला सकने वाली नई बन्दूकों का आविष्कार हुआ था। अंग्रेजों ने भारत में अपनी फौजों और सशस्त्र पुलिस को भी यही अस्त्र दिया। अतएव पुरानी उतरी हुई हैंड्रो–मार्टिन बन्दूकें उन्होंने राजस्थान में जहां शस्त्र कानून लागू नहीं था, बाजार में अच्छे दामों में बेच दीं। किन्तु चालाकी यह की कि किसी को भी एक बन्दूक के साथ एक सौ कारतूस से अधिक नहीं दिए। बाद में उन कारतूसों का बेचना बिलकुल बन्द कर दिया। इस कारण वे बन्दूकें बिलकुल बेकार हो गईं और बाजार में पांच–पांच रुपये पर बिकने लगीं। युवक भूपसिंह ने क्रान्तिकारी दल के लिए इन बन्दूकों को बड़ी संख्या में खरीदना आरम्भ कर दिया। कारतूसों की कमी को पूरा करने और पुराने कारतूसों को पुनः भरने और नये कारतूस बनाने तथा पुरानी और टूटी बन्दूकों की मरम्मत करने तथा नई बन्दूकें बनाने का सीखने के लिए वे अजमेर रेलवे वर्कशॉप में नौकर हो गए। भूपसिंह ने राजस्थान के विभिन्न गुप्त स्थानों पर बन्दूकें बनाने, टूटी बन्दूकों की मरम्मत करने तथा कारतूस बनाने के कई कारखाने स्थापित कर दिये। जहां भारतीय विप्लव के लिए भारी संख्या में अस्त्र–शस्त्र तैयार किये जाने लगे। भूपसिंह क्रान्तिकारी दल के लिए अस्त्र–शस्त्र, बम, इत्यादि इकट्ठा करने तथा बनाने का काम कर रहे थे, तो वे ब्यावर के देशभक्त दामोदर राठी के सम्पर्क में आए। उन्हें उनसे आर्थिक सहायता तथा अन्य सुविधाएं अस्त्र–शस्त्र के कारखाने स्थापित करने के लिए मिलीं। उन्हीं दिनों खरवा ठाकुर प्रसिद्ध क्रान्तिकारी राष्ट्रवर गोपालसिंह क्रान्तिकारी दल के सम्पर्क में आए। वास्तव में खरवा ठाकुर गोपालसिंह ही क्रान्तिकारी दल और राजस्थान के राजपूत राजाओं और जागीरदारों के बीच की कड़ी थे। स्वाभाविक था कि पथिकजी उनके सम्पर्क में आते। इधर क्रान्तिकारी दल इन राजपूत राजाओं की गतिविधियों से भी परिचित रहना चाहता था। अतएव भूपसिंह खरवा ठाकुर गोपालसिंह के व्यक्तिगत सचिव बन गए। उस दशा में उन्हें राजपूत राजाओं की सभी गतिविधियों को जानने तथा उन्हें भावी विप्लव के लिए तैयार करने का अवसर मिल गया। राजाओं को भी ऐसे भरोसे के क्रान्तिकारी युवकों की आवश्यकता थी कि जिनके द्वारा वे क्रान्तिकारियों से सम्पर्क तथा पत्र व्यवहार कर सकते थे। यही कारण था कि क्रान्तिकारियों ने अपने दल के विश्वस्त सदस्यों को इन राजाओं के यहां रख दिया था।

दिसम्बर 1914 में वाराणसी में जहां रासबिहारी बोस छिपे हुए थे, भारत के समस्त क्रान्तिकारी दलों के नेताओं का एक सम्मेलन हुआ। विप्लव की एक पूरी योजना बना ली गई। क्रान्तिकारी दल के दूत बन्नू पेशावर से सिंगापुर तक सभी अंग्रेज छावनियों में घुसकर वहां की परिस्थिति की जानकारी कर चुके थे। क्रान्तिकारियों ने सभी सैनिक छावनियों में भारतीय

सैनिकों से सम्बन्ध स्थापित कर लिया था और प्रत्येक छावनी में देशभक्त क्रान्तिकारी सैनिकों का एक दल खड़ा कर दिया था जो सेना में क्रान्तिकारी भावनाओं को भरता था। क्रान्तिकारियों ने यह मालूम कर लिया था कि उस समस्त देश में कुल 15 हजार गोरे सैनिक थे। अधिकांश भारतीय सेनाएं क्रान्ति होने पर देश की आजादी के लिए क्रान्तिकारियों के साथ शस्त्र उठाने को तैयार थीं। क्रान्तिकारियों की योजना थी कि पहले लाहौर, रावलपिंडी और फिरोजपुर की छावनियों की सेनाएं विद्रोह कर क्रान्तिकारियों और देशभक्त जनता के सहयोग से वहां के शस्त्रागारों पर जहां कि देश के विशाल शस्त्रागार थे, उन पर अधिकार कर लें। देश की दूसरी छावनियों की सेनाएं उस संकेत को पाते ही उठ खड़ी होने को तैयार रक्खी जावें और क्रान्तिकारियों की मदद से अपने–अपने प्रदेश के अंग्रेजों को गिरफ्तार कर लिया जावे। अजमेर तथा अन्य स्थानों पर राजस्थान के क्रान्तिकारियों ने अंग्रेजों के भारतीय नौकरों को पहले ही अपने साथ मिलाकर तय कर लिया था कि निश्चित तिथि पर संकेत पाते ही वे अंग्रेजों को सोते हुए उन्हें पकड़ कर क्रान्तिकारियों के हवाले कर देंगे। जहां तक हो सके रुधिर बहाने से बचा जावे और देश की शासन सत्ता अपने हाथ में कर ली जावे। देश के आन्तरिक शासन पर एक बार अधिकार प्राप्त कर लेने पर अंग्रेजों के शत्रु देशों जर्मनी, तुर्की आदि से विधिवत सम्बन्ध जोड़कर जिसके लिए प्रवासी भारतीय क्रान्तिकारी यूरोप में पहले से ही प्रयत्न कर रहे थे। उनसे सहायता प्राप्त कर अंग्रेजों द्वारा किए जाने वाले जवाबी हमलों का सामना करने की तैयारी की जावे।

क्रान्ति की सब तैयारियां हो जाने पर क्रान्ति का आरम्भ स्वयं अपने निरीक्षण और नेतृत्व में कराने के लिए रासबिहारी बोस जनवरी 1915 के आरम्भ में वाराणसी से हटकर लाहौर चले आये। दिल्ली और राजस्थान का प्रबन्ध देखने के लिए शचीन्द्र सान्याल को भेजा गया। 21 फरवरी 1915 भारत की आजादी के लिए सशस्त्र क्रान्ति आरम्भ करने की तिथि निश्चित कर दी गई। उस दिन प्रसिद्ध क्रान्तिकारी देशभक्त कर्तारसिंह अपने दल के साथ फिरोजपुर के शस्त्रागार पर आक्रमण करने वाला था। उसकी सफलता की सूचना मिलते ही अन्य सभी स्थानों पर क्रान्ति आरम्भ कर दी जाने को थी। राजस्थान में खरवा ठाकुर गोपालसिंह को दामोदरदास राठी से मिलकर ब्यावर पर और भूपसिंह को अजमेर और नसीराबाद पर अधिकार कर लेने का कार्य सौंपा गया। जनवरी के अन्त तक यह सारी व्यवस्था कर शचीन्द्र सान्याल वाराणसी लौट गया जहां कि क्रान्ति का सूत्रधार वह स्वयं ही था।

भूपसिंह अब तेजी से राजस्थान की क्रान्तिकारी शक्तियों को संगठित करने में जुट गए।

यह सब तैयारी भारत में अत्यन्त गुप्त तरीके से की जा रही थी। परन्तु यूरोप तथा अन्य देशों में भारतवासियों ने सशस्त्र क्रान्ति की तैयारी को उतनी सतर्कतापूर्वक गुप्त नहीं रक्खा। फ्रांस की पुलिस ने युद्ध आरम्भ होने के कुछ मास बाद ही अंग्रेजों को सूचना दी कि यूरोप के भारतीयों में भारत में शीघ्र ही फूटने वाले किसी सैनिक विद्रोह की चर्चा बहुत जोरों पर है। अतएव भारत में भी पुलिस बहुत चौकन्नी हो गई और फरवरी 1915 के आरम्भ में वह अपने एक गुप्तचर को क्रान्तिकारियों के दल में सम्मिलित कर देने में सफल हो गई। उसका नाम कृपालसिंह था। वह क्रान्तिकारियों की सारी खबरें पुलिस को देता था। क्रान्तिकारियों को उस पर शीघ्र ही संदेह हो गया। उन्होंने उस पर निगाह रखना आरम्भ की तो उनका संदेह पक्का हो गया। क्योंकि वह प्रतिदिन एक निश्चित समय पुलिस अधिकारियों के पास जाता था। होना

तो यह चाहिए था कि उसको तुरन्त गोली मार दी जाती परन्तु पंजाबी क्रान्तिकारी यह सोचते रहे कि कृपालसिंह को मार डालने से न जाने क्या गड़बड़ मच जावे। अतएव उन्होंने कृपालसिंह को एक प्रकार से नज़रबन्द कर लिया और 21 फरवरी 1915 के स्थान पर क्रान्ति की तिथि बदलकर 19 फरवरी कर दी। कारण यह था कि कृपालसिंह 19 फरवरी से तीन–चार दिन पूर्व सेना में फूट पड़ने वाले उस विप्लव की सूचना लाहौर के अंग्रेज अधिकारियों को दे आया था। अस्तु 21 फरवरी के विद्रोह की सूचना अंग्रेज अधिकारियों का पास पहुंच चुकी थी। इसी कारण क्रान्तिकारियों ने विप्लव की तारीख 19 फरवरी अर्थात् दो दिन पूर्व कर दिया। परन्तु दुर्भाग्यवश एक और दुर्घटना हो गई। इस नई तारीख की सूचना को छावनी में ले जाने का कार्य जिसको सौंपा गया था, उसने लौटकर रासबिहारी से कहा– "छावनी में मैं 19 तारीख की सूचना दे आया हूँ" उस समय कृपालसिंह वहीं बैठा हुआ था। उस व्यक्ति को कृपालसिंह के बारे में कुछ भी मालूम नहीं था। सम्भवतः यह घटना 18 फरवरी की थी। कृपालसिंह ने किसी तरह यह सूचना भी पुलिस के पास भिजवा दी।

इसके कुछ घंटे बाद ही 19 फरवरी को धरपकड़ आरम्भ हो गई। अंग्रेजों को इस क्रान्ति का पता चल गया। क्रान्ति असफल हो गई। लाहौर में रासबिहारी बोस और कर्तारसिंह को घोर निराशा हुई। सच तो यह है कि 1857 के उपरान्त विप्लव की इतनी बड़ी तैयारी इस देश में कभी नहीं हुई। वह सारी तैयारी व्यर्थ चली गई। रासबिहारी बोस को इससे गहरी निराशा हुई। लाहौर में रासबिहारी बोस तुरन्त वाराणसी की ओर चल पड़े। देशद्रोही कृपालसिंह के विश्वासघात से देश की स्वतन्त्रता का वह महायज्ञ असफल हो गया।

राजस्थान में भूपसिंह, खरवा के राव साहब गोपालसिंह, ठाकुर मोढसिंह तथा सवाईसिंह आदि 21 फरवरी 1915 को खरवा स्टेशन से कुछ दूर जंगल में कई हजार वीर योद्धाओं का क्रान्तिकारी दल लिए विप्लव करने की तैयारी कर संकेत पाने की प्रतीक्षा कर रहे थे। रात्रि को दस बजे के बाद अजमेर से अहमदाबाद जाने वाली रेलगाड़ी खरवा से गुजरती थी, उससे खरवा स्टेशन के समीप जंगल में एक बम का धमाका कार्यारम्भ का संकेत था। उस संकेत को पाते ही भूपसिंह तथा खरवा ठाकुर साहब को अजमेर और ब्यावर पर आक्रमण कर देना था। किन्तु संकेत नहीं मिला। बम का धमाका नहीं हुआ। अगले दिन संदेशवाहक ने आकर लाहौर में घटी घटनाओं की सूचना दे दी। बहुत अधिक संख्या में अस्त्र–शस्त्र इकट्ठे किए गए थे, जिनमें 30 हजार से अधिक बन्दूकें थीं, बहुत अधिक राशि में गोला और बारुद आदि था, तुरन्त गुप्त स्थानों में छिपा दिया गया और क्रान्तिकारी वीर स्वयंसेवक सैनिक दल बिखर गया।

भूपसिंह दिल्ली के रहने वाले अपने एक साथी रलियाराम को साथ ले खरवा अजमेर इत्यादि में सब व्यवस्था कर बड़ौदा तक जाकर अपने सब क्रान्तिकारी साथियों को सावधान कर आए। सात–आठ दिन बाद ही पुलिस ने खरवा पर छापा मारकर खरवा नरेश गोपालसिंह तथा भूपसिंह आदि को गिरफ्तार करने की तैयारी की। होने वाली गिरफ्तारी की खबर उन्हें क्रान्तिकारी भेदिए से पहले ही मिल गई थी। विचार विमर्श हुआ कि क्या किया जावे। कारण यह था कि शीघ्र ही सेना की टुकड़ी उन्हें गिरफ्तार करने के लिए आने वाली थी। भूपसिंह ने कहा कि चुपचाप आत्मसमर्पण कर अंग्रेजों की जेल में अनिश्चित काल तक पड़े रहकर सड़ने या फिर फांसी के तख्ते पर लटकाए जाने की अपेक्षा लड़ते हुए मरना कहीं अधिक गौरवमय है।

भूपसिंह की बात सबको उचित प्रतीत हुई और सबों ने आत्मसमर्पण न कर लड़ते हुए मर जाने का निश्चय किया।

अन्य सभी साधारण क्रान्तिकारी दल के सदस्यों को खरवा से हटा दिया गया। इसके उपरान्त भूपसिंह, खरवा नरेश ठाकुर गोपालसिंह, उसके भाई मोढसिंह, रलियाराम, और सवाईसिंह पांच क्रान्तिकारी वीर बहुत से अस्त्र–शस्त्र, बन्दूकें, गोली, बारुद, बम, इत्यादि लेकर तथा आठ दस दिन लायक खाने का सामान आदि लेकर रातों–रात खरवा के गढ़ से निकलकर पास के जंगल में बनी हुई ओहदी (शिकारी बुर्ज) में मोर्चाबन्दी कर जा डटे। दूसरे ही दिन अजमेर का अंग्रेज कमिश्नर 500 सैनिकों की टुकड़ी लेकर खरवा आया। उनके गढ़ में न मिलने पर उन्हें खोजता हुआ वह शिकारी बुर्ज के पास आ पहुंचा और उसको चारों ओर से घेरकर उसने उन वीरों से आत्मसमर्पण करने के लिए कहा। लेकिन उन वीरों ने आत्मसमर्पण कर जेल में सड़ने की अपेक्षा शत्रु से लड़कर मरना ही अधिक गौरवमय समझा। जब अंग्रेज कमिश्नर ने देखा कि वे लोग लड़कर मरने को तैयार हैं तो वह भयभीत हो गया। वह जानता था कि यदि वास्तव में लड़ाई हुई तो बहुत सम्भव है कि वहां की जनता कहीं विद्रोही होकर उनकी रक्षा के लिए न उठ खड़ी हो। क्योंकि खरवा नरेश राष्ट्रवर गोपालसिंह उस प्रदेश में बहुत ही लोकप्रिय थे और जनता उन्हें श्रद्धा की दृष्टि से देखती थी। इसके साथ ही भारतीय सैनिक टुकड़ी की राजभक्ति पर भी उसे पूरा भरोसा नहीं था। ऐसी दशा में यदि वह घिरे हुए क्रान्तिकारियों से युद्ध करता और कुछ समय युद्ध चलता तो समस्त राजस्थान में विद्रोह की अग्नि भड़क उठने का भय था। इसके अतिरिक्त ऊपर से भी कमिश्नर को यही आदेश मिला था कि जहां तक हो गोली चलने की नौबत ही न आने दी जावे।

उसने राव गोपालसिंह जी को समझाया कि अभी तो आप पर कोई विशेष अभियोग या दोषारोपण नहीं है केवल संदेह में ही गिरफ्तारियां की जा रही हैं। यह भी सम्भव है कि आप में से किसी पर भी कोई अपराध प्रमाणित न हो। ऐसी दशा में सरकार के विरुद्ध व्यर्थ ही शस्त्र उठाना बुद्धिमानी नहीं है। लम्बे समय तक बातचीत होने के बाद यह समझौता हुआ कि उन्हें किसी जेल या हवालात में बन्द न किया जाकर ऐसे स्थान पर नज़रबन्द किया जावेगा जहां आस–पास जंगल में शिकार की पूरी सुविधा हो, क्योंकि वे सभी प्रतिदिन शिकार करके ही मांस खाने के आदी हैं। शिकार के लिए बन्दूकें, तलवार आदि शस्त्र और सवारी के लिए घोड़े वे सदैव अपने पास रख सकेंगे। उनके आस–पास जहां तक दृष्टि पड़े फौज और पुलिस आदि का पहरा इस प्रकार न रक्खा जावेगा जिससे उन्हें कैदी होने का भान होता रहे।

अंग्रेज कमिश्नर को उन क्रान्तिकारी वीरों की दृढ़ता देखकर यह समझौता करना पड़ा। तदानुसार उन्हें मेवाड़ और मेरवाड़ा की सीमा पर स्थित टाटगढ़ के किले में नज़रबन्द कर दिया गया, जहां आस–पास तीन–तीन मील तक शिकार खेलने और घूमने की उन्हें खुली छूट थी।

किन्तु उसके पन्द्रह दिन बाद ही सोमदत्त नामक व्यक्ति के मुखबिर हो जाने से लाहौर षड़यन्त्र के मामले में भूपसिंह का भी नाम आया। अस्तु उसे गिरफ्तार कर तुरन्त टाटगढ़ से लाहौर भेजने के लिए वारंट जारी किया गया। यह समाचार सुनकर पांचों साथियों ने सलाह की। भूपसिंह ने कहा कि मैने तो निश्चय कर लिया है कि मैं गिरफ्तार नहीं होऊंगा। अंग्रेजों की जेल में पड़े रहकर सड़ने से मैं यह अच्छा समझता हूँ कि स्वतन्त्र रहकर भटका जावे और

आवश्यकता पड़े तो लड़कर वीरगति को प्राप्त किया जावे। जेल से मरना उत्तम है। राव गोपालसिंह खरवा नरेश भी भाग जाने के पक्ष में ही थे क्योंकि वे जानते थे कि भूपसिंह के बाद उनकी बारी होगी। किन्तु उन्होंने कहा कि मैं और सब कर सकता हूँ किन्तु पैदल चलने का अभ्यास न होने के कारण भाग नहीं सकता। अस्तु भूपसिंह ने अकेले भाग निकलने का निश्चय किया। यह तय हुआ कि मेवाड़ की सीमा में पहुंचकर सवारी का प्रबन्ध कर देंगे और तब शेष सभी लोग टाटगढ़ से भाग खड़े होंगे। कारण यह था कि जो घोड़े उनके पास थे यदि वे उन पर जाते तो सैनिक पहरेदार पहचान लेते और उन्हें पकड़ लेते।

अब भूपसिंह ने भेष बदला और एक साधु का भेष बना पहरेदारों की आंख बचाकर नज़रबन्दी से निकल गए। भेष बदलने में वे बहुत ही कुशल थे। अतएव उन पर किसी को भी संदेह नहीं हुआ। अज्ञातवास के दिनों में वे कभी रामसनेही साधु के भेष में तो कभी किसान के वेष में इधर से उधर भागते फिरते थे।

भूपसिंह ने बाहर निकलकर सवारी आदि का जब प्रबन्ध कर लिया तो खरवा नरेश तथा मोढ़सिंह आदि भी टाटगढ़ से निकल गए।

भूपसिंह टाटगढ़ से भेष बदलकर निकल गए और जंगल का रास्ता पकड़ा। सघन वन का मार्ग होने से वे रास्ता भटक गए। दिन भर बहुत दूर चलने के कारण तथा तेजी से भागने के कारण वे बहुत अधिक थक गए थे। उनका शरीर थकान से चकनाचूर हो गया था। चलते–चलते पैर थक गए थे। कुछ खाया पिया नहीं था। भूख तेजी से लग रही थी किन्तु वे इसकी परवाह न कर तेजी से आगे बढ़ते जा रहे थे। जब पैरों ने बिलकुल ही जवाब दे दिया और थकावट के कारण शरीर शिथिल हो गया तो थोड़ा विश्राम करने के लिए सघन वन से आच्छादित एक चट्टान पर बैठ गए। थकावट से शरीर चकनाचूर हो गया था। जंगल की शीतल मंद पवन के झंकोरों ने उन्हें सुला दिया। वे गहरी निद्रा में सो रहे थे तो एक जंगली जानवर (सम्भवतः सुनहरी शेर) ने उनकी टांग पकड़ी और उन्हें घसीट कर ले चला। तब उनकी निद्रा टूटी, देखा कि वे मनुष्य भक्षी जंगली पशु के कब्जे में हैं। परन्तु भूपसिंह उस भयानक दृश्य को देखकर तनिक भी विचलित नहीं हुए। विपत्ति के समय भूपसिंह अधिक तेजस्वी बन जाते थे और उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और भी अधिक तेज और सूक्ष्म हो जातीथी। शेर द्वारा घसीटे जाने पर भी उन्होंने बिना अपने को हिलाए डुलाए धीरे से अपना रिवॉल्वर निकाला और शेर को गोली मार दी। हिंसक जानवर धराशायी हो गया और भूपसिंह के प्राणों की रक्षा हो गई परन्तु वे घायल हो हो गए। उनका पैर बहुत अधिक सूज गया था और उसमें भीषण वेदना भी हो रही थी। सांयकाल हो गया था। वन में सुरक्षित स्थान खोजकर उन्होंने रात्रि काटी। प्रातः पौं फटते ही वे वन से बाहर निकले। सघन वन को पार कर जब वे वन के बाहर खुले मार्ग पर आए तो उन्होंने देखा कि मार्ग के एक ओर गांव बसा था और दूसरी ओर एक अकेली झौंपड़ी थी। जब भूपसिंह गांव से बचकर झौंपड़ी की तरफ चुपचाप बढ़ रहे थे तब उस झौंपड़ी में रहने वाली 60 वर्ष की वृद्धा की दृष्टि उन पर पड़ी। वह अपनी सहज कुशाग्र बुद्धि से भांप गई थी कि यह टाटगढ़ से भागा हुआ अंग्रेजों का विद्रोही है। बात यह थी कि टाटगढ़ से भूपसिंह के निकल भागने की खबर से उस क्षेत्र में बड़ी सनसनी फैल गई थी। खुफिया पुलिस, सैनिक टुकडियां, राज्य कर्मचारी और पुलिस के झुण्ड टिड्ढी दल की भांति उस क्षेत्र में फैल गए। प्रत्येक गांव और स्थानों की बारीकी से खोज की जा रही थी। सारा क्षेत्र आतंक से भयभीत था। वह

अशिक्षित ग्रामीण वृद्धा जिसमें कोई राजनीतिक चैतन्य नहीं था परन्तु उसके हृदय में देश पर अपने को निछावर करने वाले क्रान्तिकारी अंग्रेजों के विरोधी भूपसिंह के लिए सहज ममता जागृत हो गई। उसने बहुत आग्रह से भूपसिंह को आगे जाने से रोका और अपनी झौपडी में ले गई और वहां उनको छिपा दिया। बोली, बेटा मैं जान गई हूँ कि तुम टाटगढ़ से भागे हुए अंग्रेजों के विरोधी हो। सारा प्रदेश सेना पुलिस और खुफिया पुलिस से भरा हुआ है। प्रत्येक गांव और कस्बे में तुम्हारे निकल भागने का समाचार पहुंच गया है। तुम घायल हो अतएव इस प्रकार पैदल जाना खतरे से खाली नहीं है। अस्तु उसके आग्रह करने पर भूपसिंह उसकी झौंपड़ी में छिप गए। वृद्धा ने उनके जख्मों पर मरहम–पट्टी की और उनको खाना खिलाया। उससे भूपसिंह की पीड़ा कम हो गई और वे थोड़े आश्वस्त हुए। वृद्धा ने फिर अपने लड़के से गांव के धोबी का घोड़ा जंगल में चरने के स्थान से चुपचाप पकड़वा मंगवाया। सूर्यास्त का समय हो गया था। वृद्धा ने रुंधे कण्ठ से कहा– "बेटा अब तुम इस घोड़े पर चढ़ अपने स्थान को जा सकते हो। भगवान तुम्हारी रक्षा करेंगे।" भूपसिंह ने वृद्धा को नमस्कार किया और उस घोड़े पर चढ़ अपने गन्तव्य स्थान की ओर चल दिये।

अब भूपसिंह उस ममतामयी वृद्धा से विदा ले चले तो वे एक राजाजी के गांव गए। वे राजाजी सम्भवतः खरवा वालों के सम्बन्धी थे। इसी कारण खरवा नरेश गोपालसिंह के संकेत पर उनके पास गए थे। किन्तु वे राजा अत्यन्त कायर निकले। पहले तो वे भूपसिंह से मिलने को भी तैयार नहीं थे। बहुत प्रयत्न करने पर जब वे मिले तो अभिप्राय जानकर सहायता करने से साफ़ मना कर दिया। भूपसिंह ने जब कहा कि कम से कम उनके निकल भागने के लिए सवारियों का ही प्रबन्ध कर दीजिए तो यह कहकर मना कर दिया कि हमारी सवांरियां पहचान ली जावेंगी, अस्तु मैं सवारी नहीं दे सकता। बोले कि आप लोगों की गिरफ्तारी की आज्ञा आ चुकी है। राव गोपालसिंह अंग्रेजों के शत्रु हैं। मैं सवांरियां देकर अपने ऊपर खतरा नहीं ले सकता।

भूपसिंह ने उनके क्षत्रियत्व को उभारने का प्रयत्न किया। उन्होंने कहा कि क्षत्रियों का धर्म तो मातृभूमि पर बलिदान हो जाना है, आप उन्हीं वीर क्षत्रियों के वंशज हैं। अतएव उन लोगों की जिन्होंने मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए अपना जीवन अर्पण कर दिया है, आड़े समय पर सहायता करना आपका पुनीत कर्तवय है। क्षत्रिय तो अपने प्राण देकर भी शरण में आए हुए अपरिचित की रक्षा करता है। खरवा नरेश तो आपके सम्बन्धी हैं, उन्होंने मातृभूमि की सेवा के लिए राज्य छोड़ा है। क्या आप उनकी इतनी सी सहायता नहीं करेंगे कि उन्हें निकल भागने के लिए सवांरियां दे दें। परन्तु उस जागीरदार का क्षत्रियत्व सो गया था। उसके मन में कायरता भरी हुई थी। अस्तु वे राजाजी किसी भी प्रकार सवारियां देने को तैयार नहीं हुए। भूपसिंह का क्रान्तिकारी पौरुष और साहस अब जाग उठा। उन्होंने रिवॉल्वर तानकर कहा– "जो व्यक्ति मातृभूमि की सेवा से विमुख होता है उसको जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं है।" तब उक्त राजाजी ने दूसरों की सवांरियां भिजवाना स्वीकार किया। इस प्रकार सवारियों का प्रबन्ध कर भूपसिंह ने उन्हें अपने साथियों के पास टाटगढ़ भिजवा दिया और राव गोपालसिंह आदि को भी वहां से निकलवा लिया। उन राजाजी ने भूपसिंह को पच्चीस रुपये की आर्थिक सहायता भी दी। उक्त राजाजी मातृभूमि की बलिवेदी पर अपना सर्वस्व निछावर कर देने वाले अपने सम्बन्धी राव गोपालसिंह और उनके वीर साथियों के जीवन मरण की उस बेला में केवल पच्चीस रुपये दे सके। भूपसिंह ने उसमें से पन्द्रह रुपये उस व्यक्ति को दे दिये जो टाटगढ़ घोड़े ले जा रहा था

और वहां से बिना रुके आगे बढ़ गए। यह भूपसिंह के बड़े साहस का काम था। साधारण व्यक्ति निराश होकर सवारियां भेजने का प्रयत्न करना ही छोड़ देता। किन्तु उनमें साहस और वीरता कूट-कूटकर भरी थी। वे पराजय स्वीकार करने वालों में से नहीं थे।

भूपसिंह के शरीर की अवस्था उस समय अत्यन्त जर्जर थी। उनका पैर जख्मी होने के कारण तथा भागते फिरने के कारण बहुत सूज गया था और उसमें गहरी पीड़ा थी। उनको कुछ दिनों विश्राम करने की नितान्त आवश्यकता थी। वे वहां विश्राम करना भी चाहते थे परन्तु जब उन्होंने देखा कि उक्त राजाजी अत्यन्त कायर और भयग्रस्त है और उनसे दूर रहना चाहते हैं तो उन्होंने वहां अधिक ठहरना उचित नहीं समझा। क्योंकि भीरु और भयभीत व्यक्ति के पास ठहरना भूपसिंह जैसे क्रान्तिकारी के लिए सुरक्षित नहीं था। अंग्रेजी सरकार को अपनी स्वामीभक्ति का प्रमाण देने के लिए कहीं उन्हें गिरफ्तार न करा दिया जावे, इस आशंका से वे अपने क्षत-विक्षत और थके हुए जर्जर शरीर की तनिक भी चिन्ता न करते हुए आगे बढ़ गए। जंगल-जंगल और गांव-गांव भटकते हुए वे 'गुरला' गांव पहुंचे। उस समय उनके पास बचे हुए दस रुपयों में से केवल सात आने शेष थे और सब भोजन पर व्यय हो गए थे। गुरला जागीरदार उस समय गांव में नहीं थे किन्तु उनके छोटे भाई ने भूपसिंह को अपने गढ़ में ठहरा लिया। गुरला ठाकुर साहब के आने पर उन्होंने भूपसिंह जी को अपने गढ़ के जनाने हिस्से में छिपा दिया और उनकी चिकित्सा कराई तथा सेवासुश्रुषा की। भूपसिंह को शरण देना बहुत बड़ा खतरा मोल लेना था किन्तु उस साहसी वीर ने इसकी तनिक भी चिंता न कर अपनी देशभक्ति का परिचय दिया। जब भूपसिंह कुछ दिनों में स्वास्थ्य हो गये तो उन्होंने गुरला छोड़ दिया। कुछ दिन वे एक कुटिया में एक साधु के भेष में रहे। कुटिया में रहने वाला साधु कहीं कार्यावश जा रहा था अस्तु भूपसिंह उस साधु के स्थान पर उसकी कुटिया में जम गए। कुछ ही दिनों में उस नए साधु के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ने लगा। लोग नए साधु की विद्धता और प्रतिभा से प्रभावित होने लगे। भिनाय राजा साहब के पास साधु की प्रशंसा पहुंची। वे स्वयं दर्शन करने पहुंचे और साधु वेषधारी भूपसिंह से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने अपने राजकीय मन्दिर के महन्त पद को स्वीकार करने की प्रार्थना की। उस मन्दिर के साथ एक बड़ी जागीर थी जो महन्त को दी जाती थी। मन्दिर का महन्त पद खाली था। साधु भूपसिंह ने यह कहकर प्रार्थना अस्वीकार कर दी कि हम तो स्वयं अपनी जागीर छोड़कर आए हैं। उसके उपरान्त भी राजा भिनाय का आग्रह बना रहा। रनिवास से रानीजी का निमंत्रण आया। वे भी उनसे बहुत प्रभावित हुईं। एक दिन जब वे कुएं पर स्नान कर रहे थे तो एक गुप्तचर ने उनसे पूछा महाराज आपको कहीं देखा है। साधु वेष में भूपसिंह ने कहा कि देखा होगा। किन्तु उन्हें संदेह हो गया कि वह सम्भवतः पहचान गया है। अतएव वहां अधिक समय तक ठिकाना ठीक नहीं है। उधर वह साधु भी अपना काम समाप्त करके लौट आया था। अस्तु स्थान छोड़कर चल दिए। खारी तट में छिपे हुए अस्त्र निकालकर उनसे लैस हो भेष बदलकर चल पड़े। वहां से चलकर भूपसिंह मेंगटिया गांव में पहुंचे। मेंगटिया चारणों का गांव है, उसमें ईश्वरदान जी चारण रहते थे। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री केशरीसिंह बारहठ के वे जामाता थे। वीरवर प्रतापसिंह की बहिन चन्द्रमणि उनको ब्याही थीं। केशरीसिंह बारहठ भूपसिंह के क्रान्तिकारी साथी थे, इसी कारण वे मेंगटिया आश्रय प्राप्त करने पहुंचे। परन्तु ईश्वरदान जी घर पर नहीं थे। अन्य चारण सरदारों ने भूपसिंह का आतिथ्य नहीं किया। अतएव वहां से वे कांकरोली चले आए।

तृतीय अध्याय

अज्ञातवास

यह तो हम पहले ही लिख चके है कि भूपसिंह के टाटगढ़ से निकल भागने के पश्चात् ठाकुर गोपालसिंह तथा मोडसिंह आदि भी टाटगढ़ से निकल गए थे। इन क्रातिकारियों के नजरबन्दी से निकल भागने से मेवाड़ और आस पास प्रदेश में बहुत अधिक सनसनी फैल गई थी। समस्त प्रदेश में सनसनी और उत्सुकता का वातावरण था। अंग्रेजों के गुप्तचर, फौज और पुलिस की टुकड़ियां समस्त प्रदेश को उनकी खोज में रौंद रहे थे। मेवाड़ के महाराणा को भी भारत सरकार के भारी दवाब के कारण उनकी गिरफ्तारी के लिए जगह जगह पुलिस और सेना के दस्ते नियत करने पड़े थे। परन्तु महाराणा फतेहसिंह मन से नही चाहते थे कि उनको गिरफ्तार किया जावे। उनकी सहानुभूति इन क्रांतिकारियों के साथ थी। जनता और सरदारों की तो सहज सहानुभूति उनके साथ थी ही।

अब भूपसिंह को अपने जीवन का भावी कार्यक्रम निश्चित करना था। लाहौर षड़यन्त्र में उनके सम्मिलित होने के प्रमाण ब्रिटिश सरकार को मिल चुके थे। अंग्रेज सरकार उनकी घोर शत्रु बन गई थी। वह उन्हे अत्यन्त खतरनाक व्यक्ति समझती थी, उनको गिरफ्तार करने के लिए आकाश पाताल एक किया जा रहा था। पग–पग पर उन्हें पकड़े जाने का खतरा था। अस्तु ब्रिटिश प्रान्तों में जाना बहुत अधिक खतरनाक था। राजस्थान में पिछले कुछ समय क्रांति की तैयारी करते रहने के कारण उनका वहां छोटे जागीरदारों और देशभक्त युवकों से घनिष्ठ परिचय हो गया था। अतएव यहां उनको कुछ सहायता मिलने की आशा थी। इसलिए उन्होंने यह निर्णय किया कि भविष्य में वे राजस्थान में ही रहकर देश सेवा का कार्य करेंगे। इसके अतिरिक्त उनकी यह भी मान्यता थी कि यदि देशी राज्यों में स्वतन्त्रता का आन्दोलन प्रबल न हुआ तो ब्रिटिश भारत का आन्दोलन सफल न होगा। देशी राज्य ब्रिटिश भारत की बेड़ियां बन जावेंगे।

उस समय मेवाड़ में जगह–जगह पर लोगों ने क्रान्तिकारियों के नमूने पर अपने छोटे–छोटे समूह और दल बना रक्खे थे। यह दल देश को अंग्रेजों की दासता से किस प्रकार मुक्त किया जावे इसकी चर्चा करते तथा उस स्थान पर कोई सार्वजनिक सेवा का कार्य हो तो वे समूह उसमें तत्परता से भाग लेते थे। देश के लिए साहसी कार्यो के लिए अवसर खोजते थे। इन समूहों में सभी प्रकार के लोग होते थे। कुछ युवक जागीरदार भी उनमें सम्मिलित थे। भूपसिंह का उनसे पहले का घनिष्ठ परिचय था।

यह तो हम पहले ही कह आए हैं कि उस वृद्धा से विदा हो भूपसिंह मेवाड़ में उसी इलाके के गुरला गांव के जागीरदार के यहां पहुचे थे। उसने उन्हें गढ़ के जनाने भाग में छिपाकर रक्खा। वे वहां एक महीने तक रहे। अब भूपसिंह ने अपने बाल और दाढ़ी बढ़ा ली जिससे उनकी सूरत में परिवर्तन आ जावे और आसानी से वे पहचाने न जा सकें तथा अपने नाम को छोड़कर उन्होंने अपना नाम 'विजयसिंह पथिक' रख लिया। वे जानते थे कि अब जीवन में एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकना है। चलते ही जाना हैं पुलिस पीछे है अतएव कहीं अधिक लम्बे समय तक ठहर सकना कठिन होगा। अतः उन्होने अपने बदले हुए नाम

विजयसिंह के साथ 'पथिक' शब्द जोड़ लिया। हमारे पूर्व परिचित भूपसिंह अब विजयसिंह पथिक बन गए।

यह हम पहले ही कह चुके हैं कि मेवाड़ में उस समय कुछ क्रांतिकारियों के नमूने के छोटे-छोटे दल और समूह बन गए थे जो कि देश सेवा के साहसी कार्यों के अवसर की प्रतीक्षा में रहते थे। एक ऐसा दल मेवाड़ में स्थित प्रसिद्ध तीर्थ स्थान 'कांकरोली' में था। उस दल का नेता वहां का दाणी (चुंगी अधिकारी) पुरोहित किशनसिंह था। आसपास के अनेक युवक राजपूत जागीरदार चारण आदि उस दल के सदस्य थे। अतएव उन्हें पथिकजी के बारे में पता चला तो उस दल ने पथिकजी से प्रार्थना की कि वह कुछ समय वहां रहकर उनका पथ प्रदर्शन करें। पथिकजी ने उनके आग्रह को स्वीकार कर लिया और वे कांकरोली आए। दल के लोगों ने राजसमुद्र तालाब के उस पार भाणा नामक गांव में वहां के एक धनी सेठ डालचन्द्र के मकान पर उनके रहने का प्रबन्ध किया और वहां रहकर वे उस दल का पथ प्रदर्शन करने लगे। भाणा गांव में पहुँचते ही विजयसिंह पथिक ने एक पाठशाला स्थापित की और बहुत समय तक वे स्वयं बालकों को पढ़ाते और उनमें देशभक्ति के भाव भरते रहे।

यह हम पहले ही कह आए हैं कि पथिकजी के टाटगढ़ से निकल भागने के बाद राष्ट्रवर गोपालसिंह और मोड़सिंह आदि भी टाटगढ़ से निकल गए थे। वे भी अज्ञातवास में एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटक रहे थे। उस समय वे किशनगढ़ राज्य में स्थित सलेमाबाद जो राठौर राजपूतों का एक प्रसिद्ध ठाकुरद्वारा था, जा पहुँचे। किसी देशद्रोही ने खरवा नरेश के वहां पहुंचने की सूचना किशनगढ़ भेज दी। समाचार पाते ही किशनगढ़ के दीवान पोनारुकर सशस्त्र सैनिकों सहित आए और मन्दिर को घेर लिया। खरवा नरेश ने मन्दिर के फाटक बंद करवा दिए और मन्दिर के ऊंचे बुर्ज पर मोर्चाबंदी कर जम गए।

दीवान पोनारुकर ने राव साहब से पूछा "क्या इच्छा हैं"? राव साहब ने निर्भीकता से उत्तर दिया "जिस प्रतिष्ठा के लिए हमने टाटगढ़ छोड़ा है और लगातार जंगलों में भटक रहे हैं उसकी रक्षा प्राण रहते करना।

दीवान पोनारुकर ने घबड़ाकर वायसराय और चीफ कमिश्नर को सूचना भेज दी।

जिस समय राव गोपालसिंह सलेमाबाद के मन्दिर में धिरे हुए थे, उसकी सूचना पथिकजी को भाणा गांव से मिली। उसी समय कांकरोली के क्रांतिकारी देशभक्तों ने पथिकजी के नेतृत्व में वहां पहुँचकर खरवा नरेश की सहायता करने का निश्चय किया। पथिकजी के नेतृत्व में ऊंटों पर वे साहसी युवक सलेमाबाद की ओर चल पड़े। सलेमाबाद पहुँचने पर ज्ञात हुआ की राव गोपालसिंह तथा मोडसिंह आदि ने आत्मसमर्पण कर दिया। अतएव वे निराश हो कांकरोली लौट आए।

बात यह हुई कि दीवान पोनारुकर का समाचार मिलते ही अजमेर से चीफ कमिश्नर, इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस तथा सशस्त्र सैनिकों की टुकड़ी सलेमाबाद पहुँची। राव साहब को लड़ने पर उद्यत देख कमिश्नर मिस्टर केई ने समझा बुझाकर उनके सामने सम्मानपूर्ण नजरबन्दी की शर्तें रखीं। अतएव राव साहब गोपालसिंह ने दूसरे दिन आत्मसमर्पण कर दिया।

कांकरोली में रहते हुए उनकी ठाकुर डूंगरसिंह भाटी ग्राम मोई (मेवाड़) निवासी तथा ईश्वरदान जी चारण ग्राम मेंगारिया (मेवाड़) निवासी से बहुत अधिक घनिष्ठता हो गई थी और वे उनके कार्यो में सहायक थे। परन्तु पथिकजी को जैसा सहयोग वे चाहते थे वैसा नही मिल पाता था। फिर भी कांकरोली का दल पथिकजी के नेतृत्व में अधिक सक्रिय हो गया था। क्रमशः पुलिस और सरकार की दृष्टि उस ओर गई और खुफिया विभाग के गुप्तचर बड़ी संख्या में उस क्षेत्र में फिरने लगे। उन्हें पता लग गया कि इस दल का नेतृत्व भाणा गांव की पाठशाला के अध्यापक विजयसिंह पथिक के हाथ में हैं। अतएव गुप्तचरों का भाणा गांव में आना जाना अधिक होने लगा।

पथिकजी ने देखा कि भाणा गांव में रहना खतरे से खाली नहीं है क्योंकि उन्हें इस बात के चिन्ह और सूचनाएं मिली थी कि खुफिया विभाग को उन पर संदेह हो गया हैं। अतएव उन्होने एकाएक भाणा गांव छोड़ दिया। वहां से हटकर वे एकान्त और सुरक्षित स्थान मोही पहुँचे। कुछ दिन वहां श्री डूंगरसिंह भाटी के साथ रहे और एक पाठशाला चलाई। कुछ समय वहां रहकर अधिक सुरक्षित स्थान की खोज में जहाजपुर पहुँचे। वहां भी उन्होंने एक पाठशाला स्थापित की और स्वयं उसमें शिक्षक का कार्य करने लगे। परन्तु जहाजपुर उनको सुरक्षित तथा अपने कार्यक्षेत्र के अनुकूल स्थान प्रतीत नहीं हुआ और वे वहां से भी हटकर अधिक सुरक्षित और अनुकूल स्थान की खोज में चित्तौड़गढ़ चले आए। चित्तौड़गढ़ का अतीत, गौरवशाली इतिहास, वीर भूमि चित्तौड़ के वीर पुत्रों की वीरता और मातृभूमि पर मर मिटने वाले स्वतन्त्रता के वीरों की अमर कहानी पथिक जी को आकर्षित कर रही थी। अस्तु वे चित्तौड़गढ़ में इस आशय से आए कि वहां के देशभक्त तरुणों का संगठन कर देश की स्वतन्त्रता का कुछ कार्य किया जावे। वें कल्पना करते थे कि वे चित्तौड़गढ़ में देशभक्ति से मतवाले तरुणों का संगठन कर सम्पूर्ण राजस्थान में एक सबल क्रांतिकारी संगठन खड़ा करेंगे और देश को स्वतन्त्र करने का प्रयत्न करेंगे।

चित्तौड़गढ आकर वे समीप ही ओछड़ी के जागीरदार भूपालसिंह जी के सम्पर्क में आए और वहां आकर रहने लगे। जव लेखक ने पथिकजी का जीवन चरित्र लिखने का निश्चय किया तो सौभाग्यवश ठाकुर भूपसिंह ओछड़ी जीवित थे। मैने उन्हें पथिकजी के ओछड़ी के संस्मरण लिख भेजने को लिखा तो उन्होंने कृपाकर अपने संस्मरण संक्षिप्त में लिख भेजे। खेद है कि उनके घनिष्ठ मित्र पथिकजी का जीवन–चरित्र उनके जीवन काल में प्रकाशित न हो सका। संस्मरण भेजने के कुछ समय के उपरान्त ही उनका स्वर्गवास हो गया।

ओछड़ी ठाकुर साहब भूपालसिंह के अनुसार जब पथिकजी कांकरोली के समीप गांवो में काम कर रहे थे तो उन पर गुप्तचरों को संदेह हो गया अतएव उन्हें वहां से यकायक हटना पड़ा। उसी समय ओछड़ी ठाकुर भूपालसिंह के फुफेरे भाई (बुआ के लड़के) कुंवर प्रतापसिंह राठौर जो अजमेर जिले में स्थित 'नगर' ग्राम के निवासी और राजस्थान के क्रांतिकारी दल के सक्रिय थे, उन्होंने ओछड़ी ठाकुर भूपालसिंह को संकेत किया कि पथिकजी अज्ञातवास कर रहे हैं। मैं उनसे कहूंगा कि वे तुम्हारी तरफ जावें। अतएव वे ओछड़ी की ओर आवेंगे। यदि वह उधर आवें तो तुम उन्हें अपने पास आदरपूर्वक रखना और उनकी वास्तविकता किसी पर भी प्रकट न करना। अपने बड़े भाई का आदेश पाकर ओछड़ी ठाकुर भूपालसिंह पथिकजी के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। उधर गुप्तचरों की आंख बचाकर पथिकजी बिना किसी सवारी के पैदल

चलते–चलते जंगल और गांवों में भटकते हुए सुधरी गांव (चित्तौड़गढ़ जिले में हैं) आए। वहां उनका सम्पर्क सुधरी गांव के सरकारी सेणा (गांव का सरकारी चौकीदार) प्रतापपुरी गोस्वामी से हुआ। बात यह थी कि सभी गांवों के सरकारी सेणाओं को आदेश दिया गया था कि वह पथिकजी पर जो कांकरोली गांवों में सक्रिय थे और अब कहीं छिप गए हैं, नजर रक्खें और यदि उनके गांव में पहुँचे तो तुरन्त पुलिस को सूचना दें। प्रतापपुरी गोस्वामी देशभक्त और साहसी व्यक्ति था उसने पथिकजी का नाम सुन रक्खा था अतएव जब वह सुधरी गांव में पहुँचे तो प्रतापपुरी ने उनको श्रद्धा और आदर के साथ अपने पास रक्खा। प्रतापपुरी गोस्वामी चित्तौड़गढ़ के रहने वाले थे अस्तु वे पथिकजी को चित्तौड़ लाए और पथिकजी चित्तौड़ उनके मकान पर ठहर गए। चित्तौड़ पहुंचकर पथिकजी ओछड़ी ठाकुर भूपालसिंह को चित्तौड़ बुलाने का प्रयत्न कर ही रहे थे कि वे अदालती काम से स्वयं उसी दिन चित्तौड़गढ़ गए हुए थे। प्रतापपुरी गोस्वामी ने सूचना भेजी तो ठाकुर भूपालसिंह पथिकजी से मिलने उनके मकान पर आए।

ठाकुर भूपालसिंह (ओछड़ी) ने अपने संस्मरण में लिखा है– "जब मैं प्रतापपुरी गोस्वामी के मकान पर पथिकजी से पहली बार मिला तो उस समय वे जयपुरी छाप का साफा, कुर्ता, ऊपर कोट और धोती पहने हुए थे। एक तलवार, पेशकब्ज और सनाइडर बन्दूक उनके पास प्रकट में थी। वे रिवाल्वर अन्दर छिपाए हुए थे। पूरे राजपूती वेष में थे। उनका व्यक्तित्व बहुत ही तेजस्वी और प्रभावशाली था। बड़े ही प्रेम से गले मिले। उन्होंने मेरे फुफेरे भाई साहब 'नगर' कुंवर साहब प्रतापसिंह जी का बतलाया गुप्त संकेत किया। मैंने भी संकेत का उत्तर दिया और हम लोग आश्वस्त होकर बात करते रहे। उसी दिन सायंकाल को मैं उन्हें अपने साथ ओछड़ी ले आया और उसी समय वे मेरे पास ओछड़ी रहने लगे। मेरे पास वे लगभग सवा साल रहे। उस सवा साल के बहुमूल्य समय में मैंने उनसे कई बातों की जानकारी प्राप्त की।

उन्होंने मुझे एक गुप्त भाषा की लिपि भी सिखाई। जब हम दूर होते तो उसी गुप्त भाषा और लिपि में संदेशों का आदान प्रदान करते और बातचीत करते थे। परन्तु अब मैं उस लिपि को भूल चुका हूँ। जब पथिकजी ओछड़ी में रहे तो सदैव हम सभी लोगों में शिक्षा प्रचार और देशप्रेम की भावना भरा करते थे। राजपूत युवकों में देशप्रेम और शिक्षा का प्रचार करने के लिए उन्होंने ओछड़ी में परोपकारी राजपूत हितकारी सभा स्थापित की थी किन्तु उस समय बड़े बूढ़ों ने उसमें सहयोग नहीं दिया। इस कारण पथिकजी के ओछड़ी से चले जाने के बाद वह सभा समाप्त हो गई।

पथिकजी के जीवन का प्रत्येक क्षण भारत की सेवा के लिए अर्पित था। देश ही उनका सर्वस्व था। वे उसी को अपना ईश्वर मानते थे। भारत को दासता की श्रृंखलाओं से मुक्त करने के लिए वे अनेक उपाय सोचा करते और योजनाएं बनाते। उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य अंग्रेजों की सत्ता को विध्वंस कर देश को आजाद करना था। वे हम लोगों को देशभक्त बनाने का प्रयत्न करते। देश के लिए हम लोगों को त्याग और बलिदान के लिए तैयार होना चाहिए, यही शिक्षा देते। हम लोगों को प्रोत्साहन देने और हममें जागृति उत्पन्न करने के लिए कविताएं बनाते। उन कविताओं में देशप्रेम की भावना कूट–कूट कर भरी होती। विप्लव करने के लिए बन्दूक बनाना, कारतूस भरना और तैयार करना, बम बनाना और अन्य अस्त्र–शस्त्रों को बनाने और बनाने की कला और विधि उन्हें भली भांति आती थी। एक बार हम लोग अपने गांव की

नदी के किनारे पहुँचे, वहां उन्होंने एक बम बनाकर जोर से नदी की चट्टान पर फेका। वह प्रबल वेग और भयानक आवाज के साथ फटा और वह चट्टान टूटकर टुकड़े–टुकड़े हो गई।

जब वह मेरे पास रहे थे तो उनके पास कई गुप्त चिट्ठियां भी आती जाती थी। उनका सम्पर्क भारत के अन्य क्रांतिकारियों से बना हुआ था। प्रताप के संपादक श्री गणेशशंकर विद्यार्थी से उनकी बहुत अधिक घनिष्ठता थी। राव साहब खरवा (श्री गोपालसिंह) को निर्दोष सिद्ध करने के लिए वे एक लेखमाला को प्रकाशित करना चाहते थे। गणेशशंकर जी ने उस लेखमाला को प्रकाशित करना स्वीकार कर लिया। इसके पश्चात् पथिकजी ने वह लेखमाला लिखना शुरु की। उसकी सामग्री इकट्ठा करने में बहुत समय लग गया। वह लेखमाला मेरे द्वारा ही लिखाई गई थी। परन्तु जब लेखमाला तैयार हुई और उसे रजिस्ट्री से प्रताप प्रेस भेजा गया तो गणेशशंकर जी का उत्तर मिला कि अभी हाल में सरकार ने एक ऐसा नया कानून बना दिया हैं जिसके कारण हम इस लेखमाला को प्रकाशित नहीं कर सकते।

पथिकजी ओछड़ी से गवर्नर जनरल को बड़े कड़े निर्भीक परन्तु तथ्यों से भरे पत्र लिखते। वे पत्र वे यहां के पोस्ट आफिस से न डलवाकर रतलाम अथवा अजमेर से डलवाते थे। यद्यपि पथिकजी का हैड क्वार्टर मेरे यहां था परन्तु जिला चित्तौड़ के पुठौली के ठाकुर साहब श्री रामप्रतापसिंह जी और ठाकुर यशवंतसिंह जी गांव दय्यावली (जिला चित्तौड़) के साथ तथा रेहावड़ा के जागीरदार से भी उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। वे कभी कभी उन दोनों के पास भी जाकर रहते थे। वहां भी वे देशप्रेम और शिक्षाप्रचार की सभी को शिक्षा देते थे।

उनकी प्रेरणा से चित्तौड़ में 'विद्या प्रचारिणी सभा' की स्थापना हुई थी। उस सभा के सदस्यों के साथ भी उनका घनिष्ठ सम्पर्क था। पथिकजी कभी–कभी कई दिनों तक चित्तौड़ जाकर रहते थे और विद्या प्रचारिणी सभा के नगर कीर्तन और वार्षिक अधिवेशन बड़ी धूमधाम से करवाते थे। मैं, ठाकुर साहब पुठौली तथा ठाकुर यशवंतसिंह जी सभी उस सभा के सदस्य थे। इसलिए हम भी उनमें सम्मिलित हुआ करते थे। श्री भीमराव गडोलिया, श्री हंसराम, पुरीजी गुप्ताई, श्री गोविंदसिंह जी पंचोली, श्री विलासीराम जी अप्रवास, तथा सेवालास जी अप्रवास विद्या प्रचारिणी सभा के प्रमुख सदस्य थे।

बात यह थी कि पथिकजी विद्या प्रचार तथा पुस्तकालय आन्दोलन द्वारा चित्तौड़गढ़ में देशभक्त और कर्मठ युवकों का एक संगठन खड़ा करना चाहते थे, जिसके द्वारा वे राजस्थान में एक क्रांतिकारी संगठन की स्थापना कर सकें। किन्तु उन्हें चित्तौड़गढ़ में आवश्यक साधन और सहायता नहीं मिल सकी। यही कारण था कि एक बार उन्होंने कहा "चित्तौड़वासियों का खून ठंडा पड़ गया है।" उन्होंने चित्तौड़गढ़ के समीपवर्ती स्थानों में भी विद्या प्रचारिणी सभा की शाखाएं तथा सम्बधित संस्थाएं स्थापित कीं। वे शिक्षण संस्थाओं के द्वारा देशभक्त युवकों का संगठन कर लेना चाहते थे। क्योंकि पथिकजी उस समय अज्ञातवास में थे इस कारण अपने को अधिक प्रकाश में नहीं लाना चाहते थे। यही कारण था कि वे अन्य लोगों को विद्या प्रचारिणी सभा के कार्य में आगे रखते किन्तु मार्गदर्शन और नेतृत्व उन्हीं का था। उनकी प्रेरणा से ही स्वामी सत्यदेव परिव्राजक और पंजाब केसरी लाला लाजपतराय, चित्तौड़ में विद्या प्रचारिणी सभा के अधिवेशन के अवसर पर आए थे।

हम यह पहले ही लिख चुके हैं कि चित्तौड़ विद्या प्रचारिणी सभा से सम्बन्धित अन्य स्थानों पर भी विद्या प्रचारिणी सभाएं स्थापित हो चुकी थीं। साधु सीताराम दास तथा बिजोल्यां के अन्य कार्यकर्ताओं ने नायब मुंसरिम श्री डूंगरसिंह भाटी की सलाह से बिजोल्यां में भी विद्या प्रचारिणी स्थापित कर दी। पथिकजी ने चित्तौड़ विद्या प्रचारिणी सभा के वार्षिक अधिवेशन पर बिजोल्यां की विद्या प्रचारिणी सभा के कार्यकर्ताओं को भी आमंत्रित किया। साधु सीताराम दास तथा मगनलाल शर्मा बिजोल्यां विद्या प्रचारिणी सभा के प्रतिनिधि की हैसियत से चित्तौड़ पहुँचे और पथिकजी से मिले।

बात यह थी कि बिजोल्यां ठिकाने के किसान ठिकाने के अत्याचारों से बहुत दुखी थे। कई बार उन्होंने ठिकाने से संघर्ष किया, आन्दोलन किया। किन्तु सबल और योग्य नेतृत्व के प्रभाव में किसान आन्दोलन दबा दिया गया था। साधु सीतारामदास वहां के प्रमुख कार्यकर्ता थे। उस समय राव साहब के नाबालिग होने के कारण ठिकाना कार्ट आफ वार्डस के आधीन था और वहां मोही निवासी भी डूगरसिंह भाटी नायब मुंसरिम के पद पर काम करते थे। श्री डूंगरसिंह भाटी (मोही) पथिकजी से भली भांति परिचित थे। जब टाटगढ़ जेल से पथिकजी निकल भागे थे और कांकरोली के समीप भाणा गांव में छिपकर रहते थे। उस समय वे कुछ समय तक श्री डूंगरसिंह भाटी के पास मोही में भी छिप कर रहे थे। भाटी पथिकजी के साहस, शौर्य, विद्वता और राजनैतिक चातुर्य को देखकर उनके अनन्य भक्त बन गए थे। उन्होंने साधु सीताराम दास को सलाह दी कि किसान संगठन को दृढ़ बनाने और ठिकाने के विरुद्ध संघर्ष छेड़ने के लिए उन्हें योग्य नेतृत्व की आवश्यकता है। पथिकजी चित्तौड़ के पास ओछड़ी ठाकुर के पास अज्ञातवास कर रहे हैं। यदि वे किसी प्रकार पथिकजी को बिजोल्यां ला सकें तो किसान आन्दोलन प्रभावशाली बन सकता है। अस्तु जब साधु सीताराम दास को उनका निमंत्रण मिला तो साधु सीताराम दास तथा मगनलाल शर्मा चित्तौड़गढ़ पहुँचे।

साधु सीताराम दास तथा मगनलाल शर्मा पथिकजी से एकान्त में मिले। उन्होंने पथिकजी से कहा– ब्रिटिश सरकार ने आपकी गिरफ्तारी के लिए पंद्रह हजार रुपये का इनाम घोषित किया है। ऐसी दशा में रेलवे के किनारे आपका रहना खतरे से खाली नहीं है। अतएव आप हमारे यहां बिजोल्यां चलिए वहां आवागमन की कोई भी सुविधा नहीं है। हमारा बिजोल्यां जो ऊपरमाल आचल के नाम से प्रसिद्ध है मेवाड़ का 'अंडमान' है। वहां की जनता सुसंगठित है और अपने दुखों से त्राण पाने के लिए सब प्रकार का बलिदान करने को तैयार है।

योग्य नेतृत्व के अभाव में हम लोग दबा दिए गए हैं। यदि आप जैसे व्यक्ति हमारा नेतृत्व करें तो हम लोग फिर ठिकाने के विरुद्ध आन्दोलन करने को तैयार हैं। बिजोल्यां के किसानों में आत्मबलिदान की भावना हैं, वे साहसी हैं, ठिकाने के अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करने को तैयार हैं, केवल हमें आपके तेजस्वी और क्रांतिकारी नेतृत्व की आवश्यकता हैं। पथिकजी बिजोल्यां के सम्बन्ध में पूरी जानकारी प्राप्त कर लेना चाहते थे अतएव दो तीन दिन तक वे उन दोनों से बात करते रहे। अन्त में उन्होंने कहा कि मैं बिजोल्यां के किसानों की सेवा करने को तैयार हूँ परन्तु बिजोल्यां में कार्यकर्ता कहां हैं? आप लोगों के कहने के अनुसार वहां शिक्षित व्यक्तियों का अभाव है ऐसी दशा में कार्यकर्ता कहां से जुटाए जावेंगे। मैं वहां अकेला जाकर क्या करूंगा?

तब श्री सीतारामदास ने कहा मेरे विद्यार्थी लोग जो नवयुवक भी है और उत्साही भी हैं, उनमें से मैं दस योग्य चरित्रवान और उत्साही युवकों को आपके नेतृत्व में कार्यकर्ता बनने के लिए तैयार कर दूंगा और मैं स्वयं उनके साथ कार्यक्षेत्र में उतरने के लिए तैयार हूँ। इनके अतिरिक्त मेरे थोड़े से और साथी हैं वे भी कार्यक्षेत्र में उतरने के लिए तैयार हैं। फिर जब आप हमारा नेतृत्व करना स्वीकार लेंगे तब फिर हममें एक उत्साह और विश्वास की लहर प्रवाहित होगी और कार्यकर्ताओं की कोई कमी नहीं रहेगी।

पथिकजी एक सफल संगठनकर्ता थे। उन्होंने वहीं से अपना कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। श्री साधु सीताराम दास तथा मगनलाल शर्मा से एक लम्बा प्रतिज्ञा–पत्र लिखवाया और उस पर उन दोनों के हस्ताक्षर करवाकर उनसे कहा– मैं बिजोल्यां के किसानों की सेवा करने के लिए शीघ्र ही आऊंगा, परन्तु तुम्हारे साथ चलने से कभी तुम्हें खतरे का सामना करना पड़ सकता हैं अतः तुम चलो मैं आ–जाऊंगा।

साधु सीताराम दास तथा मगनलाल शर्मा अपना उद्देश्य सफल होते देख प्रसन्न हो बिजोल्यां लौट गए। वहां जाकर वे पथिकजी की प्रतीक्षा करने लगे। पथिकजी ने उन्हें सावधान कर दिया था कि वे उनका पूर्व परिचय किसी को भी न दें।

ठीक एक मास पश्चात सायंकाल का समय था। साधु सीताराम दास विद्या प्रचारिणी सभा के कार्यालय में कुछ कार्य कर रहे थे। उन्होंने दूर से देखा की ऊँट पर सवार पथिकजी आ रहे हैं। उनके प्रभावशाली मुख पर राजपूती दाढ़ी बहुत आकर्षक लग रही थी। सिर पर साफा, कोट की दोनों जेबों में कारतूस, गले में छः फायर का रिवाल्वर, पैर तक लटकती हुई तलवार उनका बलिष्ठ शरीर, साहस और शौर्य की आभा से दीप्त मुखमंडल और आंखों की चमक सबने मिलकर उनके व्यक्तित्व को बहुत अधिक प्रभावशाली बना दिया था। बिजोल्यां पहुँचकर उन्हें ऐसा स्थान मिला जहां रहकर वे एक नई क्रांति को जन्म दे सकते थे। अतएव वे बिजोल्यां में जम गए।

चतुर्थ अध्याय

बिजोल्यां का किसान सत्याग्रह

बिजोल्या तत्कालीन मेवाड़ राज्य का एक प्रथम श्रेणी का ठिकाना था। इन ठिकानों को थोड़े माल और फौजदारी के अधिकार प्राप्त थे। इसे ऊपरमाल या उत्तम शिखर भी कहते है। उदयपुर डिवीजन के भीलवाड़ा जिले के पूर्व में बिजोल्यां का परगना स्थित है। मेवाड़ के पूर्व अंचल में स्थित बिजोल्यां को ऊपरमाल तथा उत्तम शिखर इस कारण कहते हैं कि यह आस पास के 500 फीट ऊंचा एक विस्तृत पठार है। इस पठार की भूमि अत्यन्त उर्वरा मालवा की भूमि के सदृश है। वास्तव में यह मालवा से मिली हुई है। अतएव ऊंचा पठार होने के कारण इसे ऊपर और अत्यन्त उर्वरा भूमि होने के कारण इसे माल कहते है। दोनों शब्द मिलाकर यह प्रदेश ऊपर माल या उत्तम शिखर कहलाता है। वास्तव में ऊपरमाल का यह प्रदेश अत्यन्त उपजाऊ प्रदेश और धनधान्य से सम्पन्न है। यद्यपि इस प्रदेश में भील, धानाड़ा, लुहार, सिलावट, राव, चारण, राजपूत, वैश्य, ब्राहम्ण, साधु, वैरागी, सुनार और मुसलमान सभी जातियों के लोग रहते है। किन्तु यहाँ धाकड़ जाति की प्रधानता है। खेती यहाँ का मुख्य धन्धा है। यहाँ के किसान स्वाभिमानी, कष्टसहिष्णु और निर्भीक हैं। यही कारण है कि भारत में किसान सत्याग्रह का जन्मस्थान प्राप्त करने का श्रेय बिजोल्यां को ही प्राप्त हुआ है। भारत में महात्मा गांधी के नेतृत्व में जिस सत्याग्रह आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था उसका शुभारम्भ करने का श्रेय महात्मा गांधी के सत्याग्रह आंदोलन के पूर्व ही बिजोल्यां को प्राप्त हो चुका था।

बात यह थी कि बिजोल्यां ठिकाने के अत्याचार और शोषण का वैसा भयंकर स्वरुप कहीं देखने को नही मिल सकता था। लगान निश्चित करने के लिए 'कूता' प्रथा प्रचालित थी। ठिकाणे के कर्मचारी खड़ी फसल का कूता अनुमान करते थे और किसान को 'कूता' की हुई फसल अपनी गाड़ियों में भरकर बिजोल्या लेकर जमा करनी पड़ती थी। ठिकाने के कर्मचारी मनमाना कूता करते। कूता करते समय किसान का भयंकर दोहन होता। कूता के द्वारा केवल अन्धाधुन्ध ऊंची लगान ही नही लिया जाता था, ऊपर से अनेक 'लागते' भी वसूल की जाती थी। बिजोलियां में कुल मिलाकर उस समय किसानों से चौरासी लागतें वसूल की जाती थीं।

लागतों का इतिहास भी विचित्र था। यदि किसी भी घटनावश अथवा कारणवश किसान ने एक–दो बार कोई भेंट स्वेच्छा से बिजोलियां राव साहब को दे दीं तो फिर वह सदैव के लिए लागत बन जाती और उसे विवश होकर फिर उसे सदैव देना पड़ता था।

एक बार आवदा के पटेल के गन्ने का अच्छा गुड़ बना। उसने वह गुड़ लाकर रावजी को भेंट किया। रावजी बहुत प्रसन्न हुए। दूसरे वर्ष उन्होने फिर गुड़ मंगवाया और तीसरे वर्ष तो गुड़ की भेली के नाम से वह लागत (टैक्स) समस्त ऊपरमाल के पटेलों से वसूल किया जाने लगा।

सांभरी की लाग का भी अनोखा इतिहास था। एक बार मीनपूर के भील जंगल से एक जीवित सांभरी पकड़ लाए। एक दो वर्ष होली के समय ठिकाने से सांभरी के मांग की गई। सांभरी न मिलने पर कुछ खरगोश और सवा रुपए (टैक्स) लागत देना स्वीकार कराया गया और उसका नाम सांभरी लाग पड गया।

ज्वार, मक्का के भूट्टे, गन्ने का रस, अफीम, पोस्त, गेहूं की बालियां, जलाने की लकड़ी, जागीरदार के पैदा होने, विवाह और मरने का सारा खर्च लागत अथवा टैक्स के नाम से बंधा हुआ था जो निर्धन किसानो को देना पड़ता था। यदि बाईजी या कुंवरजी का विवाह हो तो विशेष टैक्स देना पड़ता था। जब बिजोल्यां का कोई राजा मरता और उसके उत्तराधिकारी की गद्दीनशीनी होती तो ठिकाने को मेवाड़ दरबार को 60 हजार रुपए तलवार बंधाई देने पड़ते थे। यह तलवार बंधाई की 60 हजार रुपए की रकम भी निर्धन प्रजा से वसूली जाती थी। लागतें इतनी अधिक थी और क्रूरता से वसूली जाती थी कि किसान का भयंकर शोषण होता और वह दमन और शोषण का अनवरत शिकार होता रहता था।

ठिकानों का अत्याचार अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका था। किसान ठिकाने के शोषण और अत्याचार से कराह रहे थे। उसी समय सम्वत 1954 (सन् 1897) में श्री गिरधरपुरा के गंगारामजी धाकड़ के पिता के मृत्यु भोज में समस्त उत्तमशिखर के किसान एकत्रित हुए। मेवाड़ में धाकड़ जाति में यह प्रथा है कि मृत्यु भोज में समस्त जाति को आमंत्रित किया जाता है। जब किसान एकत्रित हुए तो यह स्वाभिक ही था कि वे अपने दुख दर्द की चर्चा करते। जाति के बड़े–बूढ़ों ने निश्चय किया कि इस अत्याचार का प्रतिकार करने के लिए कुछ किया जाना चाहिए। अतएव उन्होनें प्रत्येक गाँव के खास खास आदमियों को रोक लिया। दूसरे दिन सभी ने मिलकर इस अत्याचार और शोषण का अन्त करने के उपायों का विचार किया। सर्व सम्मति से यह निश्चय किया गया कि बेरीसालनिवास के नानजी पटेल और गौपालनिवास के ठाकरी पटेल उदयपुर जाकर महाराणा को किसानों की कष्ट गाथा सुनाकर कष्ट निवारण के लिए प्रार्थना करें। दोनो किसानों ने अपनी खेती की परवाह न कर किसानो को उस अत्याचार और शोषण से मुक्त कराने के लिए उदयपुर प्रस्थान किया। उदयपुर में उन्हें 6 या 7 महीनें लगे। महाराणा जी श्री फतेहसिंह ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और असिस्टेंट माल हाकिम को जांच कमीशन के रुप में नियुक्त किया।

असिस्टेंट माल हाकिम बिजोल्यां आए, उन्होनें कस्बे के समीप गाँव में डेरा डाला, और ठिकानों से लागतों के बारे में लिखित जानकारी चाही। राव साहब ने उनके ठहरने का प्रबन्ध किया था। उन्होने अपने एक कर्मचारी को वहा नियुक्त कर दिया जो बगीचे के बाहर दरवाजे पर खेमा लगाकर रात को रहने लगा जो किसी भी किसान को हाकिम से नही मिलने देता था। इस प्रकार दो तीन महीने तक यह झगड़ा चलता रहा। लागतों के सम्बन्ध में ठिकानों के पास कोई भी लिखित जानकारी नही थी, अतएव ठिकाणा टालता रहा। जब ठिकाना उन लागतों के सम्बन्ध में कोई लिखित प्रमाण उपस्थित न कर सका तो कमीशन ने ठिकाने के विरूद्ध फैसला किया। परन्तु महाराणाओं ने उस पर अधिक ध्यान नही दिया। केवल कुछ चेतावनी भर दी गई और एक दो साधारण लागतों को कम कर दिया।

उधर बिजोल्यां के तत्कालीन रावजी श्री कृष्णसिंह ने भेद नीति से काम लिया। कुछ किसानों को पटेल और नम्बरदार बना दिया और कुछ को अंगरक्षक बना लिया। कुछ का और तरह से सम्मान किया। इस प्रकार किसानों में भेद उत्पन्न कर दिया और ठाकरी और नानजी को जो उदयपुर महाराणा साहब के पास प्रार्थना करने गए थे उत्तमशिखर से निर्वासित कर दिया। उन दोनों की खेती नष्ट हो गई, किन्तु कोई उनका सहायक नही हुआ। कई वर्षों बाद वे रावजी को रिश्वत तथा जुर्माना देकर अपनी मातृभूमि के दर्शन कर सके।

उसी समय संवत 1956 में भारत व्यापी भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा। बिजोल्यां राव श्री कृष्णसिंह जी ने गोविन्दसागर बांध बनाकर लोगों को मजदूरी में अनाज देकर उनकी सहायता की तथा जो किसानों के नेता थे उनसे बिना काम लिये उन्हें अनाज दिया। इस प्रकार उन्होनें किसानों के संगठन को थोड़ा कमजोर कर दिया।

संवत 1960 में रावजीं ने एक नया टैक्स 'चंवरी' नामक और लगा दिया। प्रत्येक शादी करने वाले को 5 रुपए रावजीं को देने पड़ते थे। किसानों ने इस नए टैक्स का विरोध किया। उन्होनें लड़कियों के विवाह बन्द कर दिए। दो वर्ष तक कोई विवाह नही हुआ। संवत 1962 में दो सौ लड़कियों को लेकर वो शादी योग्य हो गई थी किसान रावजीं के पास आए और प्रार्थना की कि बिना टैक्स दिए उन्हें विवाह करने की आज्ञा दी जावे। किन्तु रावजी ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार नही किया। किसानों ने निश्चय किया कि वे उत्तमशिखर को ही छोड़ देंगे। बैलगाड़ियों में अपना सामान भरकर वे ग्वालियर की ओर चल पड़ें। अब रावजी को होश हुआ और वे घोड़े पर चढंकर उन्हे मनाने गए। रावजी ने चंवरी टैक्स छोड़ दिया और किसानों की खुशामंदकर उन्हें जाने से रोक लिया। कुछ समय के उपरान्त राव कृष्णसिंह निस्संतान मर गए। महाराणा फतेहसिंह ने कुछ दिनों तो उनके निकट सम्बन्धी पृथ्वीसिंह को स्वीकार नही किया परन्तु फिर स्वीकार कर लिया और सन् 1906 में वे गद्दी पर बैठे। गद्दीनशीनी के समय तलवार बंदी के एक लाख रुपए उन्हें मेवाड़ दरबार को देने थे। ठिकाने ने उस रुपए को इकट्ठा करने के लिए लगान को बढानें तथा तलवार बंदी का टैक्स किसानों से उगहाने का प्रयत्न किया। श्री फतहकरण चारण, ब्रहम्देव तथा साधु सीताराम दास के नेतृत्व में किसानों ने इसका संगठित विरोध किया। संवत 1969 (1913) मार्च महीने में उत्तरशिखर के लगभग एक हजार किसान रावजी से इस सम्बन्ध में मिलने के लिए उनके महलों पर गए। दिन भर वे उनके महलों पर बैठे रहे किन्तु रावजी उनसे नही मिले। सांयकाल चार बजे जब शिकार के बहाने घोड़े पर बैठकर वे महल के बाहर निकले तो भी वे किसानों से नही मिले। किसानों को रावजी का यह व्यवहार बुरा लगा और साधु सीताराम दास के नेतृत्व में उन्होनें वहीं यह निश्चय किया कि अगले वर्ष बिजोल्यां ठिकाने की भूमि पर कोई किसान खेती नहीं करे और अपने खाने के लिए समीपवर्ती ग्वालियर तथा मेवाड़ राज्य के खालसे की भूमि को जोता जाये।

इसका परिणाम यह हुआ कि 1913 में सारा उत्तमशिखर का क्षेत्र पड़त (बिना जुता) पड़ा रहा और साधु सीताराम के नेतृत्व में पंद्रह हजार किसानों ने भूमि को पड़त रक्खा। एक इंच भूमि भी जोती बोई नही गई। इसका परिणाम यह हुआ कि ठिकानो को लगान मिलना बन्द हो गया और अन्न की कमी के कारण उस प्रदेश में भुखमरी का दृश्य उपस्थित हो गया।

अन्त में रियासत ने शोषण दमन करना प्रारम्भ किया। मेवाड़ राज्य किसानों की इस जागृति से सशंक हो उठा। उसने भी ठिकाने की सहायता की। भयंकर दमन के कारण कुछ लोग दब गए। चौरासी प्रकार की लागों बेगारो में से 6 लागतें छोड़ दी गई। आन्दोलन करने वालों में से श्री फतहकरण जी चारण तथा श्री ब्रहम्देव दाधीच को देशनिकाला हुआ, और दूसरे प्रमुख कार्यकर्त्ताओं को जेल में रख दिया गया तथा कुछ को कठोर यातनाए देकर दबा दिया गया। इस प्रकार बिजोल्यां का यह आन्दोलन दब गया, परन्तु अन्दर ही अन्दर प्रतिरोध की अग्नि प्रज्जविलत थी। ठिकाने के प्रति किसानों में रोष और घृणा घनीभूत हो गई।

इसी समय राव पृथ्वीसिंह का देहासवान हो गया और बिजोल्यां का ठिकाना मेवाड़ राज्य ने कोर्ट आव वार्डस के आधीन ले लिया। कारण यह था कि राव पृथ्वीसिंह के पुत्र केसरीसिंह की बाल्यावस्था थी। राज्य ने बालक केसरीसिंह की नाबालगी में ठिकाने का प्रबंध मुंसरमात के आधीन कर दिया।

जब कि फतहकरण और ब्रहम्देव और साधु सीतारामदास के नेतृत्व में बिजोल्यां के किसानों का आन्दोलन हुआ और किसानों पर घोर दमन हुआ उसी समय श्री माणिक्यलाल वर्मा के हृदय में ठिकाने के अत्याचारों और दमन ने सामन्तवादी प्रथा के विरूद्ध गहरी घृणा उत्पन्न कर दी। वे ठिकानों के कर्मचारी थे। बाद में उन्होने ठिकानों की सेवा से त्याग–पत्र दे दिया और पथिकजी के नेतृत्व में कार्य करने लगें। वर्मा जी के पिताश्री भी ठिकाने के स्वामिभक्त कर्मचारी थे। पथिकजी का उन पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनके विरोधी राव साहब की नाराजगी की तनिक भी परवाह न कर वे किसानों का कष्ट मिटाने के लिए आन्दोलन में सम्मिलित हो गए। उस दिन से आज तक वर्मा जी किसानों और पीड़ितो की सेवा में लगे हुऐ है। मेवाड़ प्रजामंडल के द्वारा उन्होने मेवाड़ में राजनैतिक चैतन्य उत्पन्न किया और आज भी वे पीड़ित समुदाय की सेवा में जुटे है।

जब बिजोल्यां ठिकाने पर राव जी की बाल्यावस्था में मुंसरमात स्थापित की गई तो श्री अमरसिंह जी राणावत मुंसरिम और मोही के श्री डूंगरसिंह भाटी नायब मुंसरिम नियुक्त हुए। हमारे चरित्र नायक श्री विजयसिंह पथिक जब टाटगढ़ से भागे थे तो श्री डूंगरसिंह भाटी के पास भी अज्ञातवास में रहे थे। श्री डूंगरसिंह पथिकजी के साहस, योग्यता और संगठन शक्ति से परिचित थे। उनके पास एक क्रान्तिंकारी युवक ईश्वरदानजी काम करते थे जो पथिक जी के शिष्य और अन्नय भक्त थे। यह तो हम पहले ही लिख चुके है कि श्री डूंगरसिंह भाटी के संकेत पर ही श्री साधु सीताराम दास तथा मगनलाल शर्मा विद्या प्रचारिणी सभा चित्तौड़ के अधिवेशन पर श्री विजयसिंह पथिक को बिजोल्यां के किसानों का संगठन कर ठिकाने के विरूद्ध आन्दोलन का संचालन करने के लिए आमंत्रित करने गए थे और उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर पथिक जी ओछड़ी से बिजोल्यां आए।

पथिकजी के नेतृत्व मे किसान आन्दोलन

जब पथिक जी बिजोल्यां पहुंचे और विद्या प्रचारिणी सभा के भवन में ठहरे। प्रातःकाल गांव वालों ने उन्हें वीर वेष में देखा तो बहुत आश्चर्यचकित हुए और साधु सीताराम दास जी से पूछा कि ये कौन हैं। साधु सीताराम दास ने अपनी पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार उनका ठीक परिचय न देकर कहा कि विद्या प्रचारिणी सभा ने पाठशाला के लिए मास्टर बुलाए है। अब यह पाठशाला में बच्चों को पढ़ाया करेंगे।

गांव के बाहर मांजी साहब की धर्मशाला में ही विद्या प्रचारिणी सभा का कार्यालय था तथा पाठशाला चलती थी। पथिकजी वहीं रहने लगे। उनके लिए भोजन साधु सीताराम दास जी के यहा से जाता था। चार पांच दिन बाद जब साधु सीताराम दास भोजन लेकर गए तो भोजन वापस कर दिया और कहा कि मैने भोजन रामद्वारे में कर लिया है। पास ही में रामस्नेही साधुओं का रामद्वारा था। वे वहीं भोजन करने लगे। साधु सीताराम दास तथा अन्य लोगो ने आपत्ति की कि साधुओ का भोजन न करना चाहिए उन्हें तो देना चाहिए। इस पर पथिकजी ने कहा कि

साधुओं का महाप्रसाद तो सबको खाना चाहिए। जब सभी ने बहुत जिद की तो कहा कि यह रामद्वारे सार्वजनिक संस्थाएं है। समाज इन पर इस कारण व्यय करता है कि साधु लोग समाज को चैतावे। मै भी समाज की सेवा करता हूं अतएव मै भी साधुओं की तरह समाज के दिए हुए धन का उपभोग करने का अधिकारी हूं। फिर मैं नही चाहता कि मेरे निर्वाह का बोझा तुम लोगों पर पड़े। तब से वे बराबर रामद्वारे में ही भोजन करने लगें। बिजोल्या पहुंचकर पथिकजी ने पाठशाला का कार्य संभाला। पाठशाला को चलाने में उनका एक ही ध्येय था, बालकों का सर्वांगीण विकास करना और उनमें देशभक्ति की भावना उत्पन्न करना जिससे जब भी देश को उनकी आवश्यकता हो वे देश के लिए अपना सब कुछ अर्पण करने को तैयार रहें। वे बालकों को नियमित रुप से पढाते और उनमें देश भक्ति के भाव भरते। उनका शारीरिक विकास करने के लिए उनको कवायद, परेड, व्यायाम कराते तथा अखाड़े में कुश्ती लड़वातें। श्री शोभालाल गुप्त जो आज दैनिक हिन्दुस्तान के सहकारी संपादक है वो भी उस समय पथिकजी के शिष्य थे। कुश्ती लडते हुए उनका हाथ टूट गया फिर वह हाथ ठीक नही हो सका। पथिकजी अपने शिष्यों में ज्ञान के साथ वीरता, साहस, शौर्य, स्वाभिमान और देश–सेवा की भावना भरने का उपक्रम करने लगे। कभी–कभी वे अपने शिष्यों को जंगल में ले जाने और उन्हें फौजी शिक्षा देने लगे। पथिकजी सम्भवतः उन बालकों को भावी गुरिल्ला युद्ध की शिक्षा देना चाहते थे। क्योंकि उनका विश्वसास था कि बिना क्रांन्ति के देश आजाद नही होगा। उन्होंने विद्यार्थियों की एक खाकी फौजी वर्दी बनवाई और उनकी एक सेना तैयार कर ली। बिजोल्यां आन्दोलन में इन विद्यार्थियों ने बहुत प्रशंसनीय कार्य किया।

किन्तु पथिक बिजोल्यां में केवल पाठशाला चलाने नही आए थे। उनके मुख्य ध्येय किसानों को संगठित कर उनके कष्टों को दूर करना था। एक बार वे उस प्रदेश में जनता को जगा देना चाहते थे कि सोई हुई जनता को जगाकर उसे संगठित सामन्तशाहो से मोर्चा लिया जावे। अस्तु दिन में वे पाठशाला के द्वारा बालकों को और युवकों को तैयार करते और रात्रि में वे साधु सीताराम दास तथा विद्या प्रचारिणी सभा के अन्य कार्यकर्त्ताओं के साथ गांव–गांव घूमते। जब वे रात्रि में गांवो को जाते तो किसान अपनी कष्ट गाथा उन्हें सुनाते। वे उनकी बातें सुनते और कहते कि संसार में निर्बालो के लिए कोई स्थान नही है। सभी उनका शोषण करते है अतएव सबल और तेजवान बनने की आवश्यकता है। तुम लोगों में यदि संगठन हो जावे तो बिजोल्यां के ठिकाने की कोई हस्ती ही नही है बड़े से बड़े साम्राज्य को ढाया जा सकता है। अस्तु यदि चाहते हो कि ठिकाने के अत्याचारों और शोषण से तुम्हें मुक्ति मिले तो संगठित हो जाओ। उपयुक्त समय पर ठिकानो से मोर्चा लिया जाएगा। पथिकजी इस प्रकार रात्रि में घूम–घूमकर किसानों में नई चेतना और जागृति उत्पन्न करने लगे।

किसानों के जागरण का कार्य सरल नहीं था। ऊबड़–खाबड़ पहाड़ी प्रदेश, रास्तो का प्रभाव और सारा प्रदेश वन से आच्छादित, फिर भी पथिक जी रात्रि को ही गांवो में किसानो से सम्पर्क स्थापित करते। कारण यह था कि वे ठिकाने तथा मेवाड़ राज्य को यह ज्ञात नहीं होने देना चाहते थे कि किसानो का संगठन किया जा रहा है। पथिकजी जैसे क्रातिंकारी नेता यह भली–भातिं जानते थे कि बिना दृढ़ संगठन के संघर्ष छेड़ देना राजनीतिक अदूरदर्शिता होगी। किसान क्षणिक आवेश में आकर ठिकाने तथा राज्य से भिड़ जावेगा, किन्तु संगठन के अभाव में वह मोर्चो पर अधिक समय तक ठहर न सकेगा। संघर्ष में असफलता होगी, और किसानो में

सर्वत्र निराशा और शिथिलता फैल जावेगी, जैसा कि पिछले आन्दोलन में हो चुका था। अस्तु वे किसानो का सफल संगठन खड़ा कर देना चाहते थे। रात्रि में वे गांवो में इसलिए जाते थे कि जिससे ठिकाने तथा मेवाड़ सरकार को संदेह न हो और उन्हें संगठन करने का अवसर मिल जावे। रात्रि में जब वे उस ऊबड़–खाबड़ पहाड़ी प्रदेश में घूमते थे तो मार्ग की कठिनाइयां तो थी ही खाने पीने का कोई भी ठीक प्रबन्ध नहीं रहता था। जहां जो भी मिलता वहीं खा लेते। निर्धन ग्रामीणों के घरों में मिट्टी के बर्तनों में मक्के की रोटी नमक और कांदे (प्याज) से खाते और किसानों को संगठित करने का काम करते रहते। कभी–कभी वह भोजन भी नसीब नहीं होता परन्तु उन्हें इसकी कोई चिन्ता नही थी। वे उस प्रदेश के किसानों को संगठित कर उनमें नव चेतना जागृत करने के लिए जुट गए।

विद्या प्रचारिणी सभा के साप्ताहिक अधिवेशन रात्रि में होते थे। अब विद्या प्रचारिणी सभा के साप्ताहिक अधिवेशनों में मुख्य वक्ता पथिकजी होते। उनके धाराप्रवाह ओजस्वी भाषणों को सुन श्रोता गदगद हो जाते, थोड़े समय के लिए तो वे आत्मविभोर हो उठते। क्रमशः पथिकजी देश की गिरी हुई दशा, किसानों की दुर्दशा और भारतीयों के दासत्व अपमानजनक जीवन को व्यतीत करने पर विवश होने का करुण चित्र उपस्थित करने लगे। पंचायतो के द्वारा किस प्रकार किसानों को अपने कष्टों से मुक्त किया जा सकता है, देश को स्वतन्त्र बनाने के लिए हमें त्याग और बलिदान करना होगा, इस मंत्र से वे बिजोल्यां के निवासियों को अभिषिक्त करने लगे।

इधर पथिकजी नायब मुंसरिम श्री डूंगरसिंह भाटी तथा श्री ईश्वरदान की सहायता और उनके सम्पर्क में बिजोल्यां ठिकाने की राज्य से होने वाली लिखा–पढ़ी की जानकारी प्राप्त करने लगे। यहां तक की राज्य के साथ जो ठिकाने की लिखा–पढ़ी होती वह सारी की सारी पथिकजी के हाथ से निकलने लगी। बात यह थी कि पथिकजी एक विलक्षण व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे। वे एक सफल नेता और दूदर्शी राजनीतिज्ञ थे। वे आन्दोलन चलाने के पूर्व सभी प्रकार की तैयारी कर लेना चाहते थे।

पथिकजी ने क्रमशः बिजोल्यां ठिकाने के किसानों को जो पहले आन्दोलनों के समय होनवाले दमन के कारण भयभीत थे, निडर और साहसी बना दिया और उनका एक दृढ़ संगठन खड़ा कर दिया।

पथिकजी यह समझ गये थे कि अभी तक जो किसानों के आन्दोलन असफल हुए उसका एकमात्र कारण यह था कि किसानों का कोई दृढ़ संगठन नही था। जब ठिकाने का अत्याचार और दमन चरम सीमा पर पहुच जाता और वह असहनीय हो उठता तो किसान उत्तेजनावश सामूहिक आन्दोलन करते, किन्तु ठिकाने वाले फूट डालकर और दमनकर उसको समाप्त कर देते। किसानों का कोई संगठन और नेता न होने के कारण उनका त्याग और बलिदान व्यर्थ हो जाता। अतएव पथिकजी ने किसानों का पंचायत के रुप में एक सबल और दृढ़ संगठन खड़ा कर दिया।

विद्या प्रचारिणी सभा की पाठशाला के लिए उन्होनें राज्य से आर्थिक सहायता भी प्राप्त कर ली, ठिकाने के सभी कागजातो को उन्होनें देख लिया। उससे उन्हें भरोसा हो गया कि भयंकर लागते और बेगार बिजोल्यां ठिकाने में ली जाती है उसके लिए ठिकानों के पास कोई औचित्य नहीं है। कुछ ही समय में उन्होनें बिजोल्यां के सभी गांवों से अपना घनिष्ठ सम्बन्ध

स्थापित कर लिया। पीड़ित ग्रामीण उन्हें अपना नेता, मित्र और सहोदर समझने लगे। पथिकजी की लगन, नेतृत्व की प्रतिभा, और राजनीतिक सूझ–बूझ, इतनी विलक्षण थी कि थोड़े समय में ही वे बिजोल्यां के किसानों के हृदय–सम्राट बन गए। उनके संकेत मात्र पर वे कठिन त्याग के लिए तैयार हो गए।

चतुर पथिकजी यह भली भांति जानते थे कि जो गांव गांव किसानों का संगठन कर रहे है और विद्या प्रचारिणी सभा के द्वारा तथा पाठशाला के द्वारा जन जागरण कर रहे है वे चाहे कितने गुप्त रुप से करे अन्ततः ठिकाने और राज्य की आखों से छिपा नही रहेगा और राज्य अवश्य ही उनके विरूद्ध कार्यवाही करेगा। हुआ भी यही। नायब मुंसिरम श्री डूंगरसिंह भाटी तथा ईश्वदान के द्वारा उन्हें ज्ञात हुआ कि ठिकाने ने पथिकजी के विरूद्ध राज्य को लिखा है और उनके कार्य की विस्तृत रिपोर्ट भेजी है। अतएव उन्होनें श्री साधु सीताराम दास को एक पत्र तत्कालीन मेवाड़ के मंत्री श्री प्रभाषचन्द्र चटर्जी के लिए लिखकर दिया। जब साधु सीताराम दास प्रभाषचन्द्र जी के पास पहुँचे और उन्हें पत्र दिया तो पत्र पढ़कर मन्त्री महोदय बोले "यह कौन आदमी हे जो देशी राज्यो में गड़बड़ फैलाना चाहता और हमसे सहायता चाहता है। हम तो उसको गिरफ्तार करेंगें, सजा देंगे, और जेल में डालेंगे, हम उनकी और क्या सहायता कर सकते है।"

सीताराम दास ने पथिकजी के बताए अनुसार कहा "आप बंग–माता के सपूत है। देश की आजादी के लिए बंग माता के सपूतों ने अकथनीय त्याग और बलिदान किया है। मेरा भी सम्बन्ध उनसे रहा है, अतएव मै केवल आपसे यही सहायता चाहता हूं कि जो कुछ आदेश मेवाड़ राज्य से मेरे बारे में निकले उसकी पूर्व सूचना किसी भी तरह हमें मिल जाये तो हम सचेत हो जावे।"

पथिकजी की कार्यपद्धति का यह एक महत्वपूर्ण अंग था कि वे किसी न किसी प्रकार यह पता अवश्य लगा लेते थे कि राज्य क्या करने वाला है और तदनुसार वे अपनी नीति बनाते और मोर्चाबन्दी करते थे। जब वे टाटगढ़ में थे तो भी उन्हें यह पहले ही अपने गुप्तचर से पता चल गया था कि उनके नाम लाहौर षड्यंत्र के सम्बन्ध में गिरफ्तारी का वारंट आ रहा है और वे वहां से निकल भागे। अतएव उसी नीति के अनुसार उन्होनें मेवाड़ में भी यही प्रबन्ध किया कि उनके पास उनके विरूद्ध जो कार्यवाही राज्य द्वारा की जावे उसकी पूर्व सूचना आ जावे। चटर्जी कुछ बोले नहीं। सुनकर अन्दर चले गए।

कुछ दिनों के उपरान्त पथिकजी ने साधु सीताराम दास को एक गुप्त कार्यवश पुठौली ठाकुर साहब के पास भेजा। जब साधु सीताराम दास नगरी ग्राम के पास पहुँचे तो ग्राम के कुछ दूरी पर ऊंट पर चढ़े हुए एक आगीरदार मिले वे उतरे नहीं ऊपर बैठे बैठे ही पूछा कि कहां रहते हो और तुम कौन हो? साधु सीताराम दास ने उत्तर दिया कि हम बिजोल्यां के रहने वाले है। वे शायद सीताराम दास को पहिचान गए थे बोले कि क्या तुम्हारा नाम साधु सीताराम दास है? हां कहने पर उन्होनें कहा वापस तुरन्त बिजोल्यां लौट जाओ और पथिकजी को सूचित करो कि उनका गिरफ्तारी का वारंट निकल गया है सचेत हो जावें।

साधु सीताराम दास तुरन्त वापस लौटे। लौटने पर ज्ञात हुआ कि उसी दिन सांयकाल की डाक से पथिकजी की गिरफ्तारी का वारंट वहां पहुँच चुका है और पथिकजी को भी उसकी

सूचना मिल चुकी है। इससे पता चलता है कि पथिकजी की गुप्तचर–व्यवस्था बहुत पक्की थी। वे केवल किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं थे। सभी स्तरों पर उन्होने राजकीय गुप्त भेदों को जानने की विश्वसनीय व्यवस्था कर रखी थी। पथिकजी उस समय गिरफ्तार नही होना चाहते थे। इसके दो मुख्य कारण थे, एक कारण तो यह कि गिरफ्तारी के बाद बहुत सम्भव था कि मेवाड़ राज्य और ब्रिटिश सरकार को यह पता चल जाये कि पथिकजी और कोई नहीं प्रसिद्ध क्रांतिकारी भूपसिंह है जिनके विरूद्ध लाहौर तथा अन्य षडयंत्रों के सम्बन्ध में गिरफ्तारी का वारंट तथा भारी ईनाम है, और जो टाटगड़ जेल से भाग निकले हैं। दूसरा कारण यह था कि यद्यपि पथिकजी ने बिजोल्यां के किसानों और सर्व साधारण में जागृति उत्पन्न की दी थी और किसान ठिकाने के विरूद्ध संघर्ष करने के लिए कटिबद्ध थे परन्तु उनका संगठन अभी दृढ़ नही हुआ था और न पथिकजी की दृष्टि में कोई ऐसा दूरदर्शी और प्रतिभावान कार्यकर्त्ता ही था कि जो आन्दोलन का सूत्र–संचालन कर सकता। जनता के मनोविज्ञान को जानने वाले पथिकजी यह भलि–भांति जानते थे कि यदि ठिकाने और राज्य पर इस बार किसान करारी चोट न कर सके जिससे की ठिकाने और राज्य को विवश होकर किसानों की मांग को स्वीकार करना पडे तो सदा के लिए बिजोल्यां किसान निराश और शिथिल हो जायेंगें और फिर उनका संगठन करना कठिन होगा। अस्तु उन्होंने यही निश्चय किया कि वे अपने को गिरफ्तार न होने दे और गुप्त रुप से आन्दोलन का संचालन करें। अतएव उसी रात्रि को उन्होंने बिजोल्यां छोड़ देने का निश्चिय किया।

सांयकाल विद्या प्रचारिणी सभा में सभा बुलाई। उसकी कार्यवाही के समाप्त होने पर पथिकजी ने घोषणां की कि मै आज आप लोगों से विदा हो रहा हूँ। आशा है कि फिर कभी आप लोगों के दर्शन करूंगा। समय बदल रहा है शीघ्र ही अंग्रेजी और सामन्तशाही अत्याचारों के विरूद्ध जनता उठेगी। मैंने आप लोगो को इतने दिनों भाषणों द्वारा जो सेवा की उसको भूलना मत।

उसी समय वे बिजोल्यां से चल पड़े। बाहर दरवाजे तक तो सभी सभा के सदस्य उन्हें पहुंचाने आए और वहां से दो चार साथियों को ले वे बिजोल्यां से दो मील दूर उमाजी खेड़ा नामक ग्राम में अपने अनन्य भक्त और विश्वासी श्री दरलाजी पटेल के मकान पर पहुँचे। सोये हुओं को जगाया और रात्रि में उनके मकान में शरण ली।

प्रातःकाल पुलिस तथा ठिकाने वालों ने सभा में बिजोल्यां में तथा उमाजी के खेड़े तथा समीप के सभी स्थानों पर छापा मारा। बहुत खोज की किन्तु पथिकजी का कहीं भी पता न लगा। बात यह थी प्रातःकाल से पूर्व ही वे दरलाजी पटेल के मकान से भी खिसक गए थे और गुप्त रुप से अपने को छिपाये हुए समीपवर्ती प्रदेश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते किसानों को संगठित करने का कार्य करने लगे। पुलिस ने बहुत छानबीन की, कुछ दिनों बहुत दौड़धूप की, परन्तु पथिकजी का पता वह न लगा सकी। जब पुलिस असफल होकर निराश हो गई और कुछ शिथिल हो गई तो पथिकजी ने भूमिगत रहकर गुप्त रुप से काम करना प्रारम्भ कर दिया।

उमाजी के खेड़े (ग्राम) में एक वीरान मकान था। उसमें कोई नहीं रहता था। उसका मालिक बाहर था। मकान के मुख्य दरवाजे में ताला पड़ा था। पथिकजी ने उस मकान को

अपना अड्डा बनवाया। बात यह थी कि उस मकान के पीछे एक कोठरी थी जो गिर गई थी उसमें से कठिनाई से मकान में घुसा जा सकता था। मकान बहुत बुरी अवस्था में था उसको साफ करके पथिकजी ने यहां अपना आसन जमाया। बाहर के फाटक में जो वर्षो से ताला लगा था वह ज्यों का त्यों रहा तथा गिरी हुई कोठरी भी वैसी की वैसी ही रही। किसी को बाहर से देखने से यह कल्पना भी नहीं हो सकती थी कि यहां कोई रह सकता है।

वह वीरान मकान किसान क्रांति का मुख्य केन्द्र बन गया। पथिकजी रात्रि को उस मकान से चुपचाप निकलते और गांवो में जाकर किसानों से मिलते और उनका संगठन करते। निश्चित दिन रात्रि के समय उस मकान के समीपवर्ती मकानों में से उस वीरान मकान में उतरकर सभी कार्यकर्त्ता उनसे मिलते और उनके आदेशानुसार आन्दोलन की योजना बनाते।

पथिकजी अब बहुत सक्रिय हो गए। कहते कि समय खोने का नहीं है। किसानों को राज्यो से मोर्चा लेने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। वे रात्रि में गुप्त रुप से एक गांव से दूसरे गांव को जाते और गांवो को तैयार करने लगे। कैसा कठिन था वह कार्य, ऊबड़ खाबड़ पहाड़ों और जंगलों से भरा हुआ प्रदेश, सड़क या मार्ग का नाम नहीं, कोई सवारी नहीं, रात्रि में तीस चालीस मील पैदल चलना और किसानो से मिलना। यह थी पथिकजी की कार्यशीलता। जीप में बैठकर और सभी सुविधाओं को प्राप्त करनेवाले आज के समाज सेवक उस समय की कठिनाइयों की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। पथिकजी को न खाने की चिन्ता थी और न सोने की। उनका बलिष्ठ शरीर थकना तो जानता ही नहीं था। उनका मन और शरीर मानों बज्र के बने थे। इस प्रकार पथिकजी के नेतृत्व में बिजोल्यां के किसान संगठित होने लगे।

अब प्रश्न यह था कि किसानों का एक स्थायी संगठन खड़ा किया जावे और ठिकाने और राज्य के विरूद्ध किसानों की समस्याओं को लेकर संघर्ष छेड़ दिया जावे। जब बिजोल्यां ठिकाने के सभी गांव तैयार हो गए तथा किसान पूरी तरह से जागृत हो गए तो पथिकजी ने कहा कि अब एक स्थायी संगठन बनाकर युद्ध छेड़ देना चाहिए। उस वीरान मकान की टूटी कोठरी में पथिकजी ने अपना निश्चय बताया कि श्रावण की हरियाली अमावस्था के दिन स्थायी संगठन बना लिया जावे और आन्दोलन का श्रीगणेश कर दिया जावे। पथिकजी ने कहा कि इसकी सूचना गांव गांव पहुचाओ। नीचे लिखी लाइनें नोटिस में देने के लिए कहाः—

"हरियाली अमावस सुखद भुभ मुहर्त मान लो,
स्वतन्त्रता के अर्थ सब, धर्म युद्ध को ठान लो।"

चार दिन पूर्व इस आशय की सूचना और विज्ञप्ति प्रकाशित कर दी गई। हरियाली अमावस्या का दिन आया, ऊपरमाल अथवा उत्तमशिखर अंचल की समस्त जनता बेरीसाल नामक ग्राम में एकत्रित हो गई। सभी के सामने प्रस्ताव रक्खा गया कि युद्ध का संचालन करने के लिए एक स्थायी संगठन खड़ा करना आवश्यक है अस्तु पंचायत बोर्ड की स्थापना की जानी चाहिए। सभी इस प्रस्ताव से सहमत थे किन्तु उसका सरपंच बनने के लिए कोई तैयार नहीं हुआ। सभी प्रमुख पटेल राज्य और ठिकाने से भयभीत थे। वे किसी भी प्रकार सरपंच बनने के लिए तैयार नही थे। पथिकजी प्रकट में तो सभा में न थे परन्तु पास के एक मकान में छिपे हुए विश्वासी कार्यकत्ताओं के द्वारा सभा का सूत्र संचालन कर रहे थे। सभी लोगों में निराशा छा गई, जब पथिकजी को ज्ञात हुआ कि कोई भी पटेल भय के कारण सरपंच बनने के लिए तैयार नही है

तो उन्होंने मन्नाजी पटेल को बुला भेजा और उसमें तीव्रता के भावों को जागृतकर ऐसी प्रेरणा दी कि वे सभा में आए और खड़े होकर घोषणा की कि मैं सरपंच बनने को तैयार हूं। जो भी विपत्ति कष्ट और दमन होगा और उसको झेलने को मै तैयार हूं। सभी किसान भाई मजबूत रहें। हमारे नेता पथिकजी के आदेश पर पंचायत के नेतृत्व में चलें, डरने की कोई बात नही है। संगठन के द्वारा ही हम ठिकाने के अत्याचारों से अपनी रक्षा कर सकते हैं। मन्नाजी पटेल के सरपंच बनने की घोषणा करते ही एकत्रित किसानों में उत्साह की लहर फैल गई। पथिकजी की जय, भारत माता की जय, और मन्नाजी की जय से आकाश गूंजने लगा। किसानों पर पथिकजी के प्रभाव का यह सुन्दर उदाहरण था। पथिकजी के संकेत पर किसान कठिन से कठिन त्याग करने के लिए तैयार हो गए।

उस समय बिजोल्यां की स्थिति दयनीय हो उठी थी। ठिकाने का दमनचक्र जोरों से चल रहा था। बात यह थी, फसलें खराब हो रही थीं इस कारण किसानों की आर्थिक स्थिति खराब हो रही थी, किन्तु ठिकाना मनमाना लगान उगाह रहा था उधर महायुद्ध छिड़ गया था। ब्रिटिश सरकार के दबाव से युद्ध का चन्दा और ऋण भी किसानों से जबरदस्ती उगाहा जाने लगा। इसके साथ राव साहब की तलवार बन्दी का जो रुपया मेवाड़ सरकार को देना था, वह भी किसानों से बलपूर्वक वसूला जाने लगा। इस आर्थिक कष्ट से ऊपरमाल आंवल की जनता तिलमिला उठी। श्री मथुरालाल भट्ट, श्री माणिक्यलाल वर्मा, तथा साधु सीताराम दास ने पथिकजी से परामर्श किया। बिजोल्यां के कार्यकर्ताओं का विचार था कि जमीन न जोत कर भूमि पड़त रख दी जावे। पथिकजी ने उन्हें समझाया कि ऐसा करना उचित न होगा। कारण यह कि किसानों की आर्थिक स्थिति और अधिक बिगड़ जायेगी और वे अधिक दिनों तक ठिकाने के विरूद्ध खड़े न रह सकेंगे। अतएव उन्होंने कहा कि हमें किसानों को युद्ध–ऋण और चन्दा न देने के लिए कहना चाहिए। जब समस्त प्रदेश में अकाल की स्थिति है, किसानों की आर्थिक दशा खराब है, तब युद्ध का चन्दा नही दिया जा सकता।

पथिकजी ने किसानों को युद्ध का चन्दा न देने के लिए आह्वान किया। हरियाली अमावस्या को बारीसाल में सभा हुई थी उसमें यह निश्चय किया गया था कि कोई बेगार नहीं देगा। राव साहब के रसोड़े के लिए लकड़ियां जंगल से काटकर रसोड़े में डालने की बेगार के लिए ठिकाने के कर्मचारियों ने गोविन्द निवास गांव के नारायण जी पटेल को पकड़ा। उन्होंने बेगार देने से साफ इन्कार कर दिया। उन्हें कर्मचारी बन्दी बनाकर बिजोल्यां ले गए। यह सूचना अग्नि की भांति चारों ओर फैल गई। किसानों के जत्थे के जत्थे बिजोल्यां पहुंचने लगे। सभी का नारा एक था "इन्हें छोड़ दो या हमें जेल दो" दो हजार किसान इकट्ठे हो गए। तत्कालीन मुंसरिम ने नारायण पटेल को छोड़ दिया। किसानों की यह पहली विजय थी। किसानों में इससे आत्मविश्वास और उत्साह की लहर फैल गई।

पथिकजी के आह्वान पर बिजोल्यां के किसानों ने युद्ध का चन्दा देने से इन्कार कर दिया। वे छिपे हुए और साधु सीताराम दास तथा प्रेमचन्द भील प्रकट रुप से चन्दा न देने का प्रचार करते थे। प्रेमचन्द भील स्वंय भजन बनाते और उन्हें गाकर किसानों का इस सत्याग्रह के लिए उद्‌बोधन करते। पथिकजी ने उसी समय स्वर्गीय श्री गणेश शंकर विद्यार्थी को लिखा कि वे बिजोल्यां सत्याग्रह चला रहे हैं उनके प्रसिद्ध पत्र प्रताप की सहायता की आन्दोलन को अत्यन्त आवश्यकता है। साथ में बिजोल्यां के किसानों की ओर से उन्होंने स्वर्गीय श्री गणेश

शंकर विद्यार्थी को राखी भेजी। प्रताप के यशस्वी संपादक श्री गणेश शंकर विद्यार्थी ने उत्तर दिया कि बिजोल्यां आन्दोलन के लिए प्रताप के पृष्ठ सदैव खुले रहेंगे आप निश्चिन्त रहिए।

अब प्रताप के द्वारा बिजोल्यां आन्दोलन की विज्ञप्ति देश भर में होने लगी। समस्त देश का ध्यान उस ओर आकर्षित हो गया। राज्य सरकार तथा ठिकाने के कर्मचारी क्रोध से बौखला गए, वे और अधिक दमन पर उतारू हो गए। पथिकजी तो भूमिगत थे इस कारण पकड़ाई न दिए किन्तु साधु सीताराम दास तथा प्रेमचन्द भील को पकड़ कर जेल में बन्द कर दिया गया। पथिकजी, साधु सीताराम दास और प्रेमचन्द भील पर युद्ध–ऋण तथा चन्दा न देने के लिए किसानों को बहकाने के लिए मुकदमा चला।

छिपे–छिपे पथिकजी ने जनता को ऐसा मजबूत और निर्भीक बना दिया कि ठिकाने का आतंक जाता रहा। ठिकाने के कर्मचारियों ने किसानों को आतंकित और भयभीत करने का अकथ प्रयत्न किया। परन्तु एक व्यक्ति भी विचलित नहीं हुआ। ठिकाने ने इस मुकदमे के सम्बन्ध में तीन महीने तक तेरह सौ व्यक्तियों के बयान लिए। प्रत्येक गांव के लोगो को बयान देने के लिये बुलाया गया। पथिकजी प्रत्येक गांव पहुँचते रात्रि को उन लोगों को समझाते जिन्हें प्रातःकाल ठिकाने की कचहरी में बयान देने के लिए बुलाया जाता था।

पथिकजी के इस भगीरथ प्रयत्न का फल यह हुआ कि तेरह सौ किसानों ने एक ही तरह के बयान दिए। एक ने भी ठिकाने के पक्ष में बयान नहीं दिया। सबने एक स्वंर से कहा "हमको युद्ध का ऋण और चन्दा न देने के लिए किसी ने भी नहीं बहकाया। हम कोई बालक और मूर्ख नहीं है जो किसी के बहकाने में आ जाते। हम तो ठिकानों की रीढ़ तोड़ देने वाली ऊंची लगान, अगणित लागतों और बेगारों के मारे स्वयं भूखे मर रहे है, हमारे घरों में भर पेट खाने को और शरीर ढकने के लिए कपड़ा नही है। बिजोल्यां के किसानों पर महाजनों का लाखों रुपए का कर्ज सिर पर चढ़ा है। उसे हम उतार नहीं पाते और ठिकाने से बची हुई पैदावार सूद में उन महाजनों के घर चली जाती है। हम भूखे और नंगे रहते है। ऐसी अवस्था में भूखे और नंगे रहकर हम किसी भी प्रकार का चन्दा नही दे सकते।

साधु सीताराम दास तथा श्री प्रेमचन्द भील के विरूद्ध कोई भी गवाही न मिल सकी। किसानों के संगठन की यह दूसरी अभूतपूर्व विजय थी। समस्त बिजोल्यां और प्रदेश में उत्साह और जोश की एक लहर फैल गई और उनका उपने संगठन और नेता श्री पथिकजी में श्रद्धा और विश्वास और भी बढ़ गया।

ठिकाने अब खिसियाकर क्रूर दमन करने पर उतारू हो गए। वे बलपूर्वक चन्दा वसूल करने लगे, और तरह– तरह के अत्याचार करने लगे। पथिकजी ने लोकमान्य तिलक को विस्तारपूर्वक बिजोल्यां के किसानों पर होने वाले अत्याचारों की कहानी लिख भेजीं। लोकमान्य बिजोल्यां के किसानों की वीरता और पथिकजी के संगठन से बहुत अधिक प्रभावित हुए और उन्होंने अपने प्रसिद्ध अंग्रेजी पत्र 'मराठा' में बिजोल्यां के सम्बन्ध में एक सम्पादकीय लेख लिखी और तत्कालीन महाराणा फतहसिंह को एक व्यक्तिगत पत्र लिखा। पत्र में उन्होंने बिजोल्यां के किसानों पर होने वाले अत्याचारों का उल्लेख तो किया ही उन्होंने महाराणा जी को सम्बोधित करते हुए लिखा "मेवाड़ राजवंश ने स्वतन्त्रता के लिए बहुत बलिदान किए है। आप

स्वंय भी स्वतन्त्रता के पुजारी है, अतएव आपके राज्य में स्वतन्त्रता के उपासकों को जेल में डालना कलंक की बात है।"

उन दिनों अखबार तथा पत्र इत्यादि महाराणा फतेह सिंह को सुनाने का काम राज्य ज्योतिषी पंडित चन्द्रकांत जी करते थे। उन्होंने महाराणा साहब को लोकमान्य तिलक के लेख का अर्थ और पत्र सुनाया। सुनकर महाराणा साहब ने पत्रों में इस आशय का प्रतिवाद प्रकाशित कराया कि साधु सीताराम दास, प्रेमचन्द भील इत्यादि के सम्बन्ध में राजद्रोहात्मक कार्य करने की शिकायते थीं। उनकी जांच की जाना आवश्यक था। अस्तु जाँच की गई और वे दोनों निर्दोष प्रमाणित हुए इस कारण छोड़ दिए गए। उधर आज्ञा भेजी कि तुरन्त साधु सीताराम दास और प्रेमचन्द भील को जेल से मुक्त कर दो। अतएव दोनो ही जेल से मुक्त कर दिए गए।

महाराणा के इस कार्य से अंग्रेज सरकार नाराज हो गई। राजनीतिक विभाग ने राज्य से उत्तर मांगा कि राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं के सम्बन्ध में इस प्रकार का प्रतिवाद क्यों प्रकाशित कराया गया। ऐसा करने से उनका साहस बढ़ता है। परन्तु महाराणा फतहसिंह ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया।

यद्यपि पथिकजी के नेतृत्व में बिजोल्यां के किसान जागृत हो रहे थे। किन्तु उस समय तक सर्वसाधारण को विश्वास नही था कि इस प्रकार आन्दोलन करने से ठिकाने और राज्य को झुकाया जा सकता है। वृद्ध लोग तथा राज्य कर्मचारी इसे कुछ पागल लोगों की कल्पना मात्र समझते थे। वे उसकी हंसी उडाते और आन्दोलन से सहानुभूति रखने वाले को तुच्छ दृष्टि से देखते थे। ठिकाने और राज्य का इतना आतंक भय था भयंकर से भयंकर अत्याचार को सहकर भी लोग चुप रहते, उसके सम्बन्ध में कुछ बोलने का या लिखने का साहस भी नहीं करते थे। आन्दोलन की कठिनाई का थोड़ा अनुमान इस बात से लग सकता है कि आरम्भ में लिखापढ़ी करने के लिए तथा प्रारम्भिक व्यय के लिए 150 रुपए भी एकत्रित हो न सके। विवश होकर बैरीसाल के नम्बरदार श्री मन्नाजी पटेल जो इस आंदोलन की पहली आहुति बने और जो पथिकजी की प्रेरणा से सभी के सरपंच बनने से इनकार कर देने पर वीरता के साथ खुले रुप में सरपंच बने थे; उन्होंने तथा उनके साथी युवक श्री केसरसिंह, श्री नारायण, श्री गोकुललाल, एवं जावदा ग्राम के श्री हीरालाल और श्री लाला राम युवकों ने अपने कुटुम्बवालों से छिपाकर 155रू0 कर्ज लेकर आन्दोलन को आरम्भ करने के लिए अर्थ संचय किया।

पथिकजी को इस समय नहरू (एक प्रकार का कीड़ा जो शरीर से निकलता है और रोगी को बहुत अधिक कष्ट देता है।) निकला हुआ था। उनको बहुत कष्ट था परन्तु अपने शरीर की परवाह न कर वे किसानों के आन्दोलन को सफल बनाने में जुट गए।

पथिकजी ने सलाह दी कि बिजोल्यां ठिकाने के भयंकर अत्याचारों तथा शोषण के विरूद्ध राज्य को आवेदन पत्र दिया जावे। भय के कारण कि कौन नाम दे आरम्भ में यह निश्चय किया गया कि आवेदन पत्र पर सैकड़ों हस्ताक्षर हों जिससे हस्ताक्षर करने में किसी को भय न हो। यह तो हम ऊपर लिख आए हैं कि हरियाली अमावस्या के दिन बैरीसाल नामक ग्राम में पंचायत बोर्ड की स्थापना हुई थी और उनमें पथिकजी की प्ररेणा से श्री मन्नाजी पटेल ने स्पष्ट रुप से आन्दोलन में अपनी आहुति देना स्वीकार किया था। उसी समय आन्दोलन के संचालन और व्यवस्था के लिए तेरह व्यक्तियों की संचालन समिति स्थापित कर दी गई किन्तु

उन सदस्यों के नाम गुप्त रखे गए। पथिकजी के विद्यार्थी शिष्यों ने इस आन्दोलन में अत्यन्त प्रशंसनीय और वीरतापूर्ण काम किया। वे अपने कुटुम्बियों से छिपकर रात्रि में पथिकजी के पास भाग आते और कई–कई दिन तक पथिकजी के पास छिपे रहकर लिखापढ़ी तथा संवाद और समाचार एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाने का कार्य करते थे। राज्य को पत्र लिखे जाते। उनके अक्षर बदल–बदल कर यही युवक लिखते कि लिखावट पहचान न ली जावे और वे ही विद्यार्थी समाचारपत्रों में समाचार भेजने के लिए पथिकजी द्वारा लिखाए संवादो की नकल करते। अभाव अभियोगों के आवेदन जब मेवाड़ राज्य में पहुँचने लगे तो ठिकाने के कर्मचारी भयंकर दमन पर उतारू हो गए।

पथिकजी के आदेश से गांव–गांव सभाएँ होने लगी। पथिकजी छिपे–छिपे सभा के समीप ही कहीं रहते और उसका संचालन करते थे। राज्य को जो आवेदन–पत्र भेजे जाते उनके समर्थन में गांवों में सभा की जाती और प्रस्ताव पास किए जाते। एक सभा में यह निश्चय किया गया कि 'शहनों' (राज्य के चौकीदार) को दिया जाने वाला भोजन, ओढ़ना, बिछौना, मकान आदि बंद कर दिये जावे। लोगों को विश्वास नही था कि कभी ऐसा भी हो सकता है किन्तु ठिकानेवालों ने आश्चर्यचकित होकर देखा कि किसानों ने यह परम्परागत लागत देना बंद कर दिया। अब भयंकर दमन हुआ। कुछ लोग भयभीत हो गए और आन्दोलन से हट गए। किन्तु पथिकजी ने इसकी तनिक भी परवाह न कर आन्दोलन को और अधिक उग्र बना दिया। संचालन समिति का नवीन संगठन किया गया और आन्दोलन अधिक तेजवान हो उठा।

उस समय तक माणिक्यलाल वर्मा गुप्त रुप से आन्दोलन और संगठन करते थे। उनके पिता तथा वे स्वंय ठिकाने की नौकरी करते थे। साहसी वर्माजी के मन में ठिकाने की नौकरी का बन्धन रह रहकर अखरता था। पथिकजी की प्ररेणा से उन्होनें पिता तथा कुटम्बियों की तनिक भी परवाह न कर ठिकाने की नौकरी से त्याग पत्र दे दिया और प्रकट रुप से वे आन्दोलन में सम्मिलित हो गए। पंचायत ने उन्हें ऊमाजी खेड़ा गांव की पाठशाला में बच्चों को पढ़ाने के लिए नियुक्त किया। इसके अतिरिक्त वे पथिकजी के आदेशानुसार आन्दोलन सम्बन्धी लिखा पढ़ी का कार्य भी करने लगे।

उस समय दमन और आन्दोलन उग्रता की चरम सीमा पर पहुँच चुके थे। ठिकाने के अत्याचार जैसे–जैसे बढ़ते जाते थे पथिकजी के नेतृत्व में आन्दोलन और अधिक तीव्र होता जाता। स्वनामधन्य प्रताप के यशस्वी सम्पादक स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी प्रताप में बिजोल्यां आन्दोलन की रोमांचकारी घटनाओं का, किसानों की वीरता का, विस्तार से विवरण छापने लगे। 'प्रताप' ने आन्दोलन के समाचार देश भर में पहुँचाने का प्रशंसनीय कार्य किया। प्रताप से प्रभावित हो अन्य समाचारपत्र भी बिजोल्यां आन्दोलन के विस्तृत समाचार देने लगे। समस्त देश में बिजोल्यां आन्दोलन की धूम मच गई।

इधर पथिकजी ने मेवाड़ी भाषा में बिजोल्यां आन्दोलन के सम्बन्ध में, ठिकाने के अत्याचारों के सम्बन्ध में, किसानों की बहादुरी के सम्बन्ध में, गीत और भजन बनाकर उनके द्वारा किसानों में गांव गांव आन्दोलन का प्रचार करना आरम्भ किया। जब पथिकजी के हृदयस्पर्शी और ओजस्वी गीत और भजन उनके कार्यकर्त्ता और विद्यार्थी–शिष्य गाते तो किसान आत्मविभोर हो उठते। पथिकजी के बनाए हुए गीत समस्त उत्तमशिखर (ऊपर माल) आंचल तक

मुखरित हो उठे। बच्चे, युवक, बुढ्ढे, स्त्रियां सभी उन्हें गाकर किसानों को सत्याग्रह के लिए आह्वान करते। पथिकजी ने ठिकाने और राज्य के विरूद्ध रणभेरी बजादी थी। युद्ध आरम्भ हो गया था। ठिकाने का दमन चरम सीमा पर पहुँच गया था। पथिकजी ने प्रकट रुप से सभाँए करना बन्द कर दिया था। उसका कारण यह था कि ठिकाने के कर्मचारी उस दशा में क्रूरतापूर्वक सभाओं को न होने देने का प्रयत्न करते। किन्तु किसानों में निराशा और साहसहीनता उत्पन्न न हो जावें इसके लिए सभाँए करना आवश्यक था। अस्तु अब सभाएँ रात्रि को जंगलों में और खेतों पर गुप्त रुप से होतीं। जब तक ठिकाने वालों को मालूम होता तब तक सभा समाप्त हो चुकी होती, और जब ठिकाने वाले उधर आते तो पथिकजी के शिष्य गुप्तचर विद्यार्थीगण उनसे पहले सूचना पहुँचा देते। प्रकट रुप से कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता दिन में निकटवर्ती अन्य राज्यों ग्वालियर, बूंदी इत्यादि में पहुँच जाते, ठिकाने तथा राज्य की पुलिस उन्हें पकड़ न पाती।

अब पथिकजी ने सम्मिलित हस्ताक्षरों से राज्य को किसानों के अभाव अभियोगों के लिए आवेदन देना बन्द करवा दिया। केवल पंचायत के सरपंच के नाम से ही लिखा पढ़ी की जाने लगी। सरपंच के पत्रों में राज्य को स्पष्ट चेतावनी दे दी गई कि किसान अनुचित लागतें और बेगारें नहीं देंगें। पंचायत ने यह निश्चय किया है कि यदि ठिकाना इन्हें समाप्त नहीं करेगा तो पंचायत उन्हें अन्य टैक्स देने से भी मना कर देगी। इस संघर्ष में मेवाड़ राज्य ने ठिकाने का ही पक्ष लिया। राज्य ने अपने कर्मचारियों और ठिकाने को स्पष्ट आदेश दे दिया कि सरपंच या पंचायत के नाम से किसी अर्जी या आवेदन पर कोई कार्यवाही न की जावे अर्थात राज्य ने पंचायत के अस्तित्व को मानने और किसानों के प्रतिनिधि के रुप में उसके बोलने के अधिकार को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। इधर पथिकजी ने किसानों को समझाया कि कोई किसान व्यक्तिगत रुप से या सम्मिलित हस्ताक्षर करके आवेदन न दे। सभी किसानों की ओर से बोलने का अधिकार एकमात्र पंचायत को ही है। अस्तु किसान पंचायत का अस्तित्व स्वीकार कराने और उसी के आवेदन पर कार्यवाही करने पर तुल गए।

बिजोल्यां में उस समय अपूर्व उत्साह था। समस्त ऊपरमाल अंचल पथिकजी के बनाए सत्याग्रह सम्बन्धी गीतों से गूंज रहा था। पथिकजी के नेतृत्व में उनके साहसी और वीर सहयोगी रात्रि को सभाँए करते, दिन में छिपकर पुलिस की नजर बचाकर पत्रों के लिए सम्वाद लिखते, राज्य अधिकारियों और ठिकाने को पंचायत की ओर से आवेदन पत्र लिखते, तथा उनकी लिखा पढ़ी करते, पंचायत के रजिस्टर और हिसाब लिखते, और सायंकाल बन्दूक कंधे पर रख अथवा तलवार या लाठी से पहाड़ों को लांघते और जंगलो को पार करते, एवं घोषित सभास्थल पर पहुँचते। सभाँए रात्रि को स्थल बदल–बदल कर होती। वहां जाकर भाषण देते और किसानों को उत्साहित करते। सभा में जो निश्चय होते वह प्रत्येक गांव में पहुँचाते और गांववाले उसी के अनुसार काम करते। जब राज्य या ठिकाने के सिपाही घोड़ों पर सभास्थल तक पहुँचते पथिकजी के गुप्तचर–विद्यार्थी खेतों की मेढ़ों को फलांगते हुए दौड़कर सिपाहियों के वहां पहुँचने से पहले ही सूचना पहुचा देते। यही विद्यार्थी हर कारों में काम करते, एक स्थान से दूसरे स्थान तक समाचार पत्र और गुप्त पत्र ले जाते। पथिकजी ने बिजोल्यां ठिकाने के किसानों का एक अभूतपूर्व संगठन खड़ा कर दिया। भारत में उससे पूर्व ऐसा संगठन कहीं खड़ा नही हुआ था। लोग कहते 'न भूतो न भविष्यतो' ऐसा कभी नहीं हुआ। राज्य और ठिकाने का आतंक और

प्रतिष्ठा समाप्त हो गई। राज्य और ठिकाने के कर्मचारियों को गांवों में भोजन, दूध, दही देना तो स्वप्न की बात हो गई कोई उन्हें जल के लिए भी नहीं पूछता था। राज्य और ठिकाना बौखला उठा। घोर दमन किया जाने लगा।

पथिकजी के कष्टों का क्या ठिकाना था। शरीर में कष्ट और पीड़ा नहरु निकलने के कारण चलने में भयंकर पीड़ा होती, फटा कुर्ता और फटी धोती पहने, छिपकर एक गांव से दूसरे गांव तक पहुंचना। रात्रि को सभाओं की व्यवस्था करवाना, किसानों के घरों से आई हुई मक्की, ज्वार की जूठी रोटियां और मेथी दाने की भाजी, यही आन्दोलन पर उनका भोजन था। इतिहास दोहराया जा रहा था, प्रातः स्मरणीय प्रताप ने रुखी सूखी रोटियां खाई, जंगल और पहाड़ों पर भटकते रहे, परन्तु मुगल बादशाह अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की। मातृभूमि की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए उन्होनें अपना सर्वस्व निछावर कर दिया। उन्हीं वंशज के राज्य में पथिकजी किसानों की शोषण और अत्याचार से रक्षा करने के लिए, निर्धन किसानों को संगठित कर जंगल–जंगल और पहाड़ों में विचरना आरम्भ कर दिया। उन्हें अपने कष्टों और कठिनाईयों की किंचित चिन्ता न थी। उनके घोर कष्टों का वर्णन लेखनी से नहीं किया जा सकता। परन्तु पथिकजी रणक्षेत्र में डटे रहे। उन्होंने उन दिनों समस्त उत्तम शिखर आंचल के किसानों को अपनी नीचे लिखी पंक्तियों का मन्त्र सुनाकर जागृत किया–

"यश वैभव सुख की चाह नहीं,

परवाह नहीं जीवन न रहे,

यदि इच्छा है, यह है,

जग में स्वेच्छाचार दमन न रहे।"

ठिकाने वालों ने यह कहकर कि उदयपुर से बेगार और लागतें लेने की आज्ञा आ गई है। किसानों से पुनः लागतें और बेगार देने के लिए जोर डाला। पंचायत के पूर्व निश्चय के अनुसार और पथिकजी से आदेशानुसार सबों ने लागतें और बेगार देना बन्द कर दिया। ठिकाने ने यह बहाना लेकर 51 व्यक्तियों को पकड़ लिया। सभी प्रमुख कार्यकर्ता, प्रभावशाली किसान और पढ़े–लिखे व्यक्ति पकड़ लिए गए। साधु सीताराम दास और माणिक्यलाल वर्मा भी गिरफ्तार कर लिए गए। बिजोल्यां के गढ़ में जो जेल थी, उसमें इतने व्यक्तियों को रहने का स्थान नहीं था। अस्तु उन्हें खुले में रक्खा गया। ठिकाने ने उनके लिए खाने और पीने का कोई प्रबन्ध नहीं किया। किसानों के घर से आटा तथा अन्य सामग्री आती और वे स्वयं अपनी रोटी बना लेते। जब 51 आदमी गिरफ्तार हो गए और माणिक्यलाल वर्मा तथा साधु सीताराम दास को भी ठिकाने ने कैद कर लिया तो पथिकजी ने चार–पांच सौ किसानों को तैयार किया और उन्हें यह समझा दिया कि तुम यह कहना कि यदि मेवाड़ राज्य में लागतें और बेगार लेने की आज्ञा भेजी है तो उदयपुर के मुहकमा खास की आज्ञा दिलवाओ। साथ ही उनके द्वारा पुनः किसानों के दुःखों की गाथा लिखकर ठिकाने को एक आवेदन पत्र भेजा।

जब यह चार–पांच सौ किसान महलों में पहुंचे तो ठिकाने के कर्मचारियों ने गढ के फाटक बन्द करवा दिए और सारे किसान कैद हो गए। किसानों ने भी वहां अपना डेरा डाल दिया। प्रातःकाल दूसरे दिन सब किसानों ने शौच जाने के लिए फाटक खुलवाने को कहा।

उन्होंने ठिकाने के कर्मचारियों से कहा कि यदि तुम फाटक नहीं खोलोगे तो हम महलों को ही शौचालय में परिणत कर देंगे। विवश होकर ठिकाने के कर्मचारियों ने गढ़ का फाटक खोल दिया। आगे पीछे सिपाहियों के बीच पांच सौ किसानों को बाहर जंगल में शौच के लिए ले जाया गया। जब वे बाहर निकले तो पथिकजी के भेजे हुए और भी किसान उनमें आ मिले। उन किसानों के द्वारा पथिकजी ने कहला भेजा कि सब सूरजपोल के बाहर चौक में अपना डेरा डाल दो और वहीं पर जेल बनाकर पड़े रहो। रात्रि में पथिकजी स्वयं भेष बदलकर आ गए और किसानों को दृढ़ता के साथ वहां से न हटने की आज्ञा दे दी। अब क्या था? किसानों ने ठिकाने वालों से स्पष्ट कह दिया कि जब तक हमें न्याय नहीं मिलेगा, हम यहां से नहीं हटेंगे। पथिकजी रात्रि को भेष बदलकर किसानों में आ जाते और उन्हें आगे क्या करना है, उस सम्बन्ध में उचित मार्गदर्शन कर जाते। उनके वहां रहने से किसानों में बहुत उत्साह और जोश पैदा हो गया था और वे ठिकाने वालों से तनिक भी आतंकित और भयभीत नहीं हुए। किसानों के घरों से चने की रोटियां आ जाती थीं और वे उन्हें खाकर वहीं जमे रहे।

भयंकर दमन

उस समय समस्त बिजोल्यां एक सत्याग्रह शिविर बना हुआ था। पथिकजी के नेतृत्व में ऊपरमाल पंचायत ने किसानों का अपूर्व संगठन खड़ा कर दिया था। भारत में यह पहला किसान संगठन था जिसने ठिकाने, मेवाड़ राज्य और ब्रिटिश शासन को हिला दिया था। ठिकाना तथा राज्य किसानों की अभूतपूर्व जागृति को देखकर आश्चर्यचकित हो गए। वह यह नहीं समझ पाते थे कि क्या किया जावे? केवल दमन ही उनका एकमात्र अस्त्र था। उधर ब्रिटिश सरकार बिजोल्यां के किसान सत्याग्रह से बहुत अधिक शंकित और भयभीत थी। वह यह समझती थी कि लगान बन्दी का यह आन्दोलन अन्य राज्यों और ब्रिटिश भारत में फैले बिना नहीं रहेगा। अतः उसको रोकना आवश्यक है। अतएव ब्रिटिश सरकार भी मेवाड़ के महाराणा पर यह दबाव डाल रही थी कि इस आन्दोलन का घोर दमन किया जावे।

पथिकजी यह जानते थे कि जब तक लगानबन्दी, लागतें और बेगार बन्द करने का आन्दोलन खड़ा किया जावेगा तो घोर दमन किया जावेगा और यह केवल ठिकाने के विरुद्ध ही आन्दोलन मात्र नहीं रहेगा वरन वह राज्य तथा ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध भी होगा। अस्तु पंचायत का संगठन बहुत प्रभावशाली और दृढ़ होना चाहिए। अतएव ऊपरमाल पंचायत का और अधिक दृढ़ संगठन खड़ा कर दिया गया।

पथिकजी ने ऊपरमाल पंचायत का संगठन इस आधार पर किया था कि वह बहुत दृढ़ हो, व्यापक तथा व्यवहारिक हो, जिससे कि किसी एक–दो नेता के हट जाने से वह शिथिल न हो जावे। पंचायत साधारण समय में नागरिक सेवा कार्य करे तथा रचनात्मक सेवा कार्य करे और संघर्ष काल में आन्दोलन का संचालन करे। यही कारण था कि पथिकजी ने स्वयं अथवा अपने शिष्यों और अन्य कार्यकर्ताओं को पंचायत में कोई स्थान या पद नहीं लेने दिया। केवल किसान पटेल ही उसके पदाधिकारी और कार्यकर्ता थे। यही कारण था कि पंचायत ने गांव–गांव में पाठशालाएं स्थापित कीं। माणिक्यलाल वर्मा को पथिकजी ने ऊमा खेड़ा में पाठशाला चलाने के लिए रक्खा। यह लोग बालकों को पढ़ाते, प्रौढ़ों को अखबार सुनाते, उन्हें ठिकाने के अत्याचारों से अवगत कराते और संगठित होकर अत्याचारों का प्रतिकार करने के लिए प्रोत्साहित

करते तथा किसानों के अभाव में अभियोगों के बारे में लिखा पढ़ी करते। दूरदर्शी पथिकजी ने पंचायत का संगठन इस आधार पर किया था कि यदि आवश्यकता होने पर राज्य से सम्बन्ध विच्छेद करना पड़े तो पंचायत अपने पैरों पर खड़ी होकर समान्तर सरकार के रुप में सारा काम चला सके। वे बराबर किसानों से कहते कि आवश्यकता पड़ने पर पंचायत को राज्य प्रबन्ध स्वयं अपने हाथों में लेना होगा। हमें उसकी तैयारी करनी है।

ऊपरमाल पंचायत (बोर्ड) का संगठन खड़ा करके ही पथिकजी चुप नहीं रहे। उन्होंने उसके अधीन 'ऊपरमाल सेवा समिति' की स्थापना भी की। उसमें उन्होंने अपनी पाठशाला के विद्यार्थियों को तथा बिजोल्यां ठिकाने के सभी गांवों के युवकों को देशभक्ति के मन्त्र से दीक्षित कर भर्ती किया था और उनका एक सुन्दर संगठन खड़ा कर दिया था। बिजोल्यां आन्दोलन में इन युवकों ने ऐसा प्रशंसनीय कार्य किया जिसकी आज कोई तुलना नहीं की जा सकती है।

पथिकजी यह भली भांति जानते थे कि आन्दोलन को बल देने के लिए प्रचार और प्रकाशन की आवश्यकता है। अतएव उन्होंने 'ऊपरमाल का डंका' नामक पंचायत का एक पत्र भी निकलवाया, जो किसानों के कष्टों, पंचायत के कार्यों तथा अन्य बातों की बराबर सूचना देता था। पथिकजी की पैनी दृष्टि से यह भी छिपा नहीं था कि मेवाड़ राज्य तथा ब्रिटिश सरकार पर प्रभाव डालने के लिए देश के समाचार–पत्रों का सहयोग लेना आवश्यक है। यही कारण था कि उन्होंने स्वनामधन्य स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी के प्रतापी 'प्रताप' की आन्दोलन के लिए सेवाएं प्राप्त कीं। प्रताप के कुछ पृष्ठ बिजोल्यां आन्दोलन के लिए सुरक्षित थे और उसके द्वारा आन्दोलन को बहुत बल मिला। इसके अतिरिक्त प्रयाग का 'अभ्युदय', कलकत्ते का 'भारत मित्र', तथा लोकमान्य तिलक का 'मराठा' बिजोल्यां आन्दोलन के समाचार निकालता था। परन्तु अन्य पत्रों ने पथिकजी के प्रयत्न करने पर भी आन्दोलन को सहयोग नहीं दिया। अंग्रेजी पत्रों की उपेक्षा अत्यन्त निन्दनीय थी। वे बिजोल्यां आन्दोलन के समाचार प्रकाशित कर ब्रिटिश सरकार के कोप भाजन बनना नहीं चाहते थे। यही नहीं मेवाड़ सरकार ने कुछ समाचार पत्रों को यथेष्ठ धन देकर अपनी ओर मिला लिया था। वे राज्य के पक्ष में और आन्दोलन के विरुद्ध लिखा करते थे और पथिकजी को तथा आन्दोलन को बदनाम करने का प्रयत्न किया करते थे।

राज्य अधिकारियों ने सोचा कि यदि पंचायत को समाप्त कर दिया जावे और पथिकजी को गिरफ्तार कर लिया जावे तो आन्दोलन समाप्त हो जावेगा। अस्तु पथिकजी को अवांछित घोषित कर दिया गया और उनकी गिरफ्तारी की आज्ञा दे दी गई। पंचायत के किये हुए निश्चयों की प्रतिलिपियां तथा लागतें और बेगार बन्द कराने के लिए आन्दोलन सम्बन्धी प्रार्थना–पत्र ले जाने वालों को गिरफ्तार किया जाने लगा। पंचायत तथा सेवा समिति को गैरकानूनी करार दे दिया गया। पंचायत का सब सामान जब्त कर लिया गया। सेवा समिति को भी गैरकानूनी घोषित कर दिया गया। स्वयंसेवकों की वर्दियां भी जब्त कर ली गईं। मेंवाड़ सरकार ने तत्कालीन नायब मुंसरिम डूंगरसिंह भाटी जो कि पथिकजी के भक्त थे, आन्दोलन से सहानुभूति तथा सहायता पहुंचाने का आरोप लगाकर पदच्युत कर दिया। इस सबका परिणाम यह हुआ कि प्रकट रुप से सभाएं करना पथिकजी ने बन्द कर दिया परन्तु गुप्त रुप से सभाएं बराबर होतीं और पथिकजी गुप्त रुप से आन्दोलन का संचालन करने लगे। आन्दोलन और दमन साथ–साथ चलता रहा। पंचायत बराबर मेवाड़ राज्य को अपनी कष्टों की कहानी लिखाती रही परन्तु कोई भी फल न निकला। यही कारण था कि पंचायत ने यह घोषणा कर दी कि जब

तक हमारी मांगों का निर्णय नहीं होगा, कोई भी किसान कोई बेगार नहीं देगा। हां, लगान हम देते रहेंगे। यदि ठिकाने के आदमी लागत में जबरदस्ती किसी किसान से कोई वस्तु ले लेते तो स्वयंसेवक उसकी सूचना तुरन्त गांव भर में पहुंचा देते और किसान एकत्रित होकर ठिकाने के कर्मचारियों से वे वस्तुएं छीन लेते। यह क्रम चलता रहा।

मेवाड़ राज्य ने डूंगरसिंह भाटी के स्थान पर दीपलाल जी को नायब मुंसरिम बनाकर भेजा, और जब वे सफल नहीं हुए, और राज्य ने समझा कि वे नरमी का व्यवहार कर रहे हैं तो घोर दमन करने के लिए उनको बदलकर क्रूर नायब मुंसरिम माधोसिंह कोठारी को भेजा। आते ही उसने घोर दमन आरम्भ कर दिया। किसानों को बुलाकर कहा कि उदयपुर से लागतें और बेगार लेने की आज्ञा आ गई है, तुम्हें लागतें और बेगार देना चाहिए। पथिकजी ने कहलवा भेजा कि उदयपुर के मुहकमा खास का आज्ञा पत्र मांगो। किसानों ने कहा कि आज्ञा–पत्र दिखलाओ। इस बार वह बौखला गया और उसमें से 51 को गिरफ्तार कर उन्हें खूब पिटवाया।

इसी समय दिल्ली में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। पथिकजी बिजोल्यां आन्दोलन के समाचार प्रकाशन की व्यवस्था करने कानपुर गए हुए थे। उन्होंने तार दिया कि कुछ किसानों को दिल्ली अधिवेशन में भेजो। पंचायत ने माणिक्यलाल वर्मा, चम्पाजी, चतुर्भुजजी तथा लक्ष्मीनारायण आदि किसान पटेलों को दिल्ली भेजा। दिल्ली पहुंचने पर गणेशशंकर विद्यार्थी ने किसानों को गले से लगा लिया और कहा कि शाब्बास..... तुमने वह कार्य कर दिखाया है जिसे कोई नहीं कर सका। तुम साहस के साथ डटे रहो, तुम्हारी विजय होगी। पथिकजी तथा विद्यार्थी जी के प्रयत्नों से कांग्रेस में देशी राज्यों के बारे में काफी चर्चा हुई। पथिकजी ने बिजोल्यां आन्दोलन से राष्ट्रीय नेताओं का परिचय कराया। दिल्ली में ही पथिकजी, गणेशशंकर विद्यार्थी तथा अजमेर के हरबिलास शारदा आदि के प्रयत्नों से राजपूताना और मध्यभारत के देशी राज्यों के कार्यकर्ताओं द्वारा 'राजपूताना मध्यभारत सभा' की स्थापना हुई।

जब बिजोल्यां के किसानों ने कांग्रेस अधिवेशन में महामना मालवीय जी तथा अन्य नेताओं के भाषण सुने तो उन पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। वे सोचने लगे कि जब यह लोग प्रबल ब्रिटिश साम्राज्य से नहीं डरते तो हमारा जागीरदार तो छोटे से ठिकाने का जागीरदार मात्र है, उससे भयभीत होने की क्या बात है? वे अपने अधिकारों की रक्षा के लिए और सजग और कटिबद्ध हो गए।

दिल्ली से लौटने पर क्रूर माधोसिंह कोठारी का दमन और भी भयंकर हो उठा। किसानों को बिना वारंट पकड़कर मंगवाता और उन्हें लागत और बेगार देना स्वीकार है, लिख देने के लिए कहा जाता। इन्कार करने पर उन्हें पीटा जाता और अन्य कष्ट दिये जाते। पुरुषों की अनुपस्थिति में स्त्री और बच्चों को अपमानित किया जाता। स्त्रियां जब बेगार देने से इंकार करतीं तो उन्हें पीटा जाता, उन्हें पकड़कर घसीटा जाता, जिससे उनके शरीर क्षत–विक्षत होकर छिल जाते, कपड़े फट जाते, और वे नंगी हो जातीं। परन्तु वे सब 'पथिकजी की जय' बोलतीं, अत्याचार सहतीं, किन्तु बेगार या लागत नहीं देतीं। मकानों में ताला लगवा दिया जाता, उनका सामान उठवा लिया जाता, किसानों को और उनकी स्त्रियों को बुरी तरह से पीटा जाता, नाना प्रकार के अत्याचार होते किन्तु किसान दृढ रहे। लोगों के पैर काठ में फंसा कर उन्हें चौड़ा कर दिया जाता जिससे शरीर फटता और मर्मान्तक कष्ट होता। किसानों को औंधे मुंह बांधकर

लटका दिया जाता और ऊपर से मार पड़ती। उस समय बिजोल्यां के किसानों पर ऐसे भयंकर अत्याचार होते थे कि उन्हें सुनकर क्रूरता भी कांप उठती। परन्तु पथिकजी ने किसानों का ऐसा असाधारण संगठन किया था कि किसान पुरुष, उनकी स्त्रियां और बच्चे तक उन अमानवीय यंत्रणाओं को सहकर भी विचलित नहीं होते थे। वे "पथिकजी की जय" बोलकर यही कहते मरना मन्जूर है परन्तु लागत, बेगार देना मन्जूर नहीं है।

घरों से सामान उठवा लेना, खड़ी फसल नष्ट करवा देना साधारण बात थी। जंगल से घास लकड़ी न लाने दी जाती थी। उनके पशुओं को पकड़कर उनको बन्द कर दिया जाता। लोगों पर लाठी, तलवार, बल्लम से वार होता। कभी–कभी बन्दूकों से फायर किये जाते। जो व्यक्ति घायल हो जाते जिनकें चोटें आती, जिनके घसीटे जाने से शरीर छिल जाते, उनकी मांडलगढ़ का डॉक्टर राज्य के भय के कारण चिकित्सा भी नहीं करता था। ऐसा घोर दमन कभी सुना भी नहीं गया था।

अब दमन अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया था। तभी बहुत बड़ी संख्या में किसान गढ़ में गए तो ठिकाने के अधिकारियों ने फाटक बन्द कर दिए परन्तु किसानों ने पथिकजी के आदेश से बाहर ही डेरा डाल दिया। उन्होंने कहा हम यहां जेल की तरह ही रहेंगे। जब तक हमारी मांगों को स्वीकार नहीं किया जाता हम यहां से नहीं जावेंगे।

आन्दोलन को बदनाम करने के लिए राज्य ने कुछ पत्रों को रिश्वत देकर पथिकजी को बदनाम करने का यह कहकर प्रयत्न किया कि वे ही किसानों को भड़काते हैं। किसान कुछ नहीं चाहते वहां शान्ति है। राज्य का यह षड़यन्त्र असफल हुआ। 'प्रताप' तथा अन्य समाचार पत्रों के द्वारा देश भर बिजोल्यां के आन्दोलन से परिचित हो गया था। राज्य ने आन्दोलन में फूट डालने की कोशिश की परन्तु वह व्यर्थ ही रह गई।

आन्दोलन को न दबता देख विवश होकर राज्य ने एक जांच कमीशन वैसाख संवत् 1976 अर्थात् अप्रैल 1919 में नियुक्त किया। कमीशन में विन्दूलाल भट्टाचार्य, अफजल अली तथा अमरसिंह राणावत् सदस्य नियुक्त हुए। जब कमीशन बिजोल्यां आया तो पथिकजी के संकेत पर किसानों ने यह मांग की कि जब तक हमारे मुख्य कार्यकर्ता, जो कि जेल में हैं, उन्हें न छोड़ा जावेगा तब तक हमारा पक्ष कमीशन के सामने किस प्रकार रक्खा जावेगा। कमीशन ने आते ही माणिक्यलाल वर्मा, साधु सीताराम दास तथा कुछ अन्य कार्यकर्ताओं को मुक्त कर दिया। किसानों के प्रतिनिधियों ने पथिकजी के द्वारा सुझाए अनुसार बढ़ते हुए भूमिकर, अनुचित लागतें, अमानवीय बेगारों का कच्चा चिट्ठा कमीशन के सामने रखते हुए उन पर हुए जुल्मों का इतिहास बताया और कहा कि यदि हमारे साथ न्याय नहीं हुआ तो हम संघर्ष जारी रखेंगे। प्रतिनिधियों ने ठिकाने की लूट और क्रूर दमन के प्रमाण उपस्थित किये और बतलाया कि ठिकाने ने किसानों का शोषण और दमन ही एकमात्र अपनी नीति बना ली। वह प्रजाहित कोई भी कार्य नहीं करता। कमीशन ने किसानों के पक्ष में फैंसला दिया। ठिकाने के दमन तथा शोषण का विरोध करते हुए उन्होंने सब कैदियों को छोड़ देने तथा लगान, लागत, बेगार के सम्बन्ध में उचित फैंसला किए जाने की शिफारिश की। किसानों को कमीशन ने आश्वासन दिया कि तुम्हारे कष्ट शीघ्र दूर होंगे।

यद्यपि कमिशन के निर्णयानुसार सब कैदी छोड़ दिये गये परन्तु भोग (मालगुजारी) तथा लागतों का प्रश्न फैंसला होने तक स्थगित कर दिया गया। प्रजा पक्ष के लिए उस समय यही बहुत था। जनता की यह अभूतपूर्व विजय थी। जब कैदी छूटे तो किसान स्त्री–पुरुष उमड़ पड़े। गाजे बाजे से जय–जयकार के साथ पुष्पों की वर्षा के बीच उनका अपूर्व स्वागत हुआ। समस्त ऊपरमाल आंचल में उत्साह की लहर फैल गई।

उन दिनों जबकि आन्दोलन चल रहा था। ठिकाना और मेवाड़ राज्य घोर दमन कर रहे थे, तब पथिकजी छिपे–छिपे किसानों को उस भयंकर समय में निराश और हतोत्साह न होने देते। रात्रि को गांव–गांव पैदल चलकर भूखे रहकर मौसम की परवाह न कर पहाड़ों, जंगलों में पुलिस से अपने को बचाते हुए कार्य कर रहे थे। मेवाड़ राज्य की पुलिस जानती थी कि जब तक पथिकजी को नहीं पकड़ा जावेगा तब तक आन्दोलन शान्त न होगा। अस्तु मेवाड़ राज्य की पुलिस किसी भी प्रकार पथिकजी को गिरफ्तार कर लेना चाहती थी। कभी–कभी ऐसा भी होता था कि उनकी गतिविधियों का पुलिस को पता चल जाता और वह उन्हें घेरकर गिरफ्तार करने की योजना बनाती। उस समय पथिकजी नितान्त गहन वनों तथा पहाड़ों की गुफाओं में छिप जाते। उन्हें कई बार हिंसक जन्तुओं के बीच जंगलों तथा पहाड़ की कन्दराओं में छिपना पड़ा, और उन्होंने उन हिंसक जन्तुओं को मारकर अपनी रक्षा की और पुलिस से अपने को बचाने के लिए उन खतरनाक स्थानों में छिपे रहे। कई बार कई दिनों तक उन्हें भूखा रहना पड़ता। छिपने की अवस्था में रात्रि में निकलकर समीपवर्ती खेतों से चने उखाड़कर अथवा मक्का के भुट्टे तोड़ जंगल में घास जलाकर सेंकते और उन्हीं को खाकर फिर जंगल और पहाड़ों की कन्दराओं में छिप जाते। इतिहास की पुनरावृत्ति हो रही थी। प्रातः स्मरणीय प्रताप अपनी मातृभूमि मेवाड की स्वतन्त्रता के लिए पहाड़ और जंगल में रहते और जंगल में जो भी घास अन्न इत्यादि मिल जाता उसे खाते तो पथिकजी किसानों की सामन्ती शोषण और अत्याचार से रक्षा करने के लिए जंगल और पहाड़ों में छिपकर भूखे रहकर भी किसानों के अभूतपूर्व आन्दोलन का साहसपूर्वक संचालन कर रहे थे।

आन्दोलन का संचालन करते समय पथिकजी को जब गांवों में जाना पड़ता अथवा इधर–उधर जाना पड़ता तो वे भेष बदलकर जाते थे। भेष बदलने और निर्भीकतापूर्वक बातचीत करने में वे सिद्धहस्त थे। कई बार ऐसा हुआ कि पुलिस की पथिकजी से मुढभेड़ हो गई परन्तु उनके निर्भीक व्यवहार से पुलिस को तनिक भी संदेह नहीं हुआ कि वे स्वयं ही पथिकजी हैं। हम यहां इस प्रकार की अनेकों घटनाओं में से केवल एक रोचक घटना का वर्णन करेंगे।

एक बार पथिकजी किसानों के एक गांव से आठ दस किसानों के साथ ऊपरमाल से आ रहे थे। मार्ग में सैनिक सवार और सिपाही मिले। पथिकजी का भेष उस समय ठीक ऊपरमाल के किसानों जैसा था। वे घुटनों से ऊपर रेजे (गाढ़े) की ऊँची धोती पहने थे। रेजे की ही किसानों के पहिनने की अंगरखी पहन रखी थी। सिर पर किसानी साफा बांध रखा था और गले में चांदी की लटकती हुई कंठी पहन रखी थी। मिलते ही सैनिकों ने पूछा तुम सब कहां गए थे? कहां हैं तुम्हारे विजयसिंह पथिक? क्यों घुसे–घुसे छिपे फिरते हैं बाहर क्यों नहीं आते? सब साथी किसान तो कुछ भयभीत हो गए, किन्तु स्वयं पथिकजी ने निडर होकर उत्तर दिया "जाओ न नीचे खेड़े में सभा कर रहे हैं, उनके सामने तो जाओ"। सैनिक बोले, लो अभी जा रहे हैं, अभी उन्हें गिरफ्तार करके ला रहे हैं। पथिकजी बोले 'अरे तुम्हारी क्या मजाल है उनके

सामने तो जाओ, तुम्हारी आंखे मिच जावेंगी'। सैनिक पथिकजी का यह ताना सुनकर घोड़ा तेजी से दौड़ाते चले गए और पथिकजी किसानों के साथ ऊपरमाल चले आए। इस प्रकार की घटनाएं प्रतिदिन होती रहती और पथिकजी भेष बदलकर गांवों में घूमते। खतरा अधिक होने पर पथिकजी छिप जाते थे।

उस समय पथिकजी की गिरफ्तारी के लिए समस्त भारत सरकार, मेवाड़ राज्य, ग्वालियर राज्य, बून्दी राज्य, इन्दौर राज्य, और कोटा राज्य पर बहुत जोर डाल रही थी। इसका कारण यह था कि बिजोल्यां ठिकाने से इन पांचों राज्यों की सीमा मिलती थी। पथिकजी एक राज्य की सीमा से निकलकर दूसरे राज्य की सीमा में चले जाते थे। उस समय पथिकजी को इस प्रदेश का बच्चा–बच्चा जानता था और अत्यन्त श्रद्धा से उनका नाम लेता था। इन राज्यों के कुछ कर्मचारी भी पथिकजी को मन ही मन श्रद्धा और आदर से देखते थे। वे कभी–कभी रात्रि में पथिकजी से मिलते भी थे और राज्य की क्या नीति है, उनकी उन्हें सूचना देते रहते थे। ग्वालियर राज्य के सिंगोली टोप के भंवरलाल शर्मा और रामचन्द्र धाकड़ तो उनके अनन्य भक्त बन गए थे। मेवाड़ राज्य के सीमा सैटिलमैंट कमिश्नर त्रिभुवननाथ सुपारी एक दौरे पर उस ओर आए तो उन्होंने गुप्त रुप से पथिकजी से मिलने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने वार्तालाप करते हुए कहा "यह व्यक्ति महान राजनीतिज्ञ है। यही कारण है कि मैं उसके दर्शन करना चाहता हूँ।" उन्होंने कहा– यह पथिकजी की प्रखर बुद्धि और महान राजनीतिज्ञता का प्रमाण है कि उन्होंने देशी राज्यों के सिरमौर मेवाड़ राज्य को आन्दोलन के लिए चुना जिससे कि समस्त देश का ध्यान उस ओर आकर्षित हों और समस्त देशी राज्यों पर उसका प्रभाव पड़े। मेंवाड़ में भी उन्होंने बिजोल्यां को ठिकाना आन्दोलन के लिए चुना जो मेवाड़, ग्वालियर, इन्दौर, कोटा और बून्दी की सीमा पर है जिससे इन पांचों राज्यों के किसानों पर आन्दोलन का सीधा प्रभाव हो और वे भी तैयार हो जावें। उन्होंने खालसे के किसी भी प्रदेश को अपने आन्दोलन का क्षेत्र न बनाकर मेवाड़ के प्रथम श्रेणी के ठिकाने बिजोल्यां को चुना जिससे कि बड़े–बड़े जागीरदारों को भी आन्दोलन से प्रभावशून्य कर दिया जावे। यही नहीं किसानों की पंचायत का सबल संगठन कर उन्होंने किसानों में आन्दोलन संचालन, राज्य संचालन और सेवा कार्य करने की अदभुत क्षमता उत्पन्न कर दी थी। जिसका परिणाम यह होने वाला था कि भविष्य में किसानों का राज्य या जागीरदार भविष्य में शोषण न कर सकेंगे। लागत, बेगार तथा अत्यधिक मालगुजारी के विरुद्ध किसानों को संगठित कर देने से सामन्तशाही की समाप्ति की भूमिका उसने उपस्थित कर दी है। अवश्य ही ऐसा व्यक्ति विलक्षण प्रखर बुद्धिवाला महान राजनीतिज्ञ और महान नेता होना चाहिए। इसी कारण वे उनके दर्शन करना चाहते थे। त्रिभुवननाथ सुपारी का पद मेवाड़ राज्य में बहुत ऊँचा था वे मन्त्रियों के समकक्ष थे। वे गुप्त रुप से पथिकजी से मिले और मिलकर उनसे इतने प्रभावित हुए कि सदैव के लिए उनके अनन्य भक्त बन गए। इसी प्रकार सीमा के उन सभी राज्यों के कतिपय उदारमना राजकर्मचारी पथिकजी को श्रद्धा और भक्ति से देखते थे।

× × × × × ×

हम यह पहले ही कह आये हैं कि कमिशन ने भी सभी कैदियों को छुड़ा दिया था और किसानों को आश्वासन दिया कि लागत और बेगार के सम्बन्ध में आगे फैंसला होगा। परन्तु हुआ कुछ नहीं किसानों को न्याय नहीं मिला। परन्तु फिर भी पंचायत की धाक सारे क्षेत्र में बैठ गई। अभी तक पंचायत में धाकड़ अधिकारी थे किन्तु अब सभी जातियों ने उसमें प्रवेश किया। यह देखकर ठिकाने वाले चौंके, उन्होंने उन जातियों के दो सौ मुखियों को जेल में डाल दिया। घोर दमन किया जाने लगा। पथिकजी ने किसानों को राय दी कि तुम विरोधस्वरुप माल (बिना सिंचाई के गेहूं उत्पन्न करने वाली भूमि) को जोतो और अहाण भूमि (सींची जाने वाली भूमि) को पड़त छोड़ दो। पथिकजी की यह युक्ति थी कि माल की भूमि का लगान नाम मात्र का है, उसको जोतने से ठिकाने की आमदनी बहुत कम होगी, ठिकाने की आर्थिक स्थिति पहले से ही खराब है अतएव उसकी आर्थिक स्थिति डामाडोल हो जावेगी और किसानों के पास खाने को यथेष्ठ अनाज हो जावेगा। यह उनकी प्रशंसनीय सूझबूझ का एक उदाहरण है। वे इस प्रकार ठिकाने की स्थिति को जर्जर बना देना चाहते थे। ठिकाने वाले पथिकजी की इस बात को समझ गए। उन्होंने कहा कि यदि तुम माल की भूमि को जोतोगे तो सींची जाने वाली भूमि का भी लगान देना होगा। एक बार पुनः पंचायत और ठिकाने में संघर्ष छिड़ गया। ठिकाने वाले सारी भूमि का लगान लेना चाहते थे और पंचायत केवल माल की जमीन का जिसे किसानों ने जोता था, केवल उसकी मालगुजारी ही देना चाहती थी। अस्तु पथिकजी के परामर्श से पंचायत ने पहले नए राव साहब को प्रार्थना–पत्र दिया, क्योंकि उसी वर्ष ठिकाने पर से कोर्ट आफ वार्डस (मुंसरमात) उठ गई और राव साहब गद्दी पर बैठे थे। जब राव साहब ने भी पंचायत के प्रार्थनापत्र पर कोई ध्यान नहीं दिया तो पथिकजी ने पंचायत से महाराणा को प्रार्थनापत्र दिलवाया। तार पर तार दिए गए और पथिकजी ने मेवाड़ में तथा 'प्रताप' के द्वारा धुंआधार प्रचार आन्दोलन किया। विवश होकर मेवाड़ राज्य को ठिकाने को आदेश देना पड़ा कि किसानों ने जिस भूमि को जोता है, उसी की मालगुजारी लिया जावे।

उस वर्ष 1919 में अमृतसर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। पथिकजी ने तय किया कि बिजोल्यां का मामला कांग्रेस में रखा जाए। पथिकजी स्वयं अमृतसर कांग्रेस में गए और उन्होंने बिजोल्यां के सम्बन्ध में कांग्रेस की विषय निर्धारिणी समिति में प्रस्ताव रखवाने का प्रयत्न किया। पथिकजी ने लोकमान्य तिलक को बिजोल्यां के किसानों की करुण कथा सुनाई। किसानों के त्याग और बलिदान की जानकारी दी। लोकमान्य तिलक पथिकजी से और उनकी उत्कट देश सेवा से पहले ही परिचित थे। पंचायत संगठन और किसान आन्दोलन के उनके कार्य से बहुत प्रभावित थे। अस्तु उन्होंने बिजोल्यां सम्बन्धी प्रस्ताव रखना स्वीकार कर लिया। स्वयं लोकमान्य तिलक ने बिजोल्यां के सम्बन्ध में प्रस्ताव रखा और केलकर ने उसका समर्थन किया।

महामना मालवीयजी का हिन्दू नरेशों से गहरा सम्बन्ध था, विशेषकर मेवाड़ के महाराणा से और भी अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध था। उनका मत था कि कांग्रेस को देशी राज्यों में आन्दोलन या हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। अतएव उन्होंने इस प्रस्ताव का विरोध किया किन्तु यह आश्वासन दिया कि वे इस मामले को तय कराने का महाराणा से मिलकर स्वयं प्रयत्न करेंगे। महात्मां गांधी ने भी इसका विरोध किया और देशी राज्यों के बारे में कांग्रेस को तटस्थ रहने की सलाह दी। अस्तु प्रस्ताव पास न हो सका परन्तु बिजोल्यां की ओर देश के नेताओं का ध्यान आकर्षित हो गया। उसी समय राजपूताना मध्यभारत सभा ने स्वामी भवानीदयाल सन्यासी के

नेतृत्व में बिजोल्यां के लिए एक कमीशन नियुक्त कर दिया। स्वामी भवानीदयाल सन्यासी के कमीशन ने बिजोल्यां जाकर जांच करने की सूचना महाराणा साहब को दी। महाराणा यह नहीं चाहते थे कि कमीशन मेवाड़ में आवे और जांच करे। अतएव उन्होंने पहले ही अपनी ओर से एक कमीशन नियुक्त किया और उसकी रिपोर्ट आने तक उस कमीशन को प्रतीक्षा करने को कहा। महाराणा की इस युक्ति से कमीशन मेवाड़ न जा सका। महाराणा ने जो जांच कमीशन नियुक्त किया था उसमें पण्डित रमाकान्त मालवीय तख्तसिंह मेहता और ठाकुर राजसिंह थे।

बिजोल्यां ठिकाने तथा आसपास के क्षेत्र में किसान पथिकजी को अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति से देखते थे। मेवाड़ के इस क्षेत्र में पथिकजी महात्मा जी के नाम से विख्यात थे। ग्रामीण पुरुष और स्त्रियां उन्हें अपना उद्धारक और उपकारकर्ता मानकर पूजते थे। पथिकजी को बिजोल्यां के किसानों की जैसी श्रद्धा भक्ति और विश्वास प्राप्त हुआ वैसी श्रद्धा और भक्ति राष्ट्रपिता गांधी को छोड़कर किसी भी अन्य व्यक्ति को प्राप्त नहीं हुई। पथिकजी के प्रति प्रेम और श्रद्धा का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि घरों में स्त्री पुरुष पथिकजी के बारे में गीत गाया करते थे। ग्रामीण महिलाएं कुलदेवी की पूजा करते समय तन्मय होकर पथिकजी के सम्बन्ध में मेवाड़ी में भजन गाया करती थीं। हम यहां उनके सम्बन्ध में केवल दो गीत ही देंगे।

गीत

धन्य धन्य पथिक महाराज, राजस्थान जगानेवाले।
कभी था यह वीरों का स्थान, आज है मिला धूल में मान।।
आपने आकर रखी शान, राष्ट्र के सूत्र कहानेवाले।। धन्य0
कृषक जो थे अति दुर्बल दीन, हो चुके मनुष्यत्व से हीन।
हो रहे बेबस तेरह तीन, उन्हों में एका बढ़ानेवाले।। धन्य0
प्रथम ले बिजोल्यां को साथ, बढ़ाया जग में अपना हाथ।
कराया फिर कांग्रेस का साथ, देश में शक्ति जगानेवाले।। धन्य0
शत्रु गण लगा रहे थे ताक, पड़ी है चहुँ दिश तेरी धाक।
चलेगा किन्तु तुम्हारा नाम, ओ विजय करागे वाले।। धन्य0

मेवाड़ी भजन

म्हाने विजयसिंह आय जगायो ऐ माय,
थारो गुण नहीं भूलां।
मांने जूत्यां सां पिटता बचायो ऐ माय,
थारो गुण मैं नहीं भूलां।
मांका टाबरा ने वीर बणाया ऐ माय,
थारो गुण मैं नहीं भूलां।
मां के डूबता जाति ने बचाई ऐ माय,
थारो गुण मैं नहीं भूलां।
मांने देश प्रेम सिखलायो ऐ माय,
थारो गुण मैं नहीं भूलां।
मांने थारो साँचो ज्ञान करायो ऐ माय,
थारो गुण मैं नहीं भूलां।
मांने सत्याग्रह को पाठ पढायो ऐ माय,
थारो गुण मैं नहीं भूलां।
राज वाला ने नीचो दिखायो ऐ माय,
थारो गुण मैं नहीं भूलां।

भावार्थ– हे माता (कुल देवी) हमें विजयसिंह पथिक ने आकर जगाया, जूतों से पिटने से बचाया, हमारे बच्चों को वीर और बहादुर बना दिया, हम किसानों की डूबती हुई जाति को बचा लिया, उन्होंने हमें देश प्रेम सिखाया, हे देवी आपका सच्चा ज्ञान कराया, सत्याग्रह के पाठ की शिक्षा दी, और राज्यवालों को नीचा दिखलाया। हम आपके गुण कभी नहीं भूल सकतीं।

उस प्रदेश के ग्रामीण पथिकजी के अनन्य भक्त बन गए थे और उनकी पथिकजी पर अटूट श्रद्धा थी। पथिकजी में संगठन की अदभुत शक्ति थी। यह उसी का परिणाम था। राज्य उनके इस कार्य से अत्यन्त भयभीत हो गया था।

केवल ग्रामीण ही नहीं राज्य कर्मचारी भी पथिकजी को कोई सिद्ध पुरुष या महात्मा मानते थे। कई राज्यों की पुलिस उनको पकड़ने के लिए अथक परिश्रम कर रही थी। अंग्रेजी सरकार के तथा राज्यों के जासूस समस्त प्रदेश में उनकी खोज कर रहे थे। ब्रिटिश सरकार की यह कठोर आज्ञा थी कि उन्हें किसी भी प्रकार पकड़ा जावे। परन्तु लाख प्रयत्न करने के बाद भी पथिकजी नहीं पकड़े जा सके। फिर ऐसा नहीं था कि वे सदैव कहीं छिपे पड़े रहते हों, जहां

भी कहीं सभा होती, पथिकजी वहीं–कहीं समीप ही छिपे रहते, और सभा का संचालन करते। समस्त क्षेत्र में घूम–घूमकर आन्दोलन का संगठन करते।

साधु सीताराम दास ने लिखा है कि एक बार मांजी के खेड़े में सभा आयोजित की गई जो बिजोल्यां से दो मील दूर है। हजारों की संख्या में लोग जमा थे। पथिकजी अपने अनन्य भक्त लक्ष्मण पटेल के मकान में छिपे हुए थे। उसी समय ठिकाने के सिपाही दल बल सहित आ धमके और साधु सीताराम दास से कहा कि हमें महात्माजी (पथिकजी को बिजोल्यां के लोग महात्माजी कहते थे) के दर्शन तो करा दो। साधु सीताराम दास ने जाकर प्रार्थना की कि दो चार शब्द आप भी कह दीजिए। सिंह के समान पथिकजी निकलकर बाहर आए, सिपाहियों की ओर देखकर कहा– आईए, गिरफ्तार कर लीजिए। सबों ने पास जाकर उनके पैरों में अपना शीश नवाया और चरण स्पर्श करके वे पास बैठ गए। पथिकजी के ओजस्वी भाषण को सुनने के बाद सिपाही बिजोल्यां चले गए। प्रान्त भर में उनके देवत्व की छाप पड़ी हुई थी। लोग उन्हें देवता का स्वरुप मानते थे।

पथिकजी की निर्भीकता, साहस, सूझबूझ, संगठन शक्ति, नेतृत्व के गुण और कठिनाईयों की परवाह न करने के कुछ ऐसे गुण थे कि लोग चकित थे और तरह तरह की चर्चाएं उनके सम्बन्ध में फैल गई थीं। एक बार जबकि वह वन में भटक रहे थे कि एक शेर मिला। उस शेर का शिकार किया और बहुत थके होने के कारण वहीं झाड़ी में शेर का सिरहाना लगाकर सो गए। उसी समय एक पुलिस कर्मचारी एक दो सिपाहियों के साथ आया और उन्हें ऐसी दशा में सोता देखा तो भयभीत होकर भाग गया। उनको यह विश्वास हो गया कि पथिकजी को सिद्धि प्राप्त है। वह तब से उनका बड़ा भक्त बन गया था। एक बार वह पथिकजी से एकान्त में मिला और कहा कि आपके पास कौनसी सिद्धि है कि हमारी नाकों में दम कर रक्खा है और शेर का सिरहाना लगाकर सोते हो? पथिकजी यह सुनकर हंस दिए। पथिकजी को लोग चमत्कारी पुरुष मानने लगे थे।

यद्यपि महात्मा गांधी रियासतों में कांग्रेस के हस्तक्षेप के विरोधी थे परन्तु बिजोल्यां सत्याग्रह ने उन्हें भी आकर्षित किया था। फरवरी 1918 में महात्मा गांधी ने बिजोल्यां में जानकारी प्राप्त करने के लिए पथिकजी को बम्बई बुलवाया और पथिकजी ने बिजोल्यां के किसानों की करुण गाथा तथा उनकी तपस्या और साहस की कहानी महात्माजी को सुनाई। महात्माजी पथिकजी तथा बिजोल्यां आन्दोलन से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने महादेव देसाई (अपने सचिव) को वहां की जांच करने के लिए पथिकजी के साथ बिजोल्यां भेजा। महादेव देसाई पथिकजी के साथ बिजोल्यां आए। बिजोल्यां आन्दोलन, किसानों के कष्टों इत्यादि की पूरी जानकारी प्राप्त करने के बाद महादेव देसाई ने वहां की रिपोर्ट महात्मा गांधी के समक्ष प्रस्तुत की। महात्माजी पथिकजी की कार्यशक्ति, साहस, तथा संगठन दक्षता से बहुत अधिक प्रभावित थे। किन्तु पथिकजी के भूमिगत रहकर कार्य करने के विरोधी थे। पथिकजी का कहना था कि मेवाड़ में जो स्थिति है उसको देखते प्रकट रुप से काम हो ही नहीं सकता। पथिकजी का महात्मा गांधी से इसी बात पर मतभेद था। अन्यथा महात्माजी पथिकजी से बहुत अधिक प्रभावित थे और उनके प्रशंसक थे।

महादेव देसाई ने जब बिजोल्यां की करुण कथा और किसानों के सत्याग्रह आन्दोलन की जांच रिपोर्ट महात्माजी के समक्ष प्रस्तुत की तो महात्माजी ने पथिकजी को वचन दिया कि मेवाड़ राज्य ने शीघ्र ही बिजोल्यां के किसानों को न्याय नहीं दिया तो वे स्वयं बिजोल्यां सत्याग्रह का संचालन करेंगे। महात्मा गांधी उसी समय बिजोल्यां आन्दोलन को तीव्र बनाने के लिए उद्यत थे, परन्तु महामना मालवीयजी ने बापू से कहा– आप तनिक ठहरें, मुझे प्रयत्न कर लेने दें। इस कारण बापू ने उस समय आन्दोलन का संचालन करना उचित न समझा।

उधर जो महाराणा फतहसिंह ने कमीशन नियुक्त किया था वह जांच के लिए बिजोल्यां नहीं आया। उसने बिजोल्यां के पंचों को उदयपुर बुलाया।

पथिकजी की राय से बिजोल्यां पंचायत ने माणिक्यलाल वर्मा के नेतृत्व में मोतीचन्द खेड़ा, हीरालाल जावदा, गोकुलजी जावदा, गोकुलजी गिरधरपुरा तथा कालूजी कल्याणपुरा को कमीशन के सामने अपना–अपना पक्ष रखने के लिए भेजा। इन प्रतिनिधियों ने बिजोल्यां के किसानों की कठिनाईयों और दुःख दर्द का सप्रमाण ब्यौरा कमीशन के सामने रखा और लागतों तथा बेगार को बन्द करने तथा बन्दोबस्त करके मालगुजारी निश्चित करने, तथा लाटा और कूता को समाप्त करने की मांग की। कमीशन ने पहले कमीशन की भांति ही किसानों के पक्ष को सही माना और उनको न्याय देने की राय दी। परन्तु कमीशन की राय राय ही रही। फैंसले के लिए जो शर्तें रखी गईं उनसे किसान सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने वे शर्तें मानने से इंकार कर दिया। उधर रियासत भी कमीशन के निर्णय से संतुष्ट न थी। मालवीयजी महात्मा गांधी को दिए हुए वचन के अनुसार बिजोल्यां के सम्बन्ध में महाराणा फतहसिंह से मिलने आए। किन्तु कोई समझौता न हो सका। मालवीयजी का प्रयत्न असफल रहा। रियासत वास्तव में कोई समझौता नहीं चाहती थी। इसका कारण यह था कि अंग्रेज सरकार बिजोल्यां आन्दोलन को अत्यन्त खतरनाक मानती थी। बिजोल्यां किसान पंचायत को वह बोलशैविक रुस के कम्यूनों का दूसरा रुप समझती थी। अस्तु भारत सरकार का परराष्ट्र विभाग मेवाड़ राज्य पर बिजोल्यां आन्दोलन का दमन करने के लिए दबाव डाल रही थी। उधर जागीरदार भी राज्य पर बिजोल्यां के सम्बन्ध में कोई फैंसला न करने के लिए दबाव डालते थे। उन्हें भय था कि यदि लागतें, बेगार, लाटा, कूता समाप्त हो गया तो उनकी जागीरों पर भी उसका प्रभाव पड़े बिना न रहेगा और वे किसानों का शोषण न कर सकेंगे। अस्तु प्रयत्न असफल हुआ और कोई फैंसला न हो सका। पुनः बिजोल्यां में किसान पंचायत और ठिकाना तथा राज्य में संघर्ष छिड़ गया। बिजोल्यां के किसान पुनः एक बार फिर सत्याग्रह के लिए तैयार हो गए और दमन का दौर पुनः प्रारम्भ हुआ।

जब पथिकजी बम्बई में महात्माजी से मिलने गए थे तभी यह बात चली थी कि राजस्थान के जनजीवन को सतेज बनाने के लिए तथा वहां की प्रजा के अभियोगों को प्रकाश में लाने के लिए एक पत्र निकालना चाहिए। जमनालाल बजाज महात्माजी के अनन्य भक्त थे। राजस्थान के होने के नाते उनकी राजस्थान में भी रुचि थी। अतएव यह निश्चित हुआ कि जमनालाल बजाज आर्थिक सहायता प्रदान करें और वर्धा से राजस्थान सम्बन्धी पत्र का पथिकजी सम्पादन करें और संचालन करें। अतएव 1919 में पथिकजी वर्धा चले गए। जमनालाल बजाज ने पांच हजार रुपये प्रेस के लिए दिए और पथिकजी बिजोल्यां से वर्धा चले गए। वहां से उन्होंने 'राजस्थान केसरी' पत्र निकालना आरम्भ किया। पथिकजी की ओजस्वी लेखनी, गम्भीर

अध्ययन और क्रान्तिकारी विचारधारा से ओत–प्रोत राजस्थान केसरी पथिकजी के सम्पादकत्व में निरीह और पीडित राजस्थानी जनता का एक प्रभावशाली सहारा बन गया था।

वर्धा में पथिकजी को रामनारायण चौधरी जैसा कर्मठ सहायक मिल गया। चौधरी जी ने उनके सम्बन्ध में लिखा है– "पथिकजी कलकत्ता कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में सम्मिलित हो गांधी जी के असहयोग आन्दोलन की प्रेरणा लेकर कलकत्ता से सीधे वर्धा पहुंचे। उनकी बिजोल्यां की कारगुजरियां पहले ही सुन चुका था। उनकी सूझबूझ, साहस और उनके ग्राम नायक के गुणों का मैं प्रशंसक बन चुका था। जिस दिन वे वर्धा आए हम लोग स्टेशन पर उनके स्वागत के लिए गए। उनका लम्बा कद, कानों पर बंधी सिक्खों की सी दाढ़ी, राजपूती ढंग का साफा, कमर में लटकती हुई सुनहरी मूठ की तलवार, चौड़ी पेशानी और तेजस्वी आंखों ने फौरन बतला दिया कि जिस आदमी की तलाश थी वह मिल गया। उन्हें भी मुझमें एक उपयोगी साथी मिल गया। उनका प्रस्ताव आते ही मैं व्यापार धन्धा छोड़कर उनके साथ हो लिया।"

'राजस्थान केसरी' के सम्पादक पथिकजी थे। राम नारायण चौधरी उसके प्रकाशक थे। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी अर्जुनलाल सेठी तथा केशरीसिंह बारहठ भी राजस्थान केसरी में लिखते थे। बारहठजी के जामाता ईश्वरदानजी जो पथिकजी के भक्त थे, प्रेस के मैनेजर बने तथा हरिभाई किंकर सहायक मैनेजर के रुप में काम करते थे। पथिकजी तो पत्र के प्राण ही थे।

'राजस्थान केसरी' का सम्पादन बहुत अधिक सफल रहा। मध्य भारत तथा राजस्थान के देशी राज्यों में उसकी धाक बैठ गई। रियासतों की पीड़ित तथा शोषित प्रजा का वह एकमात्र अवलम्ब बन गया था। पथिकजी की सबल लेखनी और क्रान्किारी विचारधाराओं ने सामन्तवाद को भयभीत कर दिया। उस समय तक किसी को भी ज्ञात न था कि पथिकजी में सम्पादन कला के गुण जन्मजात हैं। उनके सम्पादकीय लेखों में गम्भीर अध्ययन की स्पष्ट छाप रहती थी। बहुत शीघ्र ही पथिकजी ने पत्रकार जगत में धाक जमा ली। वे राजनीति के विषय पर सामर्थ्य और सगर्भता के साथ लिखते थे, जिस प्रकार भारत के प्रसिद्ध अंग्रेज पत्रों के सम्पादक लिखते थे। परन्तु वे ब्रिटिश सरकार व देशी राज्यों पर तीखा वार करते थे। जो समाचार आते उनमें पथिकजी विराम चिन्ह लगाकर टिप्पणी और जोड़ देते। उनकी वह शैली बहुत प्रभावशाली थी।

1920 में नागपुर की ऐतिहासिक कांग्रेस हुई। पथिकजी ने अपने सहयोगियों की सहायता से देशी राज्यों के अत्याचारों की एक प्रदर्शनी उस अवसर पर आयोजित की। यह एक बिलकुल नई चीज थी और पथिकजी की मौलिक सूझ थी। अंग्रेजी राज्य का वरदहस्त और छत्रछाया पाकर सामन्तशाही निरंकुश होकर कैसे भयानक और रोमांचकारी अत्याचार कर सकती है उसका एक सही चित्र भारत की राष्ट्रीय आत्मा ने, कांग्रेस के प्रतिनिधियों और दर्शकों ने पहली बार देखा। उस प्रदर्शनी के फलस्वरुप ब्रिटिश भारत से आए हुए देशभक्तों को पहली बार देशी राज्यों में निवास करने वाली निरीह जनता की दुहरी दासता में पिसने का दर्दनाक दृश्य देखने को मिला। सबका ध्यान अनायास ही देशी राज्यों की ओर खिंच गया। उस सहानुभूति का लाभ उठाकर पथिकजी ने यह प्रयत्न किया कि कांग्रेस देशी राज्यों की स्वतन्त्रता को अपना ध्येय स्वीकार कर ले। उनका प्रयत्न सफल हुआ और नागपुर कांग्रेस के विधान में

मौलिक परिवर्तन किया गया। ब्रिटिश भारत की संकुचित परिधि को छोड़कर कांग्रेस ने सम्पूर्ण हिन्दुस्तान की आजादी प्राप्त करना अपना ध्येय घोषित किया और देशी राज्यों की प्रजा को भी कांग्रेस का प्रतिनिधि बनने का अधिकार दिया। उस दिन पथिकजी और उनके सहयोगियों की प्रसन्नता का ठिकाना न था। कारण यह था कि देशी राज्यों में जागरण का काम करने वालों को उस समय तक खतरा दिखलाई देता था कि कहीं ऐसा न हो कि ब्रिटिश भारत के लोग शासन और अधिकार प्राप्त कर सरकार और नरेशों से कोई ऐसा समझौता कर ले जिससे भारत मां के दो भाग हो जावें और देशी राज्यों का कमजोर हिस्सा पराधीनता और विवशता तथा अत्याचार की चक्की में आज की भांति पिसता रहे। पथिकजी जानते थे कि यदि ऐसा हुआ तो देशी राज्यों की प्रजा का भविष्य अंधकारमय हो जावेगा और वह सदैव के लिए पराधीन बन जावेगी। यही कारण था कि उन्होंने कांग्रेस विधान में ऊपर लिखा परिवर्तन कराने के लिए भरसक प्रयास किया और वे सफल हुए। यह पथिकजी की राजनीतिक सूझ, कुशाग्र बुद्धि और दूरदर्शिता का एक सुन्दर उदाहरण है।

पथिकजी जब बम्बई में महात्माजी से बिजोल्यां आन्दोलन के सम्बन्ध में मिले थे तो उस समय तक महादेव देसाई से उन्होंने बिजोल्यां के किसानों की शिकायतों की जांच कर ली थी और उन शिकायतों के सच्चा होने के कारण उन्होंने मालवीयजी के द्वारा प्रयत्न कराया था तथा स्वयं उन कष्टों को दूर करने के लिए महाराणा को लिखा था। साथ ही उन्होंने पथिकजी को यह वचन भी दिया था कि यदि बिजोल्यां के किसानों के सारे कष्ट दूर नहीं हुए तो वे स्वयं बिजोल्यां जाकर सत्याग्रह का संचालन करेंगे।

नागपुर कांग्रेस में पथिकजी महात्मा गांधी से बिजोल्यां आन्दोलन के सम्बन्ध में मिलने गए तो उन्हें देखते ही महात्माजी बोले– "क्यों पथिकजी कांग्रेस ने असहयोग आन्दोलन छेड़ दिया है परन्तु मैने आपको बिजोल्यां आन्दोलन का स्वयं संचालन करने का वचन पहले ही दे दिया था। कहिए कांग्रेस का असहयोग आन्दोलन चलाऊं या पहले बिजोल्यां सत्याग्रह के संचालन का अपना वचन पूरा करूँ।" पथिकजी महात्माजी के वचन सुनकर गदगद और आत्मविभोर हो गए। साहस के साथ बोले– "नहीं महात्माजी, आप देश की स्वतन्त्रता के लिए इस महान कार्य को सम्हालिए। यह छोटे–मोटे काम हमारे लिए छोड़ दीजिए। जागीरदारों और राजे रजवाड़ों से तो हम आपके अनुयायी ही निपट लेंगे।" गांधीजी से आशीर्वाद लेकर पथिकजी ने देशी राज्यों के कार्य को अधिक सतेज करने का संकल्प किया। उसी समय पथिकजी के मस्तिष्क में ऐसी संस्था को स्थापित करने का विचार चक्कर मारने लगा कि जो राजस्थान की सेवा के लिए देशभक्त युवकों का संगठन करे।

इधर जब पथिकजी वर्धा चले आए तो बिजोल्यां का कार्य अपने अनन्य सहयोगियों और कार्यकर्ता माणिक्यलाल वर्मा तथा साधु सीताराम दास को सौंप आए। वर्धा से ही वे उनका मार्गदर्शन करते थे। पथिकजी के पास बराबर बिजोल्यां की डांक जाती और वे अपने अनुयायियों को किस परिस्थिति में क्या करना है इसका निर्देश बराबर देते रहते थे।

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि रियासतों ने कमीशन की शिफारिश को नहीं माना और जागीरदार तथा पंचायत में संघर्ष ठन गया। इस बार बिजोल्यां के किसानों को ठिकाने

तथा राज्य की सम्मिलित शक्ति तथा दमन का सामना करना पड़ा। परन्तु बिजोल्यां पंचायत ने उसका बड़े साहस और धैर्य के साथ सामना किया।

पथिकजी के वर्धा चले आने पर भी उनका मन बिजोल्यां के किसानों में लगा रहता था। वे अपने कार्यक्षेत्र बिजोल्यां तथा मेवाड़ से बहुत दूर पड़ गए थे। उनके मन में बिजोल्यां की भांति राजस्थान के राज्यों में किसानों में सबल संगठन खड़ा करने और वहां की प्रजा को दुहरी दासता से मुक्ति दिलाने की तीव्र भावना जागृत हो गई थी। बिजोल्यां के किसानों को पंचायत पग-पग पर उनके नेतृत्व और मार्गदर्शन की आवश्यकता थी। वर्धा रहकर यह सम्भव नहीं था। उधर 'राजस्थान केसरी' को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हो चुकी थी। राजस्थान और मध्यभारत में वह पीड़ित जनता का एकमात्र सहारा था। सरकार तथा देशी नरेशों पर उसकी धाक जम चुकी थी। अतएव उसको छोड़ देना भी कठिन था। उसको प्रभावशाली बनाने में पथिकजी और उनके साथियों को कठिन परिश्रम और त्याग करना पड़ा था। परन्तु पथिकजी को उनका कार्यक्षेत्र पुकार रहा था। वे कर्मयोगी थे, 'राजस्थान केसरी का मोह उन्हें बांध न सका। एक बात और भी थी, 'राजस्थान केसरी' श्री जमनालाल बजाज की आर्थिक सहायता पर निर्भर था। अतएव उनका पत्र पर प्रभाव होना स्वाभाविक था। पथिकजी जैसे क्रान्तिकारी विचारधारा के राष्ट्रकर्मी का जमनालाल बजाज की विचारधारा से मेल बैठाना कठिन था। पथिकजी दृढ़ विचार के व्यक्ति थे। वे समझौते की भाषा नहीं जानते थे। अतएव उनके मन में एक स्वतन्त्र पत्र और व्रतधारी देशभक्त युवकों का एक संगठन बनाने का संकल्प दृढ़ हो गया था। उस समय पथिकजी पर से ब्रिटिश भारत में आने पर जो प्रतिबन्ध लगा हुआ था, वह सरकार ने उठा लिया। अस्तु पथिकजी ने निश्चय कर लिया और अजमेर चले गए। अजमेर आकर उन्होंने प्रसिद्ध संस्था 'राजस्थान सेवा संघ' की स्थापना की और 'नवीन राजस्थान' पत्र प्रकाशित करना आरम्भ कर दिया। अजमेर बिजोल्यां के समीप था अस्तु बिजोल्यां आन्दोलन का निर्देशन भी वे वहां से कर सकते थे।

उस समय बिजोल्यां आन्दोलन बहुत तीव्र हो उठा था। उसका प्रभाव बिजोल्यां के बाहर अन्य प्रदेशों पर भी पड़ रहा था। पंचायत की आज्ञा के अनुसार किसानों ने ठिकाने की आज्ञा न मानना, ठिकाने को मालगुजारी तथा अन्य कोई कर न देना, ठिकाने को एक भी लाग और बेगार न देना, कचहरी और पुलिस से कोई वास्ता न रखना, कहने का तात्पर्य यह कि ठिकाने का पूर्ण बहिष्कार कर देना अपना मुख्य कार्यक्रम बना लिया था। दमन भी खूब हुआ, मारपीट, लाठी, यातना, जेल, जुर्माना सभी कुछ ठिकाने ने किया; कोई कसर दमन करने में नहीं छोड़ी। परन्तु पथिकजी की सूझ भी विलक्षण थी, उन्होंने पंचायत को आदेश दिया कि सत्याग्रही किसान बिजोल्यां छोड़ दें। उसमें न जावें बाहर जंगलों में डेरे डाल दें। शराब छोड़ दें, शादी और मौसर (मृत्युभोज) बन्द रखें और बिजोल्यां की सारी जमीन पड़त रखकर पास के ग्वालियर, इन्दौर, कोटा, बून्दी राज्यों में खाने भर के लिए खेती कर लें। किसानों में फूट न पड़ने देने, उनकी आर्थिक स्थिति भयावह न होने देने, और उसे मजबूत रखने और ठिकाने को आर्थिक दृष्टि से पंगु बनाकर झुकाने के लिए यह कार्यक्रम बहुत उपयोगी और आवश्यक था। पथिकजी के इस सुझाव पर पंचायत ने अमल भी इस कड़ाई से किया कि चार वर्ष तक ठिकाने को न तो लगान ही मिला और न उसकी कचहरी में मुकदमें ही गए। शराब की दुकानों का पूर्ण रुप से बहिष्कार ही रहा और शादी तथा गमी से सम्बन्धित भोज इत्यादि सामाजिक कृत्य रुके रहे। पथिकजी का

उस समय उन प्रदेशों में ऐसा चमत्कारी प्रभाव था कि जब कोई भी प्रश्न राज्य वाले तथा ठिकाने वाले किसानों से पूछते तो उन्हें एक ही उत्तर मिलता कि महात्माजी (पथिकजी) से पूछकर उत्तर देंगे। इस आन्दोलन में छोटे जागीरदारों की दशा अत्यन्त दयनीय हो गई थी। वे लोग गुप्त रुप से पथिकजी के पास जाते और उनकी सभी शर्तें, लाग, बेगार के सम्बन्ध में मान लेते। तब पथिकजी के आदेश पर राजस्थान सेवा संघ से उन गांवों के पटेलों और पंचायतों को लिख दिया जाता कि उक्त जागीरदार ने संधि कर ली है। बेगार और लागत न लेने का उसने इकरार कर लिया है, उसको लगान किसानों से उगहाने देना। पथिकजी की आज्ञा किसानों में पवित्र आदेश और राज्य आज्ञा से भी बढकर थी। समस्त ऊपरमाल आंचल में पथिकजी उस समय बिना मुकुट के नरेश के समान श्रद्धा और भक्ति के पात्र बन चुके थे।

यहां यह बतला देना आवश्यक है कि ठिकाने की हालत बहुत खराब हो गई थी। राव साहब के रसौड़े का तथा निज का खर्चा चलना कठिन हो गया था। अस्तु राव साहब भी समझौता कर लेना चाहते थे। इसी उद्देश्य से उन्होंने कई बार पंचायत से संधि वार्ता करनी चाही तो पंचायत ने उनसे पथिकजी के पास जाने को कहा। जब आन्दोलन बहुत उग्र था और ठिकानों का दमन चरम सीमा पर पहुंच चुका था तो पथिकजी को यह आशंका होने लगी कि किसान कहीं उत्तेजनावश कुछ उपद्रव न कर बैठें, अस्तु पथिकजी ने अर्जुनलाल सेठी को किसानों को शान्त रहने और सत्याग्रह पर डटे रहने के लिए प्रेरित करने के लिए भेजा। राव साहब ने सेठी पर यह इच्छा प्रकट की कि वे पथिकजी से कहकर ठिकाने का किसान पंचायत से समझौता करवावें। उसी समय बेगार प्रथा की जांच करने के लिए पथिकजी कोटा आये हुए थे। वे बिजोल्यां की ओर आ रहे थे। मार्ग में बड़गांव में उन्हें खबर मिली कि सेठीजी बिजोल्यां से लौट रहे हैं। अतएव वे बड़गांव में ही रुक गए। सेठीजी ने राव साहब की समझौते की इच्छा बतलाई। अस्तु पथिकजी वहीं रुक गए और ठिकाने तथा पंचायत के प्रतिनिधियों को बुलावा भेजा। ठिकाने के प्रतिनिधि तथा पंचायत के प्रतिनिधि पहुंच गए। एक सप्ताह तक संधि की शर्तों पर बहस चलती रही। यद्यपि पथिकजी उस समय बहुत अस्वस्थ्य थे परन्तु उन्होंने अपने स्वास्थ्य की चिंता न कर एक सप्ताह तक प्रातःकाल से सायंकाल तक संधि की चर्चा में भाग लिया। ठिकाने के प्रतिनिधि बेगार छोड़ने को तैयार नहीं थे। संधि चर्चा बेगार प्रश्न को लेकर उलझन में पड़ गई। समझौता न हो सका। उधर अजमेर में राजनैतिक सम्मेलन होने वाला था। पथिकजी तथा अन्य कार्यकर्ताओं को वहां जाना था, अतएव पथिकजी सम्मेलन के बाद पुनः वापस आने का वचन दे चले गए। सम्मेलन समाप्त होने पर पथिकजी वचन के अनुसार पुनः समझौता करने कोटा आए। परन्तु ठिकाने के कर्मचारियों ने कारणवश न आने की सूचना भेज दी, अस्तु पथिकजी जयपुर की ओर चले गए।

जब पथिकजी जयपुर चले गए तो उस बीच में पुनः राव साहब ने किसान पंचायत से समझौते की बात चलाई। बात यह थी कि ठिकाने वाले किसानों से सीधा समझौता कर लेना चाहते थे। परन्तु किसान इसके लिए तैयार नहीं हुए। उन्होंने अपने प्रतिनिधि पथिकजी के पास भेजे और उन्हें सूचित किया कि राव साहब समझौता करने के लिए तैयार हैं, आप स्वयं आइए या किसी को भेजिए। पथिकजी ने रामनारायण चौधरी को भेजा और शीघ्र ही स्वयं बिजोल्यां आने का वचन दे उन्हें विदा किया। यद्यपि पथिकजी का उन दिनों स्वास्थ्य बहुत खराब था किन्तु समझौता कराने की भावना से वे अजमेर लौटे और वहां से बिजोल्यां आए। परन्तु उनके

आने से पहले ही राव साहब उदयपुर चले गए। बिजोल्या में वे कई दिन ठहरे परन्तु संधि की चर्चा की बात तो दूर रही, उनसे कहा गया कि आप बिजोल्यां से निकल जाइए। बात यह थी कि दयनीय दशा के कारण राव साहब विवश होकर चाहते थे कि समझौता हो जावे परन्तु उनके परामर्शदाताओं तथा अधिकारियों का दबाव पड़ने पर वे पुनः हट जाते थे। मन से तो वे भी नहीं चाहते थे कि वे पंचायत से समझौता करें।

परन्तु स्थिति बिगड़ती जा रही थी, अस्तु विवश होकर पुनः ठिकाने ने समझौते की बात चलाई। ठिकाने के कर्मचारी तथा पंचायत के पंच दोनों ही अजमेर आकर राजस्थान सेवा संघ के कार्यालय में पथिकजी से मिले। पन्द्रह दिनों तक संधि की शर्तों पर बहस हुई। पथिकजी ने शर्त रखी। प्रायः सभी शर्तों को ठिकाने वालों ने मान लिया। सब कुछ लगभग तय हो चुका था किन्तु ठिकाने वालों ने कुछ छोटी–मोटी शर्तों को न माना और अड़ गए। कारण यह था कि जब पथिकजी के नेतृत्व में संधि चर्चा चल रही थी तब ठिकाने के अधिकारियों को यह ध्यान आया कि यदि पथिकजी के द्वारा किए गए फैंसले को उन्होंने स्वीकार कर लिया तो पथिकजी का प्रभाव बिजोल्यां के किसानों पर और अधिक बढ़ जावेगा और भविष्य में ठिकाने को और अधिक कठिनाईयों का सामना करना होगा। अस्तु वहां उन्होंने उन शर्तों को नहीं माना। सोचा कि इन्हीं शर्तों को बिजोल्यां जाकर स्वीकार कर लेंगे तो पंचायत संधि करने को तैयार हो जावेगी। अन्तिम समझौता बिजोल्यां में किसान पंचायत से होने पर पथिकजी तथा राजस्थान सेवा संघ को उसका श्रेय नहीं मिलेगा।

बिजोल्यां पहुंचकर ठिकाने वालों ने वे सब शर्तें जो उन्होंने अजमेर में नहीं मानी थीं, मान लीं। परन्तु किसानों ने कहा कि जब तक इस फैंसले पर पथिकजी की स्वीकृति की मोहर नहीं लग जाती तब तक हम इसे स्वीकार नहीं करेंगे। अस्तु फैंसला न हो सका और आन्दोलन और दमन पूर्ववत चलता रहा। इस संघर्ष का परिणाम यह हुआ कि लगान न मिलने से ठिकाने की आर्थिक दशा जर्जर हो गई। ठिकाने को लगान, लागत और बेगार न मिलने के कारण ठिकाना बेहद कर्जदार हो गया था। ठिकाने के लिए राव साहब का निजी खर्च चलाना तथा राजकर्मचारियों को वेतन चुकाना कठिन हो गया। ठिकाना कठिन परिस्थिति का सामना कर रहा था।

उधर बिजोल्यां आन्दोलन का प्रभाव समीप की जागीरों पर पड़ने लगा। बारवां, आँतरी, भैंसरोड़गढ़, बेगुं, बस्सी, पारसोली, खैराड़, अमरगढ़ तथा जहाजपुरा के किसान भी उठ खड़े हुए। वहां भी किसान लाग, बेगार तथा जागीरदारों के अत्याचारों के विरुद्ध आन्दोलन करने लगे। यही नहीं भीलों तथा राजस्थान के अन्य प्रदेशों पर भी बिजोल्यां आन्दोलन का प्रभाव पड़ने लगा। अब ब्रिटिश सरकार का धैर्य छूट गया। उसको भय होने लगा कि कहीं यह अग्नि समस्त राजपूताना (राजस्थान) में न फैल जावे। अस्तु सरकार ने मेवाड़ राज्य पर दबाव डाला कि बिजोल्यां आन्दोलन को समाप्त करने के लिए पंचायत से शीघ्र ही समझौता कर लिया जावे।

इस उद्देश्य से एक बड़ा कर्मचारी मंडल बिजोल्यां पहुंचा। ब्रिटिश सरकार की ओर से ए0जी0जी0 हॉलैंड, उनके सेक्रेटरी श्री ओगल्वी, तथा मेवाड़ के रैजीडैन्ट विल्किन्सन, मेवाड़ राज्य की ओर से राज्य के मन्त्री प्रभाषचन्द्र चटर्जी, बिहारीलाल सायर हाकिम तथा ठिकाने के प्रतिनिधि के रुप में कामदार हीरालाल, फौजदार तेजसिंह और मास्टर जालिमसिंह थे।

बिजोल्यां आन्दोलन का महत्व इसी से प्रकट होता है कि स्वयं ए0जी0जी0 को इस छोटे से ठिकाने के मामले को सुलझाने के लिए बिजोल्यां आना पड़ा। जिस ए0जी0जी0 के भवन में जाने पर बड़े–बड़े राजस्थान के महाराजा भय से आतंकित हो जाते थे और जिसकी टेढ़ी भृकुटि को देखकर नरेश थर–थर कांप उठते थे, उसे किसान पंचायत से समझौता करने के लिए स्वयं चलकर बिजोल्यां आना पड़ा। राजस्थान में ऐसा भी हो सकता है यह किसी की भी कल्पना के बाहर की बात थी। पथिकजी के नेतृत्व में किसानों की यह अभूतपूर्व विजय थी।

ए0जी0जी0 ने बिजोल्यां आकर किसानों को बातचीत करने के लिए बुलाया। परन्तु किसान पंचायत ने उत्तर दिया कि हम सन्धि की तभी चर्चा करेंगे कि जब राजस्थान सेवा संघ के प्रतिनिधि को बुलावा जावे। पथिकजी ने इससे बहुत पहले ही स्वयं पर बिजोल्यां प्रवेश पर प्रतिबन्ध होने के कारण राजस्थान सेवा संघ के मन्त्री रामनारायण चौधरी को बिजोल्यां पंचायत की सहायता करने तथा आन्दोलन का संचालन करने में परामर्श देने के लिए भेजा हुआ था। ए0जी0जी0 के सेक्रेटरी का पत्र कैम्प से चौधरी जी के पास इस आशय का आया कि ए0जी0जी0 साहब रावजी और किसानों में समझौता कराने के लिए आए हुए हैं, यदि आप इसमें सहायता देंगे तो राव साहब को प्रसन्नता होगी। चौधरी जी को निमंत्रण मिलने पर किसान पंचायत संधि चर्चा के लिए तैयार हो गई।

किसान सत्याग्रहियों की ओर से माणिक्यलाल वर्मा, पंचायत के सरपंच मोतीचन्द जी, मन्त्री श्रीनारायण पटेल तथा रामनारायण चौधरी प्रतिनिधि होकर गए।

5 फरवरी 1922 को प्रातःकाल दस बजे बिजोल्यां के बाहर तालाब के पास बाग में खुले मैदान में संधि परिषद् की बैठक आरम्भ हुई। दृश्य बिजोल्यां ही नहीं, राजस्थान के इतिहास में अभूतपूर्व था। ऊपरमाल आंचल में यह खबर बड़ी तेजी से फैल गई कि अजमेर से ए0जी0जी0 पंचायत और ठिकाने में संधि कराने के लिए आए हैं। समस्त ऊपरमाल के इलाके से जनता मानो उस बाग में उमड़ पड़ी। नदी की धाराओं के समान सब ओर से आकर जनता इकट्ठी हो गई। हजारों की संख्या में लोग जमा थे। सत्याग्रहियों के मुखों पर विजय का गर्व था किन्तु उनमें मर्यादा और संयम का अभाव न था। यह राजस्थान में पहला अवसर था कि शोषित और पीड़ित किसानों ने जो लम्बे समय से राज्य तथा ठिकाने के द्वारा कुचले जा रहे थे, वे सर उठाकर आत्मविश्वास और गर्व के साथ प्रबल शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार, मेवाड़ के महाराणा, तथा बिजोल्यां के राव साहब के प्रतिनिधि से बराबरी के दर्जे से बातचीत कर रहे थे। किसानों में सत्याग्रह के फलस्वरुप आश्चर्यजनक साहस, स्वाभिमान, आत्मविश्वास और आत्मगौरव जागृत हो गया था। एक ओर ए0जी0जी0 हॉलैंड के साथ मेवाड़ राज्य के प्रतिनिधि और समीप ही ठिकाने के प्रतिनिधि कुर्सियों पर बैठे थे। उनके ठीक सामने रामनारायण चौधरी, माणिक्यलाल वर्मा, सरपंच मोतीचन्द पटेल और मन्त्री नारायणजी पटेल भी कुर्सियों पर बैठे। पंचायत ने निमंत्रण स्वीकार करते समय यह शर्त रख दी थी कि उनके प्रतिनिधि भी अधिकारियों के समान ही कुर्सियों पर बैठेंगे। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि नेतृत्व राजसत्ता के हाथ से निकलकर जनता जनार्दन के हाथों में चला गया। किसानों की हजारों की भीड़ की व्यवस्था ठिकाने की पुलिस के स्थान पर पंचायत के वृद्ध कर्मचारी जो आन्दोलन के समय डाक इस गांव से उस गांव तक ले जाते थे और जिन्हें सत्याग्रही कोतवालजी के नाम से पुकारते थे, कर रहे थे।

इस वायुमण्डल में समझौते की बात आरम्भ हुई। तय यह हुआ कि किसानों की ओर से सरपंच मोतीचन्द पटेल बोलेंगे। मोतीचन्द ने किसानों के अभाव अभियोगों की सूची दे दी। सायर हाकिम बिहारीलाल एक–एक अभियोग को पढते जाते थे। हॉलैंड साहब एक–एक अभियोग सुनते जाते और दोनों पक्षों की दलीलें सुनते जाते और निर्णय देते जाते। छोटी मोटी लागतों के सम्बन्ध में बहस ही नहीं हुई, वे माफ कर दी गईं। जो बड़ी लागते थीं, उनके सम्बन्ध में बहस हुई। ठिकाने के प्रतिनिधि किसानों की किसी महत्वपूर्ण लागत को उठा देने का विरोध करते तो वे बहुत लम्बे वाद–विवाद से भरे व्याख्यान देने लगते। हॉलैंड ने उन्हें कई बार झिड़का और कहा कि मुझे लैक्चर नहीं चाहिएं। यदि तुम्हारे पास कोई ठीक दलील इस मांग के विरुद्ध हो तो पेश करो। उधर किसानों के सरपंच मोतीचन्द छोटा सा निश्चित उत्तर देते और अपने पक्ष की दलीलें देकर चुप हो जाते। हॉलैंड ने उनकी बहुत प्रशंसा की और विपक्षियों को उनसे पाठ पढ़ने को कहा। यदि हॉलैंड साहब कोई बात पूछना चाहते तो मोतीचन्द जी उसका जवाब देते। जब हॉलैंड साहब ने अपना पाईप निकालकर उसे जलाया और पीने लगे तो सरपंच मोतीचन्दजी ने अपनी चिलम सुलगाली और पीने लगे। किसानों की समता की भावना और आत्मविश्वास इतना बढ़ गया है यह देखकर सभी लोग दंग थे। हॉलैंड साहब भी मुस्कराए। हॉलैंड किसानों को आतंकित करने के उद्देश्य से साथ में सेना लाए थे और उसको दस मील दूर मांडल में रखा हुआ था। परन्तु किसान इससे तनिक भी भयभीत नहीं हुए। वे निर्भीकता, आत्मसम्मान तथा आत्मविश्वास के साथ समझौते की बात कर रहे थे। हॉलैंड, रैजीडैन्ट, मेवाड़ के मन्त्री तथा ठिकाने के लोग समझ गए कि किसानों को दबाकर कोई समझौता नहीं किया जा सकता। अतएव जितनी भी अन्यायपूर्ण लागतें थीं सब माफ कर दी गईं। अन्त में बेगार का प्रश्न आया। हॉलैंड ने इस आशय का मसविदा बनाया कि "किसान अपना यह फर्ज स्वीकार करते हैं कि जब कोई राजकर्मचारी उनके गांव में आवेगा तो वे उचित कीमत पर सवारी, मजदूर और सामान जुटा देंगे।" किसान पंचों ने इसको अस्वीकार कर दिया। उस पर रामनारायण चौधरी ने नीचे लिखे अनुसार संशोधन कर दिया– "किसान यह अपना सामाजिक धर्म स्वीकार करते हैं कि जब कोई व्यक्ति उनके गांव में आवेगा तो वे उचित कीमत पर सवारी, मजदूर और सामान जुटाने की भरसक कोशिश करेंगे, कीमत का निर्णय सरपंच करेगा, जबरदस्ती किसी हालत में न की जावेगी।" किसानों ने अपनी सद्भावना के परिणामस्वरुप यह और बढ़ा दिया कि महाराणा साहब तथा रावजी के सेवा का कोई मूल्य न लिया जावेगा। हॉलैंड ने चौधरीजी से कहा– "जाहिरा ढांचे को बहुत न छेड़कर भी आपने तो भीतर से मेरी तजवीज की काया ही पलट दी।" किसानों की ओर सम्बोधन करके उन्होंने कहा– "मेरे लिए तो आपने जगह ही नहीं रक्खी।" इसमें व्यंग्य भी था और गाम्भीर्य भी था। परन्तु किसानों का अभिप्राय स्पष्ट था, सब कुछ कष्ट और पीड़ा सहने पर भी अपने राजा के लिए जो उनके दिल में कोमल भाव था, वह स्थान वे विदेशी नौकरशाही को कैसे दे सकते थे। हॉलैंड ने चौधरीजी द्वारा किए हुए संशोधन की मंजूरी की घोषणा कर दी। किसान पंचों ने भी उसे स्वीकार कर लिया और 'वन्देमातरम' के गगन भेदी नारे के साथ समस्त जनता ने उसका समर्थन किया। समझौता हो गया, किसानों के मुख विजयोल्लास से खिल उठे। उनके त्याग, तपस्या और बलिदान का शुभ परिणाम उनकी शानदार विजय में हुआ था। समस्त ऊपरमाल आंचल में हर्ष की लहर फैल गई।

बिजोल्यां आन्दोलन में ऊपरमाल के किसानों ने जो साहस, त्याग और शौर्य दिखलाया, वह अभूतपूर्व था। पथिकजी के नेतृत्व में उनका दृढ़ संगठन हो गया था कि जिसके समक्ष सामन्तवाद का गढ़ ढह गया और ब्रिटिश सरकार को भी झुकना पड़ा। बिजोल्यां आन्दोलन में केवल पुरुषों ने ही भाग नहीं लिया, स्त्रियों और बच्चों ने भी अदभुत त्याग और शौर्य का प्रदर्शन किया। बिजोल्यां आन्दोलन की घटनाएं इतनी रोमांचकारी और प्रेरणाप्रद हैं कि जिनकी समता कहीं ढूंढने से भी नहीं मिल सकती। कई बार ऐसा हुआ कि जब किसान पुरुष ठिकाने के दमन के कारण निराश हो उठे और आन्दोलन को बन्द करने के सम्बन्ध में विचार कर रहे थे तो स्त्रियों को मालूम हुआ। वे इकट्ठी होकर पहुंचीं और अपने पुरुषों को धिक्कारकर कहा कि यदि तुमसे नहीं हो सकता तो हम आन्दोलन करेंगी और तुम लोग चूड़ियां पहनकर घरों में बैठो। ऐसी बहुत सी घटनाएं बिजोल्यां आन्दोलन में घटी थीं, जिनका उल्लेख यहां स्थानाभाव के कारण नहीं किया जा सकता।

जिन लोगों ने इस आन्दोलन में जेल, जुर्माना, कुर्की, मारपीट, अपमान और लाठी खाई थीं उनकी सूची बहुत लम्बी है। परन्तु माणिक्यलाल वर्मा तथा साधु सीताराम दास पथिकजी के दाहिने हाथ थे। माणिक्यलाल वर्मा के रुप में इस आन्दोलन के फलस्वरुप एक सफल मार्गदर्शक किसानों को प्राप्त हो गया। पथिकजी के नेतृत्व में वर्माजी ने उस आन्दोलन में किसानों की महान सेवा की; वह कभी नहीं भुलाई जा सकती। राजस्थान सेवा संघ ने बाद में सिरोही, बून्दी, मेवाड़ के अन्य प्रदेशों में जहां पथिकजी के नेतृत्व में आन्दोलन किए, वर्माजी पथिकजी के दाहिने हाथ थे।

बिजोल्यां आन्दोलन की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि पथिकजी ने बाहर से उसके लिए आर्थिक सहायता नहीं ली। आन्दोलन पूर्ण रुप से स्वावलम्बी था। बिजोल्यां के किसान ही उसके लिए अर्थ साधन जुटाते थे। यही कारण था कि आन्दोलन इतना तेजवान, प्रभावशाली और दृढ़ था। स्वावलम्बन ही उसका सबसे बड़ा बल था और यही कारण था कि इतने लम्बे समय तक चलने पर भी उसमें शिथिलता नहीं आई और न कहीं दरार पड़ी।

1922 का कांग्रेस अधिवेशन अहमदाबाद में हुआ था। पथिकजी के नेतृत्व में बिजोल्यां के 29 प्रतिनिधि गए। माणिक्यलाल वर्मा तथा साधु सीताराम दास भी उनमें थे। उस समय महात्मा गांधी ने बिजोल्यां के किसान प्रतिनिधियों को 30 मिनट का समय बातचीत करने के लिए दिया था। साथ में एक ऐसे महानुभाव भी पहुंच गए जो पथिकजी की विचारधारा के विरोधी थे। उन्होंने पहुंचते ही आरम्भ में प्रश्न किया–

"बापूजी हमें देशी राज्यों में क्या करना चाहिए?" महात्मांजी ने उत्तर दिया– "भाई कांग्रेस एजेंडा साफ है कि देशी राज्यों में हमें शिक्षा प्रचार, खादी प्रचार और मद्यनिषेध का रचनात्मक कार्य करना चाहिए।" उक्त महानुभाव ने फिर प्रश्न किया– "आगे वहां तकलीफें हों तो कैसे मिटेंगी?" बापू ने कहा– "भाई यह भी साफ है कि उन तकलीफों को सहन करो।" फिर उन्होंने प्रश्न किया कि यदि तकलीफें सहन करने की शक्ति न हो तो? बापूजी ने फिर उत्तर दिया कि "यह भी साफ है, हजरत कर दो।"

उस प्रश्नोत्तर से बिजोल्यां के प्रतिनिधियों को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह महानुभाव उनके किए पर पानी फेर रहे हैं। तब पथिकजी बोले "बापूजी यह तो हिजड़ो का कार्य है।" बापू ने

तुरन्त ही उत्तर दिया "मैं भी तो उन्हीं के लिए कहता हूँ।" पथिकजी बोले हम तो हिजड़े नहीं हैं। बापूजी ने कहा– "तुम तो जो मेवाड़ राज्य में कर चुके वह आदर्श हो।" बिजोल्यां के किसान प्रतिनिधि प्रसन्न हो गए। उक्त महानुभाव जो अपने को कट्टर गांधीवादी कहते थे हतप्रभ होकर चुप हो गए।

पथिकजी ने महात्मा गांधी से फिर प्रार्थना की कि बापूजी यह बिजोल्यां के 29 किसान प्रतिनिधि आए हैं, इनको बिजोल्यां के लिए आप क्या संदेश देते हैं? महात्मा गांधी जी ने कहा कि मैं बिजोल्यां वालों को क्या संदेश दूं? बिजोल्यां के प्रतिनिधि तो मुझे संदेश देने आए हैं कि बापू तूने तो सत्याग्रह छेड़ा वह असफल रहा, हम लोग सफल करके आए हैं। पथिकजी और उनके साथी गदगद हो गए। उन्हें विश्ववंद्य बापू का आशीर्वाद मिल गया।

पंचम् अध्याय

राजस्थान सेवा संघ

यह तो हम पहले ही कह आए हैं कि वर्धा में ही राजस्थान की सेवा करने के लिए एक संस्था स्थापित करने का विचार पथिकजी के मस्तिष्क में उत्पन्न हो गया था। उनका विचार था कि वह संस्था ऐसी हो कि उसमें देशभक्त युवक राजस्थान और देश की जन्मभर सेवा करने का व्रत लेकर सम्मिलित हों। उनकी मान्यता थी कि देश की दासता को दूर करने और स्वतन्त्रता प्राप्त करने का महान और कठिन कार्य तभी सफल हो सकता है जब कुछ ऐसे दीवाने देशभक्त युवक तैयार हों कि जिन्होंने आजन्म देश सेवा का व्रत लिया हो और अपना सारा समय और शक्ति उस महान कार्य में लगाने को तैयार हो। उनकी यह भी मान्यता थी कि देश की जो उस समय की दशा थी, ब्रिटिश साम्राज्यशाही और निरंकुश सामन्तशाही का जैसा कठोर दम घोटने वाला कठोर शासन था। उसमें धनवान, जायदाद वाले, और व्यापार तथा राज्य की सेवा करने वाले लोग देशभक्ति की भावना से प्रेरित होते हुए भी अधिक कुछ नहीं कर सकते थे। वे अधिक से अधिक देश सेवा के कार्यों से केवल सहानुभूति भर कर सकते थे। देश को स्वतन्त्र बनाने के लिए ब्रिटिश सरकार तथा देशी राज्यों से मोर्चा लेने का काम तथा देश में आजादी का संघर्ष चलाने का काम, वे फक्कड़, राजनैतिक, सन्यासी ही कर सकते हैं जिन्होंने सब कुछ छोड़कर भीख मांग कर आजन्म देश सेवा का व्रत लिया हो। इस प्रकार उनकी यह भी मान्यता थी कि धार्मिक झगड़ों में भाग लेने वाले लोग भी न तो एक संयुक्त राष्ट्र की रचना ही कर सकते हैं और न ही अपने सहधर्मियों की सच्ची सेवा ही कर सकते हैं। पथिकजी की यह दृढ धारणा थी कि देश को स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए ऐसे जीवनदानियों की आवश्यकता है कि जिनका प्रत्येक क्षण देश सेवा के लिए सुरक्षित हो और शुद्ध राष्ट्रीय विचारों के हों।

उन्होंने यह विचार अपने सहयोगियों और सहकर्मियों के सामने रखे। पथिकजी की कल्पना की उस प्रकार की संस्था में वही लोग सम्मिलित हो सकते थे जो कि ऊपर लिखी शर्तों को पूरी करें। जब अंग्रेजी राज्यों में कार्य करने वाले प्रमुख कार्यकर्ताओं के सामने उन्होंने अपनी योजना रखी तो व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा जायदाद और धार्मिक खण्डन–मण्डन के प्रश्न पर उनका पथिकजी से मतभेद रहा। पथिकजी की मान्यता थी कि किसी भी सदस्य के पास व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं होगी। यदि किसी के पास व्यक्तिगत सम्पत्ति होगी तो वह संघ की ही हो जावेगी और न वह धार्मिक विवादों में उलझेगा। अस्तु वे लोग इसके लिए तैयार नहीं हुए। पथिकजी हार मानने वाले व्यक्ति नहीं थे। रामनारायण चौधरी और हरिभाई किंकर पथिकजी के विचारों से सहमत थे अस्तु पथिकजी, रामनारायण चौधरी और हरिभाई किंकर को लेकर राजस्थान सेवा संघ की स्थापना हुई। पथिकजी अध्यक्ष और चौधरीजी उसके मन्त्री चुने गए। यह नियम बनाया गया कि प्रत्येक सदस्य अपने और अपने आश्रितों के लिए पन्द्रह रुपये मासिक प्रति व्यक्ति से अधिक नहीं लेगा, क्योंकि उस समय तक पथिकजी अविवहित थे। वे केवल पन्द्रह रुपये मासिक लेते थे और वह भी अपने ऊपर पूरा व्यय न करके जो बचता था, उसे संघ को लौटा देते थे। संघ की सदस्यता काल में पथिकजी ने जितना रुपया जीवन निर्वहन के लिए लिया था उसका औसत केवल आठ रुपया आया। शेष रुपया उन्होंने संघ को लौटा दिया। उनकी सादगी और निष्ठा अपूर्व थी। उनसे अनुप्राणित हो संघ के अन्य सदस्य भी सादा जीवन

रखते और जिनका परिवार था वे भी बड़ी किफायत से काम चलाते। संघ के विवाहित सदस्यों में से किसी ने भी तीस रुपये से अधिक नहीं लिया। कुछ समय के उपरान्त कोटा के प्रसिद्ध कार्यकर्ता नयूनयाम शर्मा संघ के चौथे सदस्य के रुप में संघ में सम्मिलित हुए और कोटा शाखा के अध्यक्ष बनाए गए। उसके उपरान्त माणिक्यलाल वर्मा तथा पथिकजी के प्रभावशाली शिष्य शोभालाल गुप्त तथा शेखावाटी के लाढूरामजी जोशी, खरवा के मोढ़सिंह, प्रेमचन्द भील इत्यादि भी संघ में सम्मिलित हो गए। अध्यक्ष और सामान्य सदस्य सभी के लिए एक नियम था। संघ का प्रत्येक कार्य करना, चाहे प्रेस में झाड़ू लगाना हो, अथवा सम्पादन कार्य हो, संघ के सदस्य स्वयं अपने हाथ से स्वयं करते थे। सम्पादक ही कभी–कभी पत्रों का गट्ठर उठाकर पोस्ट ऑफिस ले जाता था। रुखा–सूखा जो भी मिल गया उसी पर संतोष कर मस्त होकर देश के काम में लगे रहना यही संघ के कार्यकर्ता का जीवन क्रम था। सभी सदस्य देश सेवकों के एक बड़े परिवार के समान रहते थे। उनके अन्य सम्बन्ध गौण हो गए थे। पथिकजी को यदि कोई व्यक्तिगत रुप से आर्थिक सहायता देता तो वह भी संघ में जमा करवा देते। पथिकजी के नेतृत्व में उन फक्कड़ जीवनदानी राजनैतिक सन्यासियों का जैसा अभूतपूर्व संगठन राजस्थान–सेवा–संघ के रुप में प्रकट हुआ वैसा अपूर्व संगठन आज स्वप्न की बात प्रतीत होती है। दुर्भाग्य से आज राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के स्वतन्त्र भारत में देश सेवा और राजनैतिक कार्य एक वैभवशाली पेशा और कल्पनातीत लाभ का अनैतिक व्यापार बन गया है। सेवा की भावना तिरोहित हो गई, स्वार्थ–साधन ध्येय हो गया है। आज संस्था के धन का दुरुपयोग एक साधारण सी बात हो गई है। राज्य के अनुदान अथवा चन्दे में मिला हुआ धन निर्दयता से व्यय किया जाता है। पथिकजी ने संघ में परम्परा स्थापित की कि एक पैसा व्यर्थ व्यय न किया जावे। संघ के सदस्य सब काम करते ही थे। कहीं कारणवश जाते तो दस पांच मील की बात हो तो पैदल ही जाते। अध्यक्ष से लेकर साधारण कार्यकर्ता लम्बे सफर पर जाते तो रेल में तीसरे दर्जे में चलते और कुली न करके अपना सामान स्वयं उठाते। श्री रामनारायण चौधरी ने अपनी पुस्तक 'आधुनिक राजस्थान' में लिखा है– ''यों तो सेवा संघ के सभी कार्यकर्ताओं पर बहुत कम खर्च होता था परन्तु प्रथम श्रेणी के कार्यकर्ताओं में मेरी जानकारी में मेहनती और कम खर्च करने वाले पथिकजी जैसे बहुत कम होंगे। पथिकजी अस्वथ्य होते हुए भी दिन रात काम में लगे रहते, न खुद आराम करते और न औरों को चैन लेने देते। औसतन सोलह घंटे तो काम रहता ही था।

सेवा संघ की नीति थी देश की स्वतन्त्रता के लिए काम करना और जहां अन्याय, उत्पीड़न और शोषण हो, उसका खुला विरोध करना और जरुरत हो तो उसके लिए संघर्ष करना। यदि जागीरदार प्रजा पर अत्याचार करता, संघ प्रजा का पक्ष लेकर संघर्ष करता। यदि महाराजा द्वारा जागीरदार पर अत्याचार होता और जागीरदार भला होता तो संघ जागीरदार का पक्ष लेता, और यदि ब्रिटिश सरकार किसी नरेश के प्रति अन्याय करती तो संघ महाराजा का पक्ष लेता और उसकी मदद करता। यद्यपि राजस्थान सेवा संघ राजस्थान की निरीह पीड़ित जनता, शोषित और दुहरी गुलामी में दबी हुई प्रजा की मुख्यतः सेवा करता था किन्तु उसकी नीति अंग्रेजों का देशी राज्यों में हस्तक्षेप न होने देने की थी। संघ ने कभी भी यह नहीं चाहा कि देशी राज्यों में ब्रिटिश सरकार हस्तक्षेप करे। जब जब ऐसे अवसर आए तो राजस्थान सेवा

संघ ने उसका लाभ नहीं उठाया और यदि महाराजा भला हुआ तो उसकी सहायता भी की। स्वयं पथिकजी की लिखी हुई यह पंक्तियां संघ का मूलमन्त्र थीं–

"यश वैभव सुख की चाह नहीं,
परवाह नहीं जीवन न रहे,
यदि इच्छा है, यह है,
जग में स्वेच्छाचार दमन न रहे।"

पथिकजी ने इसी मन्त्र से अपने सभी सहायकों को दीक्षित किया था। पथिकजी की तेजस्विता, त्याग, बौद्धिक, प्रतिभा, नेतृत्व के जन्मजात गुण, अकथनीय कष्टसहिष्णुता और अहर्निश देश सेवा में लगे रहने की आतुरता ने उनके सहयोगियों को भी अनुप्राणित किया और जन्म लेते ही राजस्थान सेवा संघ का तेज ऐसा प्रकाशवान हुआ कि देशी नरेश उससे भयभीत हो उठे। ब्रिटिश सरकार उससे बहुत सशंकित थी। महाराजे तो राजस्थान सेवा संघ के नाम से ही भयभीत हो कांप उठते थे। उनकी यह धारणा बन गई थी कि संघ के पास बहुत बड़ी संख्या में कार्यकर्ता हैं और उसके पास अपरिमित आर्थिक साधन हैं। राजस्थान में राजस्थान सेवा संघ की पथिकजी के नेतृत्व में ऐसी ही धाक थी। राजाओं को क्या पता था कि संघ में केवल थोड़े से साधनहीन देश सेवा का व्रत ले जीवनदान देने वाले फक्कड़ लोग मात्र हैं।

× × × × ×

हां तो राजस्थान सेवा संघ का कार्य अजमेर में आरम्भ हुआ। बिजोल्यां आन्दोलन के अन्तिम दिनों में पथिकजी ने वहां से ही पथ–प्रदर्शन किया और बिजोल्यां का समझौता हुआ। फिर भी दो चार बातों के बारे में पंचायत और ठिकाने में मतभेद था। उस समझौते को कराने के लिए ए0जी0जी0 को बिजोल्यां में आठ दिन ठहरना पड़ा था। उससे अधिक वह नहीं ठहर सकता था। अस्तु मेवाड़ के मन्त्री प्रभाषचन्द्र चटर्जी ने पथिकजी को लिखा कि वे स्वयं ए0जी0जी0 से मिलकर उन प्रश्नों का भी फैंसला करवा दें। पथिकजी 17 फरवरी 1922 को ए0जी0जी0 से मिले। साहब ने मेवाड़ के मन्त्री चटर्जी को भी बुला लिया और उन दो तीन प्रश्नों (छंछूद, तलवार बन्दी तथा बरड़ की लागतों) के बारे में पथिकजी से समझौता किया गया।

बिजोल्यां आन्दोलन ने केवल राजस्थान में ही नहीं देश भर में प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। राजस्थान में तो बिजोल्यां के कारण ही क्रान्ति की भावना फैली और लोगों में अत्याचार और उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष करने का साहस पैदा हुआ। सच तो यह था कि बिजोल्यां आन्दोलन का ही यह प्रभाव था कि समस्त राजस्थान में एक नवीन चेतना जागृत हुई और लाखों किसान, पथिकजी और राजस्थान सेवा संघ को अपना सहायक और उद्धारकर्ता मानने लगे। राजस्थान के प्रत्येक राज्य से जनता अपने दुःख दर्दों की करुण कहानी पथिकजी के पास भेजने लगी।

बिजोल्यां सत्याग्रह का प्रभाव मेवाड़ के समीपवर्ती इलाके बूंदी, कोटा और मालवा पर बहुत अधिक पड़ा। वहां के किसानों की कथा भी उतनी ही दर्दनाक थी जैसी कि बिजोल्यां के

किसानों की थी। ऊँचा लगान, अगणित लागतें और अनेक प्रकार की बेगार और जागीरदारों के अत्याचार से जनता कराह रही थी। बिजोल्यां सत्याग्रह का परिणाम यह हुआ कि समस्त प्रदेश में किसान उठ खड़े हुए। बेगुं, पारसोली, अमरगढ़, भैंसरोड़गढ़, बस्सी, खैराड़, आंतरी, बारवां और यहां तक कि जहाजपुर तक के किसान उठ खड़े हुए। मेवाड़ के बाहर बूंदी राज्य के बरड़ इलाके की जनता भी उठ खड़ी हुई।

बात यह थी कि जब बिजोल्यां का फैंसला हुआ था तो आश्वासन दिया गया था कि अन्य ठिकानों में भी उसी प्रकार किसानों को लाग–बेगार से छूट दी जावेगी। परन्तु अंग्रेज सरकार राजनीति में पारंगत थी। किसानों का दमन कर संगठन को नष्ट कर देना ही उसका ध्येय था। बिजोल्यां के किसानों की संगठन शक्ति को देखकर वह झुक गई। उसके संकेत पर मेवाड़ राज्य ने किसान पंचायत से समझौता कर लिया, किन्तु वह अन्य स्थानों पर किसी प्रकार की छूट देने को तैयार न थी। अस्तु ब्रिटिश सरकार का रुख देखकर तथा उसका संकेत पाकर राज्य और जागीरदार किसानों पर और अधिक अत्याचार करने लगे।

इधर राजस्थान सेवा संघ ने बिजोल्यां के फैंसले के उपरान्त बिजोल्यां के इलाके में रचनात्मक कार्य द्वारा बिजोल्यां के किसानों की जागृति को स्थाई बनाने का कार्यक्रम बनाया। पथिकजी जानते थे कि यदि आज ब्रिटिश सरकार और मेवाड़ सरकार ने झुककर किसानों के साथ समझौता किया है तो केवल इस कारण कि किसानों का संगठन मजबूत था। अतएव उन्होंने जनता की शक्ति को स्थाई बनाने के लिए शिक्षा प्रचार, मद्यनिषेध, हरिजन सेवा, छुआछूत को मिटाना तथा ग्राम रक्षा का रचनात्मक कार्यक्रम बनाया। साधु सीताराम दास, माणिक्यलाल वर्मा तो वहां थे ही, रामनारायण चौधरी तथा उनकी श्रीमती अन्जना देवी को भी वहां भेजा गया। बिजोल्यां में रचनात्मक कार्यक्रम जोरों पर शुरु हुए। यद्यपि मेवाड़ सरकार इससे चौंकी और परोक्ष रुप से ठिकाने तथा राज्य ने इसको असफल करने का प्रयत्न किया परन्तु प्रत्यक्ष रुप से वे इस कार्य का विरोध नहीं कर सके। गोविन्दनिवास ग्राम में 'पूर्व मेवाड़ परिषद् संस्था' स्थापित की गई और "ऊपरमाल रौ डंकों" नामक साइकलोस्टाइल साप्ताहिक पत्र प्रकाशित किया गया।

उधर पथिकजी ने बेगुं तथा अन्य स्थानों पर किसानों के संगठन को दृढ़ करने तथा उनके आन्दोलन को तीव्र बनाने का प्रयत्न किया।

इसी बीच में सिरोही का भील आन्दोलन तीव्र हो गया। बात यह थी कि सिरोही के भीलों पर बहुत अधिक अत्याचार होते थे। उनकी दशा अत्यन्त दयनीय थी। पथिकजी के एक सहायक तेजावत वहां भीलों में कार्य करते थे। जब वहां की स्थिति बिगड़ती देखी तो स्वयं पथिकजी सिरोही गए। रमाकान्त मालवीय वहां के दीवान थे, वे पथिकजी से परिचित थे और उनके प्रशंसक भी थे। उन्होंने पथिकजी को बीच में डालकर भीलों के मामले को तय कराने का प्रयत्न किया। पथिकजी को तेजावत ने बुलाया। वे वहां गए। उनका भीलों ने फौजी और शाही स्वागत किया। पथिकजी ने भीलों के संगठन को दृढ़ करने तथा आन्दोलन को शान्त बनाए रखने की योजना बनाई। राज्य के दीवान मालवीय ने चाहा कि कुछ समझौता हो जावे परन्तु ब्रिटिश सरकार का रुख कड़ा था, इस कारण कोई समझौता न हो सका। पथिकजी जब तक वहां रहे, स्थिति सम्हली रही किन्तु उनके लौटने पर स्थिति बिगड़ गई। रियासत वास्तव में

भीलों के दुःख–दर्द को दूर करना चाहती थी और थोड़ी बहुत सुविधा भी देना चाहती थी, उसको ब्रिटिश सरकार नहीं चाहती थी। भीलों के आर्थिक कष्ट अपार थे। वे क्षुधा से पीड़ित थे और उत्तेजित थे। अपने गौरांग प्रभुओं के कड़े रुख को देखकर तथा उनके संकेत पर राज्य का रुख भी कड़ा हो गया। तेजावतजी के पास कार्यकर्ताओं की कमी थी। पथिकजी वहां अधिक नहीं रह सकते थे। लौटकर पथिकजी ने माणिक्यलाल वर्मा को भीलों को सम्हाले रखने और आन्दोलन का मार्गदर्शन करने के लिए भेज दिया। परन्तु वहां की स्थिति बिगड़ गई। भीलों में धैर्य न था। योग्य नेतृत्व का अभाव था, मेवाड़, सिरोही, ईडर राज्यों के भील विद्रोही हो उठे। समस्त भील क्षेत्र में 'हासिल और हुकम नहीं' अर्थात् लगान नहीं देंगे और शासन सत्ता को स्वीकार नहीं करेंगे, का नारा सुनाई पड़ने लगा। ब्रिटिश सरकार भयभीत हो गई।

सभी रियासतें आतंकित हो उठीं। ब्रिटिश रैजीडैन्ट एक बड़ी सेना लेकर भीलों का दमन करने आया। भील भी हजारों की संख्या में एकत्रित थे। ईडर के समीप दृढवाण गांव में जब 7 मार्च 1922 को ब्रिटिश रैजीडैन्ट सेना सहित वापस लौटने लगा। एक भील ने कहा कि साहब क्या सोचेगा कि भय के कारण भील भाग गए, अपने तीर से रैजीडैन्ट का टोप उड़ा दिया। सेना को पता चल गया कि भील कहां छिपे हुए हैं और उन्होंने मशीनगनों से गोली वर्षा करनी आरम्भ कर दी। निरीह भीलों की ऐसी नृशंस हत्या हो गई जिसकी तुलना केवल जलियावाला बाग के हत्याकांड से ही की जा सकती है। लगभग 1200 भील मारे गए। उसके उपरान्त तो मानों पशुता का ताण्डव नृत्य होने लगा, भीलों के गांवों में आग लगा दी गई, खड़ी फसलें जला दी गईं, भील स्त्रियों को अपमानित किया गया। केवल एक स्थान पर गोली नहीं चली बल्कि कई स्थानों पर चलीं। तेजावत फरार हो गए। पथिकजी ने माणिक्यलाल वर्मा को तो वहां पहले भेज रखा था। उन्होंने रामनारायण चौधरी को तथा सत्यभक्त जी को भी जांच तथा राहत कार्यों के लिए नियुक्त किया। किन्तु रियासत ने राहत कार्य यह कहकर मनाही कर दी कि रियासत यह कार्य स्वयं कर रही है और कोई कष्ट पीड़ित जनता बाहर वालों की सहायता नहीं चाहती। रामनारायण चौधरी गुप्त रुप से रियासत में घुसे। 'मूला' और 'बालोलिया' नामक ग्रामों में गए। उन स्थानों को देखा जहां गोलीकाण्ड हुआ था। केवल भीलों को ही गोली का शिकार नहीं बनाया गया था, उनकी अनाज की कोठियों को भी आग लगा दी गई थी। जब रामनारायण चौधरी वहां जांच के लिए पहुंचे तब तक अनाज की कोठियां जल रहीं थीं।

भीलों का दोष केवल यह था कि उन्होंने शराब छोड़ दी थी। रियासत ने जो लगान बढ़ा दी थी उसको कम करके पहले के अनुसार करने, बेगार और लागतों को बन्द करने, तथा बोहरों की लूट से राहत दिलाने की मांग की थी।

राजस्थान सेवा संघ के कार्यकर्ताओं ने उस नृशंस अत्याचार की पूरी जांच कर ली और अजमेर से जब नृशंस अत्याचार की हृदय को दहला देने वाली कहानी पत्रों में प्रकाशित हुई तो समस्त देश में क्षोभ की लहर फैल गई। पथिकजी ने अपने पत्र के द्वारा उसका प्रचार किया तथा देश के सभी प्रमुख पत्रों में उसको प्रकाशित करवाया। रियासत और ब्रिटिश सरकार को क्रोध और आश्चर्य दोनों ही हुआ। वे समझ नहीं पा रहे थे कि उनकी कठोर घेरा–बन्दी को तोड़कर राजस्थान सेवा संघ के कार्यकर्ता वहां कैसे पहुंच गए और सामग्री जुटा लाए। परन्तु इस प्रचार का परिणाम यह हुआ कि भीलों पर अत्याचार कम हो गए और राहत कार्य किया गया।

पथिकजी प्रचार और प्रकाशन की कला को जानते थे। उन्होंने राजस्थान सेवा संघ के प्रचार विभाग को बहुत सक्रिय और सशक्त बनाया था। उन्होंने ब्रिटेन और अमेरिका के समाचार पत्रों से भी सम्बन्ध जोड़ रखा था। देशी राज्यों की करुण कथा को ब्रिटेन तक पहुंचाते थे। भारतीय विधान के अनुसार देशी रियासतों के सम्बन्ध में कोई भी चर्चा भारत की धारा सभाओं में नहीं की जा सकती थी। अस्तु भारत में व्यवस्थापिका सभाएं देशी राज्यों की दृष्टि से बेकार थीं। पथिकजी की कुशाग्र बुद्धि ने भारत सरकार तथा देशी राज्यों को प्रभावित करने का एक और सुन्दर और प्रभावशाली तरीका सोच निकाला। यद्यपि भारत में धारा सभाओं में देशी राज्यों के सम्बन्ध में कोई प्रश्न नहीं उठाया जा सकता था, किन्तु ब्रिटिश पार्लियामैन्ट में ऐसा कोई बन्धन नहीं था। अतएव पथिकजी के उर्वर मस्तिष्क में यह विचार आया कि राज्यों के सम्बन्ध में ब्रिटिश पार्लियामैन्ट में प्रश्न करना चाहिए। उन्होंने इंग्लैण्ड की एक प्रसिद्ध महिला समाज सेवी बहिन ऐनी हडसन से सम्पर्क स्थापित किया और उनसे संघ की सहायता करने की प्रार्थना की। उन्होंने पथिकजी का पार्लियामैन्ट के कुछ मजदूर सदस्यों से सम्बन्ध स्थापित करवा दिया। पथिकजी देशी राज्यों की विशेष घटनाओं और समस्याओं की उन पार्लियामैन्ट के सदस्यों के पास पूरी जानकारी भेजते रहते और वे भारत मन्त्री से पार्लियामैन्ट में उनके सम्बन्ध में प्रश्न पूछते। भूतपूर्व भारत मन्त्री पैथिक लारेंस पथिकजी के इस काम में बहुत अधिक सहायता करते थे। वे पथिकजी से विशेष रुप से प्रभावित थे। जब पार्लियामैन्ट में प्रश्न पूछे जाते तो उसका प्रभाव बहुत अधिक पड़ता था। भारत सरकार तथा सम्बन्धित देशी राज्यों से उत्तर मांगा जाता, उसका नैतिक लाभ प्रजा को मिल जाता था। देशी राजे तो इससे बहुत भयभीत हो जाते थे। पथिकजी विशेष घटनाओं के सम्बन्ध में इंग्लैण्ड के पत्रों में समाचार प्रकाशित करवाते और उन पत्रों के सम्पादकों को उन पर सम्पादकीय टिप्पणियां लिखने को कहते। प्रचार का यह ढंग बहुत कारगार सिद्ध होता था।

भील हत्याकाण्ड और भील आन्दोलन समाप्त नहीं हो पाया था कि बूंदी के बरड़ इलाके से समाचार मिला कि वहां की सेना ने किसानों पर ही नहीं उनकी स्त्रियों तक पर हमला कर दिया है। नानक भील मारा गया। अनेक भील गोलियों से घायल हो गए। सैनिकों ने केवल गोली ही नहीं चलाई, स्त्री और पुरुषों पर घोड़े दौड़ाए और भालों से भी आक्रमण किया था। पथिकजी ने तुरन्त सत्यभक्त तथा चौधरी जी को वहां भेजा। बात यह थी कि राजस्थान सेवा संघ बहुत पहले से इस क्षेत्र में सेवा का कार्य कर रहा था। यह इलाका बिजोल्यां से लगा हुआ था। हरिभाई किंकर वहां रहकर सेवा कार्य कर चुके थे। बूंदी में रिश्वतखोरी चरम सीमा पर पहुंच गई थी। लागतों और बेगारों के कारण किसानों की दशा अत्यन्त दयनीय हो गई थी। लगान बहुत ऊंचा लगा दिया गया था। किसानों ने इनका विरोध किया और वहां आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। आन्दोलन में केवल पुरुष ही नहीं थे, उनकी स्त्रियां भी उनके साथ कंधे से कंधा मिलाकर आन्दोलन में कूद पड़ीं थीं। बूंदी राज्य बोखला उठा और घोर दमन पर उतारु हो गया। सेना ने निरीह स्त्री–पुरुषों पर पाशविक आक्रमण किया। किसी का सर फट गया, किसी का पैर और हाथ टूट गया, तो किसी की आंख में चोट आ गई। दमन के द्वारा राज्य किसानों में संगठन को नष्ट कर देना चाहता था। राजस्थान सेवा संघ ने समस्त काण्ड की विस्तृत जांच करवाई। घायलों के चित्र इकट्ठे किए, अजमेर में घायलों को बुलवाकर उनकी सेवा सुश्रुषा करवाई। बड़ी कठिनाई से अजमेर के विक्टोरिया अस्पताल के डॉक्टरों ने चोटों का प्रमाण पत्र

दिया। पथिकजी ने आन्दोलन खड़ा कर दिया। खूब प्रचार किया गया, बूंदी राज्य झुका, किसानों की बहुत–सी शिकायतें दूर करा दी गईं। परन्तु रामनारायण चौधरी तथा संघ के अन्य कार्यकर्ताओं पर बूंदी राज्य में घुसने पर रोक लगा दी गई।

फरवरी 1921 में महान सन्त भारत प्रेमी दीनबन्धु सी0एफ0 ऐन्ड्रज ने समाचार पत्रों में बेगार प्रथा पर एक लेखमाला प्रकाशित की। पथिकजी ने तुरन्त ही राजस्थान में सर्वत्र प्रचलित बेगार की दिल दहला देने वाली क्रूरताओं के समाचार और जानकारी भिजवाई। दीनबन्धु तो देवता ही थे। उनका कोमल मन पथिकजी द्वारा भिजवाए हुए समाचार पत्रों पर सहसा विश्वास करने के लिए तैयार नहीं हुआ। उन्होंने पथिकजी को लिख भेजा कि सम्भवतः यह समाचार अतिशयोक्तिपूर्ण और अतिरंजित है। पथिकजी ने अपने समाचारों की पुष्टि के लिए बहुत से प्रमाण दीनबन्धुजी के पास लिख भेजे। पथिकजी ने दीनबन्धु को स्वयं राजस्थान आकर बेगार की क्रूरतापूर्ण प्रथा को अपनी आंखों से देखने के लिए आमंत्रित किया। जब पथिकजी ने बहुत से प्रमाण उपस्थित किए तब दीनबन्धु को किंचित विश्वास हुआ। उन्होंने बहुत कड़े शब्दों में उस प्रचलित बेगार की निन्दा की और उसे 'आधुनिक गुलामी' अथवा दास प्रथा की संज्ञा दी। उन्होंने बेगार प्रथा को उखाड़ फैंकने के लिए लड़ने और आन्दोलन करने का फैंसला किया। परन्तु उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया था कि आन्दोलन करने से पूर्व वे राजस्थान में आकर जांच करेंगे और यदि जांच के उपरान्त उन्हें विश्वास हो गया तो वे बेगार के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा करेंगे। पथिकजी ने इस विचार का स्वागत किया और दीनबन्धु जी को लिख भेजा कि आप स्वयं राजस्थान में आकर इस क्रूर प्रथा का रोमांचकारी दृश्य देख लीजिए। इस जांच कार्य में राजस्थान सेवा संघ आपको पूरा सहयोग देगा। जबकि दीनबन्धु बेगार प्रथा की जांच के लिए कार्यक्रम तैयार कर रहे थे, उसी समय महात्मा गांधी कलकत्ता पहुंचे। दीनबन्धुजी महात्माजी के अनन्य भक्त थे। प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्य में वे उनका आशीर्वाद अवश्य लेते थे। गांधीजी भी उन्हें बहुत अधिक स्नेह करते थे। कलकत्ते में महात्मा गांधी देशबन्धु चितरंजनदास के मकान पर ठहरे हुए थे। दीनबन्धु ऐन्ड्रज महात्माजी से बातचीत कर रहे थे। हिन्दी के प्रसिद्ध सम्पादक और लेखक बनारसी दास चतुर्वेदी वहीं पर बैठे थे। कुछ देर बाद दीनबन्धु ने महात्माजी से पूछा "महादेव भाई कहां हैं?" महात्माजी ने उत्तर दिया कि वे कहीं बाहर गए हुए हैं। क्या आपको उनसे कुछ काम है?" दीनबन्धु ने कहा– "पथिक के विषय में उनसे कुछ पूछना था, कौन हैं, कैसे आदमी हैं?" महात्माजी मुस्कराते हुए बोले–

"मैं आपको पथिक के बारे में कुछ बतला सकता हूँ। पथिक काम करने वाला है और दूसरे सब बातूनी हैं। पथिक एक सैनिक है, बहादुर है, जोशीला और तेज मिजाज है, लेकिन जिद्दी है। जब महादेव बिजोल्यां गए तब पथिक उनके निभ्रान्त मार्गदर्शक थे। विशेष बात यह है कि बिजोल्यां की जनता का उन पर पूरा विश्वास है।" मनुष्य चरित्र के महान ज्ञाता महात्मा गांधी ने "पथिक एक सैनिक हैं" इन चार शब्दों में पथिकजी के सम्पूर्ण चरित्र का परिचय दे दिया था। महात्मा गांधी जी से ऐसा प्रमाणपत्र पाने वाले बहुत कम कार्यकर्ता थे।

महात्माजी की पथिकजी के बारे में ऐसी ऊँची धारणा है यह जानकर दीनबन्धु का पथिकजी की ओर और अधिक झुकाव हुआ। उन्होंने राजस्थान आकर बेगार प्रथा की जांच करने के उपरान्त बेगार विरोधी आन्दोलन खड़ा करने का निश्चय किया।

पथिकजी और राजस्थान सेवा संघ के कार्यकर्ता अत्यन्त उत्सुकता से दीनबन्धु के राजस्थान में बेगार सम्बन्धी जांच के लिए आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। परन्तु दीनबन्धु अन्य कार्यों में फंस गए और राजस्थान न आ सके।

परन्तु पथिकजी बेगार आन्दोलन को बहुत अधिक महत्व देते थे। वे जानते थे कि राजस्थान की जनता बेगार के कारण कराह रही है और उसके विरुद्ध आन्दोलन खड़ा करने पर जनता स्वयं उस ओर आकर्षित होगी। अस्तु उन्होंने बेगार के सम्बन्ध में संघ द्वारा जानकारी प्राप्त करने और जांच के उपरान्त संघर्ष करने का निश्चय किया।

राजस्थान और मध्यभारत के सभी राज्यों में पथिकजी के बहुत से प्रशंसक और राजस्थान सेवा संघ के सहायक उत्पन्न हो गए थे। पथिकजी के लेखों ने इन दोनों प्रदेशों के शिक्षित युवकों में देशप्रेम और प्रान्तीय एकता के भाव जागृत कर दिए थे। पथिकजी ने शिक्षित युवकों को बेगार के बारे में सामग्री जुटाने का आह्वान किया। कुछ ही समय के उपरान्त संघ के कार्यालय में बेगार पीड़ित निरीह प्रजा की करुण कथा से भरे हुए पुलन्दे के पुलन्दे प्रत्येक राज्य से आने लगे। राजस्थान सेवा संघ के कार्यकर्ता घूम–घूमकर बेगार तथा लागतों के बारे में सामग्री एकत्र करने लगे।

बेगार सम्बन्धी जांच करने पर ज्ञात हुआ कि उसका अपना एक लम्बा इतिहास है। बेगार मूल में एक अच्छी भावना से आरम्भ हुई थी। बात यह थी कि प्राचीन काल में राजा और प्रजा के सम्बन्ध अत्यन्त पवित्र और घनिष्ठ थे। राजा अपनी प्रजा को पुत्र के समान मानता था और प्रजा भी राजा को अपने पिता के समान श्रद्धा और आदर करती थी। यही कारण था कि प्रजा ने अपनी भक्ति प्रदर्शित करने के लिए यह तय किया कि जब राजा उनके गांव में आए तो उसका सारा कार्य मुफ्त किया जावे। उसे सब सामान बिना मुल्य के भेंट किया जावे, और उसकी सवारी इत्यादि गांव की और से भेंट स्वरुप दी जावें। मध्यकाल में जब भारत में मुगलों का शासन हुआ तो राजाओं को अधिकतर रणक्षेत्र में ही अपना जीवन बिताना पड़ता था। वे अपने देश और प्रजा की रक्षा के लिए युद्ध करते थे। अस्तु यह स्वाभाविक ही था कि प्रजा अपनी मातृभूमि की रक्षा करने के लिए युद्ध करने वाले अपने रक्षकों को सब कुछ बिना मुल्य देती। उन दिनों लगभग युद्ध जैसी स्थिति सदैव बनी रहती थी, अतएव प्रजा युद्ध की सहायता के लिए स्वेच्छा से सभी कुछ बिना मुल्य के सहर्ष देती थी।

जब ब्रिटिश शासन में राजाओं ने अंग्रेजी शासन की अधीनता स्वीकार कर ली, और जब अंग्रेजी सरकार ने उन्हें भीतरी और बाहरी शत्रुओं से अभयदान देकर उनकी रक्षा करने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया तो यह राजे निरंकुश शासक बन गए। अब उन्हें प्रजा की सहानुभूति तथा श्रद्धा की आवश्यकता नहीं रही, अतएव वे प्रजा के प्रेम और आदर का केन्द्र न रहकर प्रजा के लिए भय, आतंक और अत्याचार के प्रतीक बन गए। जो प्रजा श्रद्धा और आदर में स्वेच्छापूर्वक बिना मूल्य बहुत सी वस्तुएं तथा सवारी राजा को भेंट स्वरुप देती थी, उसका काम मुफ्त में करती थी, उस स्वेच्छा भेंट को राजाओं ने जबरदस्ती और हर समय वसूल की जाने वाली बेगार का रुप दे दिया। क्रमशः राजा और जागीरदार के कर्मचारी भी तथा नौकर भी बेगार लेने लगे। जिस समय राजस्थान सेवा संघ ने बेगार विरोधी आन्दोलन आरम्भ किया, उस समय स्थिति यह थी कि राज्य का साधारण से साधारण कर्मचारी जब गांवों की और कस्बों की

ओर जाता तो ब्राह्मण और राजूपतों को छोड़कर प्रत्येक से बेगार लेता। प्रजा वर्ग को इंकार करने का कोई हक नहीं था। प्रजा भय से इतनी आतंकित थी कि विरोध करने का साहस भी नहीं कर सकती थी। बेगार इतनी कठोरता और निर्दयता से ली जाती थी कि विवाह, मृत्यु, रोग, मौसम, फसल तथा घरेलू काम काज का भी ध्यान नहीं किया जाता था। बेगारी को बेगार के बदले मारपीट, गाली और अन्य प्रकार से अपमान और सहन करना पड़ता था। गांव के बनियों को शिविर में लेजाकर सामान देना पड़ता था। कहीं–कहीं थोड़ी कीमत दे दी जाती अन्यथा कर्मचारी उन्हें यों ही भगा देते अथवा झूठी रसीद ले लेते, और पैसा स्वयं हजम कर जाते। यदि थोड़ा पैसा दिया भी जाता तो वस्तु दुगनी–तिगुनी तुलवा ली जाती, और विरोध करने पर अपमान सहना पड़ता। किसानों के बैलों, ऊंटों और गाड़ियों को पकड़ लिया जाता। बेचारे हरिजनों और भीलों इत्यादि का तो अधिकांश समय मुफ्त में बेगार करते ही बीतता था। उनका नाम ही बेगारी पड़ गया था। बेगार में जाने वाली स्त्रियों की इज्जत भी सुरक्षित नहीं रहती थी। बेगार निर्दयतापूर्ण अत्याचार की प्रतीक बन गई।

पथिकजी की दीर्घ दृष्टि ने यह देख लिया कि यदि कोई ऐसी बात है, जिससे समस्त राजस्थान की निरीह प्रजा दुःखी है तो वह बेगार है। यदि राजस्थान सेवा संघ बेगार के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा कर दे तो संघ समस्त राजस्थान में लोकप्रिय हो जावेगा और समस्त राजस्थान संघ के नेतृत्व में संगठित हो सकेगा। अतएव बेगार के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेने के बाद उन्होंने प्रान्त व्यापी बेगार के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा कर दिया।

बेगार के सम्बन्ध में जांच करने पर संघ को यह जानकारी हुई कि प्रजा से केवल बेगार ही नहीं ली जाती वरन् लागें भी कठोरतापूर्वक ली जाती हैं। उन्हें लाग बाग के नाम से भी पुकारा जाता था। इनकी जड़ में भी वही राजभक्ति ही थी जिसके कारण बेगार प्रथा आरम्भ हुई थी। प्रजा ने राजा व जागीरदार को प्रेम और आदरवश आवश्यकता की वस्तुओं को सौगात के रुप भेंट देना आरम्भ किया, और राजा और जागीरदार ने उसे नियमित और अनिवार्य बना दिया। फिर राजा और जागीरदार के कर्मचारी भी वहीं चीजें बलपूर्वक लेने लगे। आगे चलकर वस्तु के स्थान पर उसका मूल्य वसूल होने लगा। जो कोई इंकार करता अथवा असमर्थ होता तो उससे बलपूर्वक लागत वसूल की जाती। इन लागतों में कुछ तो अजीब ही थीं। बिजोल्यां में चुड़पुड़ी नामक लागत थी। कभी रावजी शिकार खेलने गए थे और उनकी घोड़ी एक गांव के पास जाकर गिरकर मर गई। गांव वालों को यह गवारा नहीं हुआ, उन्होंने एक अच्छी सी घोड़ी रावजी को भेंट कर दी। फिर तो यह हर वर्ष प्रत्येक गांव से जाने वाली लागत बन गई। बेगुं में राव साहब हिजड़ों से प्रसन्न हुए तो उन्होंने प्रत्येक गांव से प्रतिवर्ष वसूल की जाने वाली लागत के रुप में एक रकम इनाम में दे दी। संक्षेप में इन लागतों के कारण निरीह प्रजा का अनवरत शोषण होता था। कहीं–कहीं तो लागतों की संख्या अस्सी तक पहुंच गई थी। प्रजा इन लागतों के भयंकर बोझ से दबी कराह रही थी। पथिकजी ने राजस्थान सेवा संघ द्वारा इन लागतों के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ दिया।

एक तीसरी भयंकर प्रथा दास प्रथा की थी। यह प्रथा गुलामी का दूसरा रुप थी। प्रत्येक राजा या जागीरदार तथा बड़े राजकर्मचारियों के यहां उनकी हैसियत के अनुसार ऐसे स्त्री पुरुषों की एक टोली होती थी, जिन्हें दरोगा, रावण। चाकर अथवा माणस कहते थे। वे वास्तव में गुलाम होते थे। वे मालिक के पुश्तैनी नौकर होते थे। उन्हें मालिक की नौकरी छोड़ने का

अधिकार नहीं था। यदि वह भाग जाता तो उसे पकड़ कर मंगवाया जाता था, और फिर उसके साथ घोर अत्याचार होते। खाने के लिए मोटा अनाज और पहिनने के लिए उतरे कपड़े दिये जाते। जब मालिक की लड़की का विवाह होता तो वे दहेज में दे दिये जाते थे। यद्यपि नाम मात्र को दास और दासियों का विवाह कर दिया जाता किन्तु उनके शरीर का मालिक स्वामी होता था। कोई भी युवा दासी मालिक की काम वासना से शयद ही बचती हो। सामन्तशाही के षड़यन्त्र, हत्या और घृणित कार्य इन्हीं लोगों से कराये जाते थे। उन्हें ऐसा बना दिया जाता था कि बुरे से बुरे काम करने में उन्हें ग्लानि अनुभव नहीं होती थी, और यह प्रथा उस अंग्रेज सरकार की छत्रछाया में प्रचलित थी, जो यह दावा करती थी कि उसने अपने अधीन प्रदेशों में सामाजिक सुधार किये हैं।

राजस्थान सेवा संघ ने इस अमानवीय और घृणित प्रथा के विरुद्ध आवाज उठाई, और उसके विरुद्ध आन्दोलन की शुरु किया। इस आन्दोलन में वह उन दासों की सहानुभूति नहीं प्राप्त कर सका, क्योंकि वे इतने अधिक गिर चुके थे कि उन्हें अपनी दयनीय दशा का भान भी नहीं होता था। परन्तु संघ के प्रचार कार्य तथा प्रकाशन से जो समस्त देश में इस प्रथा के विरुद्ध घृणा का वातावरण बना उसका प्रभाव राज्यों पर पड़ा और यह प्रथा बहुत निर्बल और शिथिल हो गई। कई राज्यों में इसके विरुद्ध कानून बन गए।

बेगार सम्बन्धी जांच में संघ को एक और कुप्रथा का पता लगा। यह थी सूदखोरी की प्रथा। निर्धन व्यक्ति आवश्यकता के समय महाजन, साहूकार अथवा बोहरे से थोड़ा ऋण ले लेता और सदैव के लिए उसका क्रीत दास बन जाता। सूद इतना अधिक होता, और महाजन इतनी बेईमानी करता कि किसान की चुकाई हुई रकम को भी जमा नहीं करता। परिणाम यह होता कि बेचारा कर्जदार सूद ही नहीं चुका पाता और मूलधन हनुमान की पूंछ की तरह बढ़ता ही जाता। कहीं–कहीं तो स्थिति ऐसी हो गई थी कि कर्जदार महाजन को ऋण के बदले में अपना शारीरिक श्रम बन्धक रख देता और सदैव खाने के लिए मोटा अनाज लेकर महाजन का दास मजदूर बन जाता। पथिकजी ने राजस्थान सेवा संघ के द्वारा इसके विरुद्ध भी प्रबल आन्दोलन छेड़ दिया। इसमें संघ को अच्छी सफलता मिली।

पथिकजी केवल सफल क्रान्तिकारी, राजनैतिक आन्दोलनकर्ता ही नहीं थे, उनमें सर्व साधारण की कठिनाईयों को जानने और उसके विरुद्ध जनमत को संगठित करने की अदभुत क्षमता थी। वे एक दृष्टि से सफल रचनात्मक कार्यकर्ता भी थे। यही कारण था कि उन्होंने राजस्थान सेवा संघ के द्वारा बेगार, लागतों, दास प्रथा और सूदखोरी के विरुद्ध एक साथ प्रबल आन्दोलन छेड़ दिया। उनकी प्रभावशाली लेखनी से 'नवीन राजस्थान' में इन अमानवीय कुप्रथाओं के विरुद्ध प्रति सप्ताह लेख निकलते। देश के प्रमुख पत्रों में उनका सार प्रकाशित होता। इन कुप्रथाओं की प्रतिदिन होनेवाली घटनाओं की जानकारी का पथिकजी व्यापक प्रकाशन करवाते। राज्यों और ब्रिटिश सरकार को इस सम्बन्ध में संघ की ओर से प्रतिवेदन भेजते। अपने मित्र पैथिक लारैंस से तथा मजदूर दल के सदस्यों से पार्लियामैन्ट में प्रश्न करवाते, और जहां–जहां प्रजा संगठित हो जाती, वहां सत्याग्रह करवाते। राजस्थान सेवा संघ के इस चतुर्मुखी आन्दोलन का परिणाम यह हुआ कि इन कुप्रथाओं की जड़े हिल गईं और कहीं–कहीं तो इनके विरुद्ध कानून बन गए। कोटा में संघ के कर्मठ सदस्य श्री नयूनरामजी के आन्दोलन के फलस्वरुप बेगार उठा दी गई। आगे चलकर झालावाड़ में भी इस प्रथा का अन्त

कर दिया गया। बेगार आन्दोलन ने तो इतना जोर पकड़ा कि जगह–जगह प्रजा इसके विरुद्ध उठ खड़ी हुई। राजस्थान सेवा संघ को इस राजस्थान व्यापी आन्दोलन को सम्हालना कठिन हो रहा था। संघ के पास कार्यकर्ता थोड़े थे। कार्यकर्ता एक इलाके के आन्दोलन को सम्भालने जाते कि दूसरे स्थान पर प्रजा उठ खड़ी होती, और उन्हें वहां दौड़ना पड़ता। संघ के कार्यकर्ताओं का परिश्रम, कष्टसहिष्णुता, और त्याग अच्छे परिणाम लाया। राज्य सरकारें इस असाधारण असंतोष और बेगार विरोधी आन्दोलन की भीष्णता के कारण भयभीत हो उठीं और घबड़ा गईं, उन्होंने सोचा कि कहीं यह आन्दोलन उग्र रुप न धारण कर ले, अस्तु अनेक राज्यों ने घोषणा कर दी कि मुफ्त सवारी, सामान, और मजदूरी नहीं ली जावेगी, और उनके मूल्य स्वरुप जो मुआविजा दिया जावेगा,उसकी दरें बढ़ा दी गईं। इसी प्रकार कई राज्यों में दास प्रथा को समाप्त करने की घोषणा की गई। महाजनी सूदखोरी पर प्रतिबन्ध लगाए गए, सूद की दरें निश्चित कर दी गईं, तथा कुछ लागतें भी कम हुईं। यद्यपि यह तो कहना ठीक नहीं होगा कि सभी अमानवीय प्रथाएं समाप्त हो गईं, परन्तु इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि इन अमानवीय और घृणित प्रथाओं की जड़ें हिल गईं, वे निर्बल हो गईं। कहीं–कहीं तो उनके विरुद्ध कानून बन गए और जहां कानून नहीं भी बने वहां इन प्रथाओं से लाभ उठाने वाले लोग सशंक हो गए। उनकी कठोरता में बहुत कमी हो गई, और राजे, जागीरदार और महाजन यह समझने लगे कि यह प्रथाएं अधिक समय तक चलने वाली नहीं हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि राजस्थान सेवा संघ के आन्दोलन के परिणामस्वरुप इनकी कठोरता बहुत कम हो गई। यह संघ की अपूर्व सफलता थी। अब राजस्थान सेवा संघ तथा उनके नेता पथिकजी को राजस्थान भर के लोग अपने मित्र और सहायक के रुप में देखने लगे। जिनको भी जो कष्ट होता वह राजस्थान सेवा संघ के पास सहायता के लिए दौड़ता। सेवा संघ ने राजस्थान में ऐसी लोकप्रियता प्राप्त कर ली कि वह किसी भी संगठन के लिए ईर्ष्या की वस्तु हो सकती थी। देशी नरेशों और राज्य सरकारों पर संघ का भय और आतंक छा गया, और ब्रिटिश सरकार भी उससे चौकन्नी रहने लगी। केवल बात यहां तक ही नहीं रही कि प्रजा अपने दु:ख दर्द को लेकर संघ के पास सहायता के लिए दौड़ती वरन जागीरदार भी विपत्ति पड़ने और राजा के कोपभाजन बनने पर संघ की सहायता के लिए प्रार्थी होते।

जब धौलपुर राज्य ने झिरी के राजपूत जागीरदार पर अत्याचार करना आरम्भ किया और झिरी के किले को लेने के लिए राज्य की सेना ने झिरी पर आक्रमण किया, तो झिरी के ठाकुर ने राज्य की सेनाओं का सशस्त्र विरोध करने के साथ ही संघ से सहायता मांगी। संघ ने झिरी ठाकुर का समर्थन किया, और यह पथिकजी के प्रचार आन्दोलन और राजस्थान सेवा संघ के प्रयत्नों का ही फल था कि झिरी के ठाकुर को न्याय प्राप्त हुआ, और झिरी की रक्षा हो सकी।

पथिकजी अपने भरोसे के व्यक्तियों द्वारा राज्य सरकारों, देशी नरेशों और रैजीडैन्ट तथा ए0जी0जी0 के गुप्त कार्यों की भी जानकारी रखने में बड़े पटु थे। उन्होंने सभी राज्यों में अपने ऐसे प्रशंसक उत्पन्न कर दिये थे जो गुप्त रुप में उन्हें राज्यों सम्बन्धी गुप्त और रहस्य की बातों की जानकारी देते रहते थे।

पथिकजी के ऐसे ही एक प्रशंसक गुप्तचर ने पथिकजी को राजपूताना के ए0जी0जी0 श्री हॉलैंड के महाराणा श्री फतहसिंह को राज्य सिंहासन छोड़ देने के लिए धमकी भरे पत्र की नकल लाकर दी। उस पत्र में हॉलैंड महोदय ने उस स्वाभिमानी नरेश को राज्य सिंहासन छोड़ देने के लिए लिखा था और उन्होंने धमकी दी थी। उन पर यह दोषारोपण किया गया था कि मेवाड़ में जन आन्दोलन बहुत व्यापक और उग्र होता जा रहा है, अंग्रेजी सरकार को भय है कि उसका खतरनाक प्रभाव उसके पड़ोस के ब्रिटिश भारत तथा अन्य राज्यों के इलाकों पर पड़ेगा। साथ ही महाराणा को यह भी कहा गया कि ब्रिटिश सरकार के सुझाव पर भी महाराणा ने आन्दोलन का कठोर दमन नहीं किया उसी का यह परिणाम है, अस्तु उन्हें राज्य सिंहासन से हट जाना चाहिए।

बात यह थी कि स्वर्गीय महाराणा फतहसिंह एक स्वाभिमानी स्वतन्त्रताप्रिय धर्मनिष्ठ शासक थे। मध्ययुगीन राजपूत के वे एक सच्चे प्रतिनिधि थे। उन्हें अंग्रेजों की दासता अखरती थी। अंग्रेजों से वे घृणा करते थे, वे अपनी प्रजा पर कठोर दमन के विरोधी थे। अंग्रेज महाराणा से इन्हीं कारणों से नाराज थे। वे बहुत चाहते रहे कि महाराणा उनके संकेत पर चलें, उनके भेजे हुए अधिकारियों को राज्य में नियुक्त करें, परन्तु महाराणा उसके लिए तैयार नहीं थे। दिल्ली दरबार में सम्मिलित न होने के कारण भी वे उनसे क्रुद्ध थे। उन्हें बिजोल्यां तथा अन्य जागीरों में आन्दोलन को न दबा सकने का बहाना मिल गया। उधर रैजीडैन्ट तथा स्वार्थी और षड्यन्त्रकारी दरबारियों ने निर्बल और पंगु महाराजकुमार भूपालसिंह को अपने पिता के विरुद्ध खड़ा कर दिया। महाराणा फतहसिंह के विरुद्ध षड़यन्त्र में महाराजकुमार भूपालसिंह भी सम्मिलित हो गए।

पथिकजी ने ब्रिटिश सरकार के इस कुचक्र को विफल करने के लिए राजस्थान सेवा संघ की ओर से विरोध किया। उन्होंने हॉलैंड के पत्र की नकल को प्रकाशित कर दिया और राजस्थान सेवा संघ ने मेवाड़ के लोकमत को महाराणा के पक्ष में और ब्रिटिश सरकार के विपक्ष में जागृत करना आरम्भ कर दिया। श्री रामनारायण चौधरी तथा अन्य कार्यकर्ता मेवाड़ में दौरा कर लोकमत को इस षड़यन्त्र के विरुद्ध जागृत करने लगे। जगह–जगह सार्वजनिक सभाएं की जाने लगीं और प्रस्ताव पास किए जाने लगे। ब्रिटिश सरकार को बहुत बड़ी संख्या में तार तथा सभाओं में स्वीकृत प्रस्तावों की नकल भेजी गईं। समाचारपत्रों में इस षड़यन्त्र के विरुद्ध प्रभावपूर्ण प्रचार किया गया। मेवाड़ में जो सभाएं की गई उनमें नीचे लिखे आशय के प्रस्ताव पास किए गए।

उन प्रस्तावों में कहा गया कि जनता को कष्ट अवश्य है, वह उनका निवारण भी चाहती है और आवश्यकता हुई तो वह अपने राजा से घर में लड़ाई भी लड़ लेगी। लेकिन राज्य के मामले में विदेशी शक्ति का हस्तक्षेप कदापि भी नहीं चाहती और उसके द्वारा वह महाराणा का अपमान कदापि सहन नहीं करेगी।

इस आन्दोलन से ब्रिटिश सरकार घबरा गई। वह सोचने लगी कि यदि यह आन्दोलन व्यापक और प्रभावशाली हो गया तो ब्रिटिश सरकार की प्रतिष्ठा और रौब कम हो जावेगा और देशी नरेश समझ जावेंगे कि प्रजा का प्रेम प्राप्त कर वे ब्रिटिश सरकार को चुनौती दे सकते हैं। अतएव अंग्रेजी सरकार ने थोड़ा झुककर महाराणा फतहसिंह पर अपना यह दबाव डाला कि आप

महाराजकुमार को कुछ शासन अधिकार दे दें और हम यह घोषणा कर देंगे कि वृद्धावस्था के कारण महाराणा साहब ने कुछ शासन अधिकार महाराजकुमार को सौंप दिए हैं। अस्तु इस आशय की घोषणा ब्रिटिश सरकार ने कर दी।

पथिकजी की मान्यता थी कि देशी राज्यों में वहां की प्रजा के लिए अधिकार प्राप्त करने के लिए आन्दोलन तथा संघर्ष करने वालों को यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिए कि वे ब्रिटिश हस्तक्षेप के लिए कभी भी प्रयत्न न करें। उस समय बहुत से देशी रियासतों के कार्यकर्ता प्रजा के दुःख–दर्द को मिटाने के लिए ब्रिटिश हस्तक्षेप का स्वागत करते थे और उसके लिए प्रयत्न करते थे। परन्तु पथिकजी इसके विरोधी थे। उनका कहना था कि इससे हम ब्रिटिश सत्ता की जड़ को भारत में और अधिक मजबूत बनावेंगे। देशी राज्य तो उनके संकेत पर चलते हैं और उनके बल पर ही टिके हैं। जिस दिन ब्रिटिश सरकार का पतन होगा देशी राज्य स्वयं गिर जावेंगे। अस्तु राजस्थान सेवा संघ की नीति थी कि ब्रिटिश सरकार को देशी राज्यों में हस्तक्षेप न करने दिया जावे। यदि राजस्थान सेवा संघ यह समझता कि ब्रिटिश सरकार किसी राजा को राजनीतिक कारणों से सिंहासनच्युत करना चाहती है तो वह उसका विरोध करता। इसी प्रकार यदि कोई राजा किसी जागीरदार पर अत्याचार करता तो वह जागीरदार का पक्ष लेता। प्रजा के कष्ट निवारण का कार्य तो राजस्थान सेवा संघ का मुख्य लक्ष्य ही था। यदि राजा अथवा जागीरदार प्रजा का उत्पीड़न करते तो राजस्थान सेवा संघ प्रजा को संगठित कर उसके पक्ष में संघर्ष करता। उस समय संघ की राजस्थान में ऐसी धाक थी कि वह सभी का विश्वासभाजन और श्रद्धा का पात्र बन गया था।

यह तो हम पहले ही कह चुके हैं कि बिजोल्यां का फैंसला हो जाने पर वहां लाग, बेगार में छूट की गई थी और नवीन बन्दोबस्त करवाकर उचित लगान निर्धारित किये जाने का निश्चय हो गया था। साथ ही यह भी तय हुआ था कि मेवाड़ में जहां कहीं इस प्रकार की शिकायतें होंगी, बिजोल्यां के अनुसार वहां भी सुविधाएं एवं छूट दी जावेंगी। परन्तु मेवाड़ में परिस्थिति बदल चुकी थी। महाराणा फतहसिंह ने महाराजकुमार भूपालसिंह को अधिकार दे दिये थे। नवीन शासक ब्रिटिश रैजीडैन्ट के संकेत मात्र पर चलता था। ब्रिटिश सरकार राजस्थान सेवा संघ के बढ़ते हुए प्रभाव को खतरनाक समझती थी अतएव उनके संकेत पर अन्य किसी स्थान पर किसानों के कष्टों को न सुनने और आवश्यकता हो तो कठोर दमन करने का राज्य ने निश्चय कर लिया था। इधर अजमेर के ब्रिटिश शासन ने राजस्थान सेवा संघ को समाप्त करने का षड़यन्त्र किया। पथिकजी ने संघ के मन्त्री श्री रामनारयण चौधरी को बिजोल्यां तथा समीपवर्ती प्रदेश के किसानों का मार्गदर्शन करने के लिए भेजा था। जब चौधरीजी, साधु सीताराम दास, तथा अंधे भील गायक श्री प्रेमचन्द भील धांगणमऊ के इलाके में किसान पंचायत को किस प्रकार अपने कष्टों से मुक्ति पाना चाहिए, इस सम्बन्ध में सलाह कर रहे थे तो बिना वारंट दो दर्जन घुड़सवारों ने तीनों को गिरफ्तार कर लिया। उन्हें बरसते पानी में पैदल तीन मील खेड़ा की अदालत ले गए। किसानों को भयभीत करने के लिए पारसौली तथा खैराड़ प्रदेश में अमरगढ़ की जागीर में जहां राजस्थान सेवा संघ ने किसानों की पुकार पर अपने कार्यकर्ता भेजे थे वहां बिना किसी कारण गांवों पर हमला किया गया। जो भी मिला उसे लाठियों से खूब मारा गया। परासौली में तो एक वृद्ध किसान चोट खाकर मर गया। सैनिकों ने औरतों को भी नहीं छोड़ा। उन्हें भी खूब पीटा। यह सब इसलिए किया गया कि उन्होंने अपने कष्टों को दूर

कराने के लिए राजस्थान सेवा संघ की शरण ली थी। पथिकजी ने घायलों के फोटों लिवाकर तथा उनके बयान लेकर इन घटनाओं का खूब ही प्रचार किया। इससे मेवाड़ राज्य का नवीन शासन और अजमेर का ब्रिटिश शासन और भी बौखला उठा। अमरगढ़ के काण्ड में चौधरीजी की पत्नी तथा श्री माणिक्यलाल वर्मा को गिरफ्तार कर लिया गया। उस समय ब्रिटिश सरकार की नीति यह थी कि मेवाड़ के तत्कालीन कठपुतली शासन के द्वारा उन इलाकों में कठोर दमन करवाया जावें, जिनमें राजस्थान सेवा संघ का प्रभाव कम हो और उसके कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कराकर उन पर मुकदमें चलाए जावें। इस सम्बन्ध में एक बड़ी रोचक घटना है। चौधरीजी, साधु सीताराम दास तथा प्रेमचन्द भील पर उदयपुर में गोवर्धन विलास में मुकदमा चलाया गया जहां कि उन तीनों को कैद किया गया था। उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। किन्तु पुलिस को कोई किसान गवाह नहीं मिला। जिन दो किसानों को पीटकर डरा धमका कर उनके विरुद्ध गवाही देने को लाया गया उन्होंने मजिस्ट्रेट के सामने स्पष्ट कह दिया कि हमें राजस्थान सेवा संघ के कार्यकर्ताओं के विरुद्ध गवाही देने के लिए मजबूर किया गया है। पुलिस घबड़ा गई। अब उसने घुड़सवार को गवाही में उपस्थित किया, जिसने उन तीनों को गिरफ्तार किया था। उसने कहा जब हम उन्हें पकड़ने के लिए गए तो तीनों ने जमीन से एक चुटकी मिट्टी उठाई और कुछ मन्त्र पढकर फूंक मारी और कहा– "महाराणा का नाश हो", इस पर सभी लोग खूब हंसे और मजिस्ट्रेट ने कहा कि यदि पुलिस की ऐसी ही गवाहियां हुई तो उसके करम फूट गए। पुलिस को संघ को कार्यकताओं के खिलाफ कोई गवाही नहीं मिल सकी। उधर तीनों ने लिखित लम्बे बयान दिये जिसमें जागीरदारों तथा रियासत के अत्याचारों और शोषण, प्रजा की कष्ट गाथा, तथा राजस्थान सेवा संघ का शान्ति की नीति का तथ्यपूर्ण प्रभावशाली विवरण दिया गया था। मजिस्ट्रेट भूरेलाल हिरण दीवान धर्मनारायण जी के पास गए और कहा कि इन लोगों पर कोई जुर्म सिद्ध नहीं हो सका, उन्हें सजा देना कठिन है, और यदि बयान प्रकाशित हुए तो राज्य की प्रतिष्ठा को धक्का लगेगा। अतएव मुकदमा राज्य ने उठा लिया और धर्मनारायण तथा चटर्जी ने श्री चौधरीजी से राजस्थान सेवा संघ तथा मेवाड़ सरकार के बीच स्थायी समझौते की बात आरम्भ की। तीन दिन की बातचीत होने के बाद स्थायी समझौते की योजना तैयार हुई। परन्तु जब मेवाड़ सरकार ने ए0जी0जी0 से आज्ञा मांगी तो इन्हें फटकार मिली और चौथे दिन अचानक बातचीत बंद कर दी गई। महाद्राज्य सभा ने तीनों को छोड़ दिया। उस दिन एक और मनोरंजक घटना घटी उससे यह स्पष्ट हो गया कि राज्य के निम्नकोटि के कर्मचारी संघ से कितने अधिक प्रभावित थे। जो सिपाही तीनों कार्यकर्ताओं की निगरानी के लिए रक्खे गये थे उन्होंने मन्त्री को इस आशय का प्रार्थना पत्र दिया– "हमें राजस्थान सेवा संघ के नेताओं की अर्दली में रक्खा गया था अब सरकार ने उन्हें छुट्टी दे दी है तो हमें भी अपने घर जाने की आज्ञा दे दी जावे।"

उधर ब्रिटिश सरकार के संकेत पर मेवाड़ राज्य तथा अन्य राज्य घोर दमन कर रहे थे। इधर अजमेर के अंग्रेज शासन ने सेवा संघ पर सीधा प्रहार किया। दो सौ कांस्टेबलों को लेकर अजमेर के पुलिस सुपरिंटैंडैंट ने संघ के कार्यालय पर छापा मारा और प्रातःकाल से तीसरे पहर तक तलाशी लेने के बाद वे कार्यालय से तीन गाड़ी भर कर कागजात उठा ले गए। राजस्थान सेवा संघ से ले जाए गए कागजों में 'नवीन राजस्थान' के वे स्वेच्छा स्वयंसेवक संवाददाताओं के नाम भी थे जो समस्त राजस्थान के देशी राज्यों और मध्यभारत के कुछ राज्यों में फैले हुए थे,

और केवल सेवा भाव से प्रेरित होकर महान खतरा उठाकर भी वे जनता के कष्टों को चुन–चुनकर 'नव राजस्थान' में प्रकाशित करने के लिए भेजते थे। उन कागजों की छानबीन करने के लिए सभी राज्यों के उच्च पुलिस अधिकारी आ गए। वे यह चाहते थे कि यदि उन्हें 'नव–राजस्थान' के सवाददाताओं के नाम मिल जावें तो वे उन्हें भी गिरफ्तार कर आतंकित करके उन पर भी मुकदमा चलाकर किसी मुकदमें आदि में फांस कर उनको भयभीत कर दें, और राजस्थान सेवा संघ की रीढ़ टूट जावे। अजमेर के शासन ने उन कागजों को राज्यों की पुलिस को छानबीन करने की आज्ञा के साथ दे दिया। पथिकजी ने घोर विरोध किया। ए0जी0जी0 को उन्होंने धमकी दी कि यदि यह गैरकानूनी कार्यवाही नहीं रोकी गई तो संघ को कठोर कदम उठाना पड़ेगा। हॉलैंड को विवश होकर यह कार्यवाही रोकनी पड़ी। जिस दिन यह आज्ञा हुई तो सब राज्यों के पुलिस अफसर ए0जी0जी0 के पास कागजों की छानबीन की आज्ञा पुनः प्राप्त करने के लिए गए। हॉलैंड ने उन्हें अनुचित बताकर कागजात दिखाने की आज्ञा देना तो अस्वीकार कर दिया, किन्तु उन्हें आश्वासन देते हुए कहा कि सरकार अब पथिक और उसके आन्दोलन को सर्वथा कुचल डालने का निश्चय कर चुकी है। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार पथिकजी और राजस्थान सेवा संघ को समूल नष्ट कर देने पर तुल गई और उसके संकेत पर राज्यों की सरकारें मनमाना अत्याचार, दमन और कुचक्र करने लगीं।

बेगुं का आन्दोलन

राजस्थान सेवा संघ के आन्दोलन करने का तरीका यह था कि जब किसी प्रदेश के लोग अपने कष्टों के निवारण के लिए संघ से सहायता लेने आते और संघ के नेतृत्व में आन्दोलन करने की इच्छा प्रगट करते तो संघ किसी विश्वस्त कार्यकर्ता को उस क्षेत्र में भेजता। वह कार्यकर्ता वहां पहुंच कर जनता के कष्टों की जांच करता और उनकी पंचायत का प्रतिनिधि ढंग पर संगठन कर देता। पंचायत संघ में अपना विश्वास प्रगट करते हुए उनके नेतृत्व में काम करने की मंजूरी लिख कर दे देती। संघ की सलाह के अनुसार पंचायत अपनी मांगें ठिकाने और राज्य सरकार के सामने प्रार्थना–पत्रों के रुप में उपस्थित करती। कुछ समय प्रतीक्षा करने के उपरान्त जब पंचायत देखती कि उनके प्रार्थना पत्र की कोई सुनवाई नहीं होती तो किसान ठिकाने या राज्य के विरुद्ध सत्याग्रह करते। संघ की ओर से कम से कम एक कार्यकर्ता किसानों का मार्गदर्शन करने के लिए उन्हीं में रहने के लिए दे दिया जाता। उसकी सहायता से पंचायत लोगों से निर्धारित कार्यक्रम पर अमल करवाती। इधर संघ उस क्षेत्र की जनता के कष्टों की गाथा को समाचार पत्रों द्वारा समस्त देश में फैलाता। पंचायत के साप्ताहिक अधिवेशन अवश्य होते थे। उसमें प्रत्येक गांव के प्रतिनिधि आते, और सप्ताह भर की खास घटनाओं पर विचार होता। ब्रिटिश सरकार के हस्तक्षेप को संघ अवांछनीय मानता था, अतएव ब्रिटिश सरकार से कोई सम्बन्ध नहीं रखा जाता था। उस इलाके में आन्दोलन को तीव्र तथा प्रभावशाली बनाने के लिए तथा बच्चों, स्त्रियों तथा युवकों में उत्साह बनाए रखने के लिए स्थानीय बोली में उत्साहवर्धक उपयुक्त गीत बनाकर उनको गाया जाता। संघ ने गीतों का अपने आन्दोलन में प्रचार के लिए बहुत उपयोग किया, और उसमें आशातीत सफलता मिली। श्री माणिक्यलाल वर्मा, स्वर्गीय प्रेमचन्द भील, भंवरलालजी स्वर्णकार, प्रज्ञाचक्षु तथा स्वयं पथिकजी गीत बनाते और उनको गाया जाता। श्री वर्माजी का 'पंछीड़ा' तथा प्रेमचन्दजी का 'मान मान मेवाड़ा राणा' गीतों में ओज और उत्साह कूट–कूटकर भरा था। संघ के आन्दोलनों में पथिकजी मानवस्वभाव तथा

विशेषकर ग्रामीण जनता की मनोवृत्ति को बहुत अच्छी तरह से समझते थे। यही कारण था कि उन्होंने संघ द्वारा निर्देशित आन्दोलनों में गीतों का बहुत अधिक उपयोग किया।

जब बिजोल्यां का आन्दोलन तेजी पर था, उसका प्रभाव समीप की अन्य जागीरों पर भी पड़ने लगा था। पड़ोस में बेगुं का मेवाड़ का प्रथम श्रेणी का ठिकाना था। बेगुं के किसानों की कष्ट गाथा वही थी जो बिजोल्यां के किसानों की थी। लाग, बेगार, अत्यधिक ऊँचा लगान, और ठिकाने के अत्याचारों से निर्धन किसान दबे हुए कराह रहे थे। वहां भी धाकड़ों की अधिक आबादी थी। अस्तु उनके बिजोल्यां के किसानों से निकट के सम्बन्ध थे। बेगुं के किसानों ने देखा कि पथिकजी और राजस्थान सेवा संघ के नेतृत्व में बिजोल्यां के किसानों ने बिजोल्यां के ठिकाने तथा मेवाड़ राज्य के दमन की चिंता न कर आन्दोलन खड़ा किया। उन्हें यह दिखलाई दे रहा था कि बिजोल्यां का सत्याग्रह आन्दोलन ठिकाने और राज्य के दमन होते हुए भी सफलता के निकट पहुंच गया है, अस्तु बेगुं के किसान भी जागे और उनके पंच लोग अजमेर पथिकजी के पास आ गए और राजस्थान सेवा संघ की सहायता चाही। पथिकजी ने संघ के मन्त्री श्री रामनारायण चौधरी को उन पंचों के साथ मेवाड़ के तत्कालीन दीवान बहादुर दामोदरलाल के पास भेजा। पंचों ने अपनी कष्ट कहानी दीवान के सममुख रखी। दीवान महोदय एक निर्बल व्यक्ति थे। उन्होंने जांच करने का वचन दे बेगुं के पंचों को विदा किया। जब चौधरीजी अजमेर पहुंचे और पथिकजी को मेवाड़ के दीवान से हुई बातचीत का सारांश बताया तो पथिकजी समझ गए कि राज्य सरकार कुछ भी करने वाली नहीं है। अतएव उन्होंने चौधरीजी को बेगुं जाकर वहां किसानों का संगठन करने और आन्दोलन की तैयारी करने का आदेश दिया। चौधरीजी बेगुं आए वहां के किसान पंचों से मिले। बेगुं की स्थिति का अध्ययन किया। पंचों की सभा में भाषण दिया और बतलाया कि सत्याग्रह के द्वारा अन्याय और अत्याचार का विरोध किस प्रकार किया जा सकता है। दूसरे दिन रायता गांव में बेगुं के किसानों की सार्वजनिक सभा की गई। सभी गांवों से हजारों की संख्या में किसान इकट्ठे हुए। बेगुं में भी आन्दोलन शुरु हुआ और तेजी पकड़ने लगा।

जब बेगुं में आन्दोलन छिड़ा तो उस समय बिजोल्यां में तो आन्दोलन चल ही रहा था, समीप के अनेक जागीरों में किसान उठ खड़े हुए। ब्रिटिश शासन के संकेत पर मेवाड़ राज्य इन आन्दोलनों को कुचल डालना चाहता था। जागीरदार व्यक्तिगत रुप से किसान जागृति से बुरी तरह बौखलाए हुए थे, उन्हें यह भय हो गया था कि किसान जाग उठे तो उनकी जागीरें समाप्त हो जावेंगी; उन्हें यह अच्छा अवसर मिला और ब्रिटिश सरकार तथा मेवाड़ सरकार का प्रोत्साहन पाकर वे कठोर दमन पर उतर आए। किसानों पर घोर अत्याचार होने लगे। खड़ी फसलों को नष्ट कराना, जला देना, जंगल से घास और लकड़ी न लाने देना, पशुओं को घर से बाहर न निकलने देना, जंगल में न चरने देना, मारपीट जुर्माना और कैद साधारण बात हो गई थी। पथिकजी ने बेगुं आन्दोलन का भी खूब प्रचार और प्रकाशन किया। जब तक ऊपर लिखे अत्याचार होते रहे तब तक तो किसान चुप रहे, किन्तु जब औरतों को अपमानित किया जाने लगा तो वे तिलमिला उठे। बेगुं ठिकाने, छुटभइया रावड़दा के ठाकुर, सेमलिया के ठाकुर तथा छरछा के ठाकुर ने तो अति कर दी। जो किसान सत्याग्रह में अधिक सक्रिय थे, उनकी पत्नियों को अपने लठैंतों से पिटवाना और बेइज्जत करना शुरु किया। रावड़दा के ठाकुर ने रतनी भीलनी और ऊदी मालिन को उनके पतियों की अनुपस्थिति में सरे बाजार अपने लठैतों से

घसीटवाया, और उल्टी लटकवाकर पिटवाया। यही नहीं उन्हें अपने गढ़ में पकड़वा मंगवाया और उनके घर को लुटवा लिया। किसान स्त्रियों के प्रति इस निन्दनीय व्यवहार से तिलमिला उठे, और ठाकुर से बदला लेने पर उतारु हो गए। परन्तु समझाने बुझाने पर यह तय हुआ कि सैंकड़ों की संख्या में ठाकुर के 'रावले' पर लोग सत्याग्रह करें।

जब सैंकड़ों की संख्या में किसान 'रावलें' पर पहुंचे तो रावड़दा ठाकुर स्वयं बन्दूक तानकर खड़ा हो गया। रामनिवास शर्मा नामक अनपढ़ ग्रामीण कार्यकर्ता की बहादुरी ने बाजी किसानों के हाथ में रख दी। वह साधारण ग्रामीण छाती खोलकर ठाकुर की बन्दूक के सामने खड़ा हो गया। ठाकुर घबड़ा गया, तलवार भी म्यान में से न निकाल सका और सत्याग्रहियों ने दोनों बहिनों को छुड़ा लिया और विजय पताका फहराते हुए उन्हें घर ले आए।

जब बेगुं ठिकाने के लोगों ने खड़ी फसलों को नष्ट करना शुरु किया तो किसानों ने जमीन को पड़त रख दिया, खेती ही नहीं की। इस प्रकार दो वर्ष तक लगातार किठाने के कठोर दमन का सामना करते हुए भी किसान नहीं झुके। तब बेगुं राव साहब विवश होकर समझौते के लिए तैयार हो गये। पथिकजी के नेतृत्व में राजस्थान सेवा संघ ने मध्यस्थता की और ठिकाना तथा किसान पंचायत की स्वीकृति से फैंसला तैयार किया। परन्तु मेवाड़ सरकार और उनके प्रभु रैजीडैन्ट नहीं चाहते थे कि किसानों की जागृति अधिक तेजवान बने। उन्होंने जब देखा कि बेगुं के राव साहब झुक रहे हैं तो रैजीडैन्ट और मेवाड़ सरकार ने बेगुं ठिकाने को ही जब्त कर लेने का निश्चय किया। उसके लिए कुछ बहाना होना चाहिए, अतएव प्रकट रुप में रैजीडैन्ट ने बेगुं के कामदार पं0 रघुबर दयाल को बिजोल्यां से भी अच्छा फैंसला करने को प्रोत्साहित किया। परन्तु जब वह फैंसला जो पथिकजी की मध्यस्थता में हुआ था, लेकर कामदार रैजीडैन्ट के पास गया तो रैजीडैन्ट ने उसे 'बौलशैविक फैंसला' कहकर ठुकरा दिया, यद्यपि ठिकाना उसे स्वीकार कर चुका था। रैजीडैन्ट तथा मेवाड़ राज्य द्वारा उस फैंसले को न मानने पर बिजोल्यां के अनुसार फैंसला तैयार किया गया। ठिकाना तथा किसान पंचायत दोनों ही उसे मानने को तैयार थे परन्तु फिर भी मेवाड़ सरकार ने ब्रिटिश सरकार के संकेत पर वह फैंसला नहीं होने दिया। यही नहीं जब उन्होंने देखा कि किसान और राव साहब फैंसला करने पर उतारु हैं, तो बेगुं राव साहब को दबाया गया और उदयपुर बुलाकर उन्हें वहां रक्खा गया। उन्हें दबाया गया कि मेवाड़ सरकार के नवीन शासन की ओर से दिए गए अत्याचारप्रियता तथा भ्रष्टाचार के लिए प्रसिद्ध लाला अमृतलाल को अपना कामदार बनावें। जब बेगुं राव साहब ने लाला अमृतलाल को अपना कामदार बनाना अस्वीकार कर दिया तो राज्य सरकार ने ठिकाने पर अकारण ही जबरदस्ती मुसरमात बिठादी और लाला अमृतलाल को वहां का मुंसरिम नियुक्त कर दिया। अंग्रेज सरकार की दुरभिसंधि और नीचता का इससे अधिक शर्मनाक उदाहरण देखने को भी नहीं मिल सकता। जो जागीरदार अपनी प्रजा से समझौता करना चाहता था, उसको ठिकाने से हटना पड़ा और रैजीडैन्ट का कोपभाजन बनना पड़ा। बात यह थी कि ब्रिटिश सरकार पथिकजी और संघ के अस्तित्व को मिटा डालना चाहती थी। बेगुं में यदि उनके प्रयत्नों से फैंसला होता तो उनका प्रभाव और प्रतिष्ठा बढ़ती जो कि अभीष्ट न था।

उधर तो राव साहब को अधिकारच्युत कर ठिकाने पर मुंसरमात बिठा दी गई और इधर बन्दोबस्त हाकिम श्री ट्रैंच का एक कमीशन बिठाया गया। उसको बेगुं ठिकाने तथा उसके किसानों का मामला तय करने का अधिकार दिया गया। लाला अमृतलाल को इसी उद्देश्य से

मुसरिम बनाया गया कि वे किसानों को आतंकित कर उनसे अनुचित लाग बेगार को स्वीकार करवा लें। किसानों को कहीं से भी सहायता न मिल सके। इस उद्देश्य से श्री मगनलाल आदि किसानों की पंचायत की लिखा पढ़ी करने वाले व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया. और उनसे इस आशय का मुचलका लिखवाया गया कि वे न तो किसानों की पंचायत में जावेंगे और न ही उन्हें किसी प्रकार की सहायता देंगे। इसका परिणाम यह हुआ कि भय के मारे मेवाड़ और बेगुं का कोई भी व्यक्ति किसान पंचायत की साधारण लिखा पढ़ी करने को भी तैयार न होता था। किसान पंचायत राजस्थान सेवा संघ से कहीं सहायता न प्राप्त कर ले, इस उद्देश्य से यह आज्ञा निकाली गयी कि किसान किसी बाहरी आदमी को अपना प्रतिनिधि नहीं बना सकते हैं और मेवाड़ निवासियों में से केवल उन्हीं को अपना प्रतिनिधि बना सकते हैं जो कि मेवाड़ के पुश्तैनी निवासी हों। संघ की सलाह से किसानों ने यह प्रार्थना की कि हम पढ़े लिखे नहीं हैं इसलिए हमें एक पढ़ा लिखा कर्मचारी साथ में रखने की आज्ञा दी जावे जो कमीशन की दिनभर की कार्यवाही नोट लिख सके, जिन्हें हम जिले के पंचों को बतलाकर उनका मत जान सकें, और दूसरे दिन उनके मत को कमीशन के सामने रख सकें। राज्य ने इसकी भी आज्ञा नहीं दी। किसान प्रतिनिधियों ने इस पर यह प्रार्थना की कि जितनी बातों का उत्तर हमसे लेना हो लिखकर हमें दे दी जावें, दूसरे दिन हम उनका लिखित में उत्तर दे दिया करेंगे। किन्तु उनकी यह प्रार्थना भी स्वीकार नहीं की गई।

विवश होकर पथिकजी ने किसानों को कमीशन का बहिष्कार करने की सलाह दी। किसानों ने कमीशन की कार्यवाही में हिस्सा लेना अस्वीकार कर दिया। ट्रेंच कमीशन ने एकतरफा फैंसला दे दिया। फैंसले में पथिकजी को किसानों में विद्रोह की भावना फैलाने, किसान पंचायत द्वारा गैरकानूनी काम करने, तथा लोगों पर अनुचित दबाव डालकर आन्दोलन में सम्मिलित होने के लिए मजबूर करने का दोषारोपण किया गया, तथा लाला अमृतलाल के बताए अनुसार नाम मात्र की दो चार साधारण लागतें छोड़ दी गईं। शेष लागतों को उचित बताकर ज्यों का त्यों रखा गया। कमीशन के फैंसले को किसानों के पास भेजा गया। किसानों ने उत्तर देने के लिए एक सप्ताह का समय मांगा, वह भी नहीं दिया गया। ट्रेंच ने अमृतलाल के साथ सेना लेकर गोविन्दपुर ग्राम को घेर लिया। एक किसान जो कि शौच के लिए बाहर गया हुआ था, जब लौटा तो गांव को घिरा पाया। सिपाहियों ने उसे पकड़कर पीटना शुरु कर दिया। किसान ने कहा कि मैं इसी गांव का पंच हूँ, अस्तु मुझे जाने दो। उसका चिल्लाना सुन गांव के कुछ पंच भीतर से उधर आए। बस फिर क्या था, यह कह कर कि गांव वालों ने हमला कर दिया ट्रेंच साहब ने गोली चलाने का आदेश दे दिया। गोली चली, जयनगर का रुप धाकड़ गिर गया और मर गया। लोग भागने लगे।

श्री पथिकजी ने बेगुं के गोली काण्ड का अपने ऐतिहासिक मुकदमे में बयान देते हुए अत्यन्त सजीव वर्णन किया है। हम यहां उसका थोड़ा अंश मात्र देते हैं–

"गोली चलने की खबर गांव में फैली, पंचों की औरतें उस ओर दौड़ीं, ट्रेंच साहब और उनके साथियों को मेवाड़ के गौरव पर कालिमा पोतने का अवसर मिल गया। उन्होंने आज्ञा दी कि इनके नाड़े (इजारबन्द) काट डाले जावें। सिपाही शिकारी कुत्तों की तरह उन पर टूट पड़ें और अनेकों वापस भागती हुई स्त्रियों तक को नंगा कर दिया। कईयों को भालों से घायल किया और अन्य प्रकार से अपमानित किया। यह सब किया गया उस राज्य के प्रधानों की आज्ञा से

जो हिन्दु आ–सूर्य का राज्य कहलाता है, हिन्दुओं का श्रद्धापात्र बना रहना चाहता है, जिसके धर्म के अनुसार स्त्रियों और उनकी लज्जा की रक्षा करना अनिवार्य कर्तव्य है, स्त्री पर हाथ उठाना पाप है और स्त्री को बहिन बेटी समझना धर्म है। इन कृत्यों को कराने वाले मिस्टर ट्रैंच और उनके साथी अपने को भले ही कुछ समझते रहें किन्तु मैं भी उनके शरीरों में ऐसी नारकीय आत्माओं का प्रतिबिम्ब देखता हूं जिन्होंने भारतवर्ष में अंग्रेजों के आगमन से पहले कदाचित ही अवतार लिया हो। यह भारत के नामर्द देशी राज्य ही हैं जिनमें ऐसे लोगों को अपनी नारकीय वृत्तियों को चरितार्थ करने का अवसर मिल जाता है, और जो विदेशियों के हाथों अपने देशवासियों और प्रजा को इस दुर्दशा करा सदा के लिए कलंकित हो जाते हैं। अन्यथा सिविलियन बहादुर ने ऐसा आचरण यदि अपने देश में अपने सजातीय राज्य में किसी एक भी स्त्री के साथ ऐसा किया होता तो या तो उसी समय उनका शरीर चील कौंवों का भक्ष बन गया होता या फिर वे आज कहीं जेल खाने के सीखचों से सर मार रहे होते। किन्तु धन्य है क्वीन शासन जहां हिन्दु राज्य में निर्दोष हिन्दु अबलाओं पर ऐसी पाशविकता करने के उपलक्ष्य में साहब बहादुर उलटे गौरव के भाजन हुए हैं।''

(उदयपुर की विशेष अदालत में दिये गये पथिकजी के बयान से)

इस पैशाविक काण्ड के बाद 500 मनुष्यों को गिरफ्तार कर रास्ते पर उन्हें पीटते और अपमानित करते हुए बेगुं ले जाया गया। वहां उन्हें बंद कर दिया गया, उनसे पूछा गया कि तुममें मुखिया और सरपंच कौन है? किसानों ने एक स्वर में कहा कि हम सब मुखिया और सरपंच हैं। बहुत पीटने पर भी किसी ने मुखिया और सरपंच को नहीं बतलाया। जब कई बार मारने पीटने पर सत्याग्रही विचलित नहीं हुए तो उनकी स्त्रियों से कहलवाया गया कि यदि तुमने ठिकाने को लागतें और बेगारें न दीं तो तुम्हारे पुरुषों को मार डाला जावेगा।

ट्रैंच साहब उदयपुर लौट आए। मेवाड़ राज्य के मन्त्री श्री प्रभाषचन्द्र चटर्जी ने समाचार पत्रों में इस आशय की विज्ञप्ति प्रकाशित कर दी गई कि किसान पंचायत रुस की सोवियत संघ की बौलशैविक संस्था है। वह किसानों को लगान देने से मना करती है। ट्रैंच कमीशन किसानों से लगान वसूल करने के लिए गया तो किसानों ने लाठियों और बन्दूकों से कमीशन पर हमला कर दिया। इस कारण आत्मरक्षा के लिए बल प्रयोग करना पड़ा।

बेगुं के तत्कालीन एक कर्मचारी ने लेखक को बतलाया कि बेगुं इलाके से ढाई वर्ष की शेष मालगुजारी वसूल करने मेवाड़ की सेना गई तो भी लोगों ने नहीं दी। उन्हें हजारों की संख्या में गिरफ्तार किया गया। बेड़ियां कम पड़ गईं। चित्तौड़, भीलवाड़ा, जहाजपुर तथा अन्य जिलों से बेडियां मंगवानी पड़ी। फिर भी जब बेडियां यथेष्ट संख्या में न मिल सकीं तो एक बेड़ी से दो–दो किसानों के हाथों को बांधा गया। किसान 'विजयसिंह पथिक' की जय बोलते हुए प्रसन्न मुद्रा में जेल जाने को तैयार हो गए। पथिकजी का किसानों पर अदभुत प्रभाव था।

गोविन्दपुर के पाशविक अत्याचार से बेगुं के किसान कुछ दबने लगे और बेगुं का आन्दोलन कुछ शिथिल होने लगा। पथिकजी ने निश्चय किया कि वे बेगुं जाकर आन्दोलन का निर्देशन करेंगे। राजस्थान सेवा संघ के सभी कार्यकर्ताओं ने इसका घोर विरोध किया। कारण यह था कि वे यह जानते थे कि मेवाड़ सरकार तथा अंग्रेजी सरकार पथिकजी को अत्यन्त खतरनाक समझती है और किसी न किसी प्रकार पथिकजी को वह पकड़कर लम्बे समय के

लिए कारावास में डाल देना चाहती है। अंग्रेज अधिकारी जानते थे कि पथिकजी जैसे अदभुत संगठनकर्ता और साहसी तथा दूरदर्शी नेता के मैदान से हटते ही संघ की शक्ति क्षीण होकर वह प्रभावशून्य हो जावेगा। राजस्थान सेवा संघ के कार्यकर्ता भी यह जानते थे कि यदि सभी कार्यकर्ता जेल चले जावें और अकेले पथिकजी बाहर रह जावें तो राजस्थान सेवा संघ का संगठन, प्रभाव और तेज धूमिल नहीं होगा और यदि पथिकजी पकड़े गए तो राजस्थान सेवा संघ पंगु और प्रभावहीन हो जावेगा। अतएव राजस्थान सेवा संघ ने यही निर्णय किया कि पथिकजी को बेगुं जाकर गिरफ्तार हो जाने की जोखिम न लेना चाहिए।

परन्तु पथिकजी का हृदय अत्यन्त क्षुब्ध था। उनका शौर्य और साहस उन्हें चुनौती दे रहा था। उनके नेतृत्व में सत्याग्रह करने वाले भोले किसानों के साथ अत्यन्त पाशविक अत्याचार हुआ था, और राज्य से उन्हें न्याय भी नहीं मिला। वे तिलमिला उठे। उन्होंने जोखिम की परवाह न की, और राजस्थान सेवा संघ के भविष्य का ही ध्यान किया और वे बेगुं पहुंच गए। वे बेगुं छिपकर पहुंचे और गुप्त रुप से ही आन्दोलन का संचालन करने लगे। सत्याग्रह आन्दोलन पुनः सतेज हो उठा। किसानों ने लगान, लाग और बेगार देना बन्द कर दिया। बेगुं के मुंसरिम लाला अमृतलाल बौखला उठे। मेवाड़ सरकार ने उन्हें किसान आन्दोलन का समूल नाश करने के लिए भेजा था, किन्तु आन्दोलन दिन–प्रतिदिन प्रबल और प्रभावशाली होता जा रहा था। मेवाड़ का नवीन शासन गौरांग प्रभुओं की दया पर निर्भर रहने के कारण उनके संकेत पर किसी भी तरह पथिकजी और उनके आन्दोलन को कुचल डालना चाहता था।

जो किसान ठिकाने के अत्याचार से भयभीत हो लगान, लाग और बेगार दे देते थे, उनका बहिष्कार होने लगा। पंचायत ने यह निश्चय कर दिया कि जो किसान लगान या बेगार देगा उसके बेटी व्यवहार बंद कर दिया जावेगा। बेगुं के महाजन जब ठिकाने से सहयोग करने लगे तो पंचायत ने निश्चय किया कि उनका बहिष्कार किया जावे कोई उनसे लेन देन न रक्खे। पंचायत ने पंचायत की दुकानें स्थापित करा दीं, किसान उनसे चीजें खरीदने लगे, तब जाकर कहीं महाजनों को होश आया। लगान बन्द हो जाने से छोटे गरीब जागीरदारों की दशा दयनीय हो गई। वे पथिकजी के पास पहुंचते, उनसे अपनी कठिनाई कहते और भविष्य में संघ का विरोध न करने का आश्वासन देते। तब पथिकजी वहां की पंचायत को लिख देते कि संघ द्वारा निर्धारित घटी हुई लगान दे दी जावे तो ग्राम पंचायत उस जागीरदार को लगान दिला देती।

पथिकजी इस समय बहुत ज्यादा बीमार थे। उन्हें संग्रहणी हो रही थी, चलना फिरना भी कठिन था, किन्तु जंगलों पहाड़ों में छिपकर रहते और दिन में सोलह और अट्ठारह घंटे काम करते। उनका स्वास्थ्य गिरता जा रहा था। जंगल–जंगल भटकने के कारण उनको खाने को जो भी मिलता, खेतों से मक्का के भुट्टे इत्यादि तोड़कर, शिकार कर मांस, आदि खाकर काम चलाते। इस कारण उनका रोग बढ़ता ही जा रहा था किन्तु एक वह थे कि तनिक भी विश्राम नहीं करते; आन्दोलन को सतेज बनाने के लिए अनवरत दौड़धूप करते रहते। आन्दोलन उनके कारण बहुत तीव्र हो चुका था। जब पथिकजी का स्वास्थ्य अधिक गिर गया और वे बहुत बीमार हो गए तो वे बेगुं में छिपकर एक धाकड़ के यहां रहने लगे और वहीं से आन्दोलन करने लगे।

बेगुं के मुंसरिम लाला अमृतलाल आन्दोलन को तीव्र होता देख बौखला उठे। उन्हें यह ज्ञात हो गया था कि पथिकजी बेगुं में हैं, परन्तु ठिकाने के कर्मचारी उन्हें पकड़ नहीं पाते थे क्योंकि वे जंगल और पहाड़ों में रहते थे। बहुत कुछ प्रयत्न करने के उपरान्त उन्हें यह ज्ञात हुआ कि अमुक धाकड़ जानता है कि वे कहां छिपे रहते हैं। फिर क्या था, उन्होंने उसे पकड़वा मंगवाया। रात भर उस पर भयंकर मार पड़ी, उसके साथ घोर अमानुषिक अत्याचार किये गए। उस भयंकर मार तथा अत्याचार को न सह सकने के कारण उसने भेद खोल दिया, और पथिकजी पकड़ लिए गए और अधिकारियों ने वचन भंगकर पथिकजी के साथ दुर्व्यवहार किया, बाजार में उन्हें पीटा गया और फिर चित्तौड़ भेज दिया।

मेवाड़ सरकार ने एक विशेष अदालत बिठाई। पं0 त्रिभुवननाथ सुपारी, श्री रतीलाल अंताणी, और बाबू डालचन्द अग्रवाल जज नियुक्त किये गये। चित्तौड़ में विशेष अदालत बैठी। उस समय समस्त देश में पथिकजी के गिरफ्तार होने पर क्षोभ प्रगट किया गया। सभी पत्रों ने यह मांग की कि पथिकजी को सुविधाएं दी जावें। देशी राज्यों के प्रमुख नेता स्वर्गीय श्री मणिलाल भाई कोठारी स्वयं उदयपुर आए और मन्त्रियों से मिलकर उन्होंने राज्य सरकार पर जोर डाला कि पथिकजी को मुकदमा लड़ने की सभी सुविधाएं दी जावें। परन्तु पथिकजी को राज्य ने बाहर से वकील लाने की आज्ञा नहीं दी। मेवाड़ के किसी वकील का भला क्या साहस था कि वह पथिकजी के मुकदमे की स्वतन्त्रतापूर्वक उचित पैरवी करता। परन्तु कमीशन ने उनको एक सरकारी वकील दिया। चित्तौड़ में नगर के बाहर पथिकजी और न्यायधीशों का डेरा लगा और वह ऐतिहासिक मुकदमा शुरु हुआ। पथिकजी के लिए दिया हुआ सरकारी वकील तो था ही वे अपनी पैरवी स्वयं भी करते थे। कमीशन ने उन्हें आने के लिए घोड़े की सवारी दी जबकि मेवाड़ में बीमार होने पर गधे की सवारी मुलजिम को दी जाने का नियम था। लाला अमृतलाल से यह सहन नहीं हुआ उन्होंने विशेष अदालत में रोष भरे शब्दों में कहा कि इससे मुलजिम की इज्जत बढ़ती है। श्री त्रिभुवननाथ ने उनसे कहा कि यदि आप भी इस प्रकार के मुलजिम बन कर आवें तो आपकी भी अदालत ऐसी ही इज्जत करेगी। पथिकजी जब अदालत में आते तो उनके तेजस्वी व्यक्तित्व को देखकर सभी प्रभावित होते। आते ही वे जजों से 'वंदेमातरम' कह कर अभिवादन करते। जज भी उनके तेजस्वी व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। यद्यपि पथिकजी बन्दी थे परन्तु उनके मित्र और सहयोगी उनसे सम्पर्क स्थापित कर ही लेते थे, क्योंकि मेवाड़ सरकार के कर्मचारी उनकी तुलना में नितान्त बौद्धिक बौने थे। साढ़े तीन वर्ष तक मुकदमा चलता रहा। बीच में विशेष अदालत उठकर उदयपुर चली गई और पथिकजी "खास औदी" नामक महाराणा के शिकारी स्थान पर उदयपुर शहर से पांच मील दूर रक्खे गये थे।

बेगुं के मुंसरिम लाला अमृतलाल ने पथिकजी को सजा दिलाने के लिए आकाश पाताल एक कर दिया। उन्होंने पथिकजी और उनकी शक्ति को कुचलने और उनके प्रभाव को नष्ट करने के लिए घृणित से घृणित उपायों का उपयोग किया। वे यह समझते थे कि यदि वे पथिकजी की शक्ति और प्रभाव को समाप्त करने में सफल हो गए तो राजस्थान सेवा संघ स्वतः ही समाप्त हो जावेगा और किसानों में जो नवजीवन उत्पन्न हो रहा है उसे सदैव के लिए दफनाया जा सकेगा। उस दशा में वे मेवाड़ राज्य और गौरांग प्रभुओं के कृपापात्र बन जावेंगे और उनकी पदोन्नति होगी। पथिकजी जब बन्दी थे तब उन्होंने उनके विरुद्ध बहुत से पैम्पलैट

तथा पर्चे छपवाए। उसमें पथिकजी को तथा राजस्थान सेवा संघ को बदनाम करने का अत्यन्त अशोभनीय और निन्दनीय प्रयत्न किया। जो पैम्पलैट उन्होंने प्रकाशित किया था उसमें यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया था कि पथिकजी वास्तव में किसानों के सहायक नहीं हैं वे किसानों को मूर्ख बनाकर उनसे रुपया लेते हैं, वे डाकुओं की तरह आतंक और भय फैलाना चाहते हैं। राज्य के विरुद्ध प्रजा में विद्रोह भड़काते हैं, और स्वयं गांवों में अपना अधिकार चलाना चाहते हैं। किसान अब उनसे तंग आ गए हैं और उनसे कोई भी सम्बन्ध रखना नहीं चाहता। लाला अमृतलाल जैसे सिद्धान्तहीन और भ्रष्ट राजकर्मचारी द्वारा पथिकजी के विरुद्ध झूठे अपवाद का प्रचार उतना आश्चर्यजनक और खेद की बात नहीं थी, क्योंकि लाला अमृतलाल को सभी जानते थे कि वे अपने स्वार्थ के लिए घृणित और निन्दनीय से निन्दनीय काम कर सकते थे, परन्तु आश्चर्य और खेद की बात यह थी कि उन्हें अपने प्रयत्न में कुछ सार्वजनिक जीवन में राजनीतिक कार्य करने वालों की सहायता और सहयोग मिला था।

बात यह थी कि पथिकजी के बढ़ते हुए प्रभाव और उनके नेतृत्व में राजस्थान सेवा संघ की शक्ति और ख्याति से कुछ लोग अजमेर में मन ही मन प्रसन्न नहीं थे। अजमेर के सार्वजनिक जीवन की प्रतिस्पर्धाओं से भी लाला अमृतलाल को अपने प्रचार में खूब सहायता मिली। परन्तु इस प्रचार का उन किसानों और ग्रामीण जनसंख्या पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा जिनकी पथिकजी ने सेवा की थी। ग्रामीण जनता का पथिकजी में पूर्ववत विश्वास और भक्ति बनी रही। समाचार पत्रों ने लाला अमृतलाल को खूब आड़े हाथों लिया। पथिकजी को जेल में बन्द कर पीठ पीछे वार करने की घृणित चेष्टा की लोकमत ने तीव्र निन्दा की। परन्तु एक अभियुक्त पर उसके आचरण और चरित्र पर जबकि वह जेल में बन्द होने के कारण प्रतिवाद भी नहीं कर सकता था, गर्हित आक्रमण होते देखकर भी विशेष अदालत ने उसे अपने के लिए अपमानजनक नहीं समझा और न अभियुक्त की रक्षा के लिए एक शब्द ही कहा।

पथिकजी ने लाला अमृतलाल के उस पैम्पलैट के सम्बन्ध में अपने बयान में कहा था– "आपकी राज्यभक्ति का एक उदाहरण दे देना अनुचित न होगा। अजमेर में आप संघ के मन्त्री श्री रामनारायण चौधरी से मिले थे।" पैम्पलैट की चर्चा होने पर आपने कहा– "मैने जो कुछ किया महाराजकुमार श्री भूपालसिंह के कहने पर किया है।"

(पथिकजी का बयान)

पथिकजी के विरुद्ध दूसरा पैम्पलैट स्वयं राजाधिराज नाहरसिंह ने लिखा और प्रकाशित करवाया किन्तु उस पर नाम नाथू धाकड़ का दिया गया। बात यह थी कि संघ ने राजाधिराज नाहरसिंह के व्यक्तिगत आचरणों के कारण जनता को घोर कष्ट था उसकी जांच करवाई थी और गुप्त रुप से उनकी आचरण सम्बन्धी एक रिपोर्ट तैयार की थी। जब संघ के कार्यालय की तलाशी ली गई तो ए0जी0जी0 ने उस रिपोर्ट को देखा। उस रिपोर्ट के कारण राजाधिराज की प्रतिष्ठा कुछ गिर गई थी, इसी कारण वे पथिकजी से अत्यन्त क्षुब्ध थे। कहने का तात्पर्य यह था कि जब पथिकजी जेल के सीखचों में बन्द थे तब उनके शत्रुओं ने और अजमेर के कतिपय सार्वजनिक कार्यकर्ताओं ने उनके यश को धूमिल करने की भरसक चेष्टा की।

पथिकजी का यह ऐतिहासिक मुकदमा साढ़े तीन वर्ष तक चलता रहा। उस मुकदमें का ऐसा व्यापक प्रचार हुआ कि ब्रिटिश सरकार तथा देशी राज्य उनसे अत्यन्त क्षुब्ध थे। भारत के

सभी प्रमुख पत्रों में मुकदमें का विस्तृत विवरण छपता था। पथिकजी ने सौ फुलस्कैप पृष्ठों का जो लिखित बयान विशेष अदालत में दिया वह तो देशी राज्यों की दयनीय दशा का ऐसा प्रमाणिक और प्रभावशाली चित्रण था कि उसका विरोध कर सकने का स्वयं मेवाड़ राज्य को भी साहस नहीं हुआ। पथिकजी ने उस बयान में तथ्यों सहित यह सिद्ध किया कि मेवाड़ की प्रजा इतनी पीड़ित और दुःखी हो उठी थी कि जागीरदारों और भ्रष्ट राज्यकर्मचारियों का शोषण और उत्पीड़न चरम सीमा को लाँघ गया था, कि प्रजा विद्रोह करने की मनःस्थिति में थी। यह तो मैंने ही उन्हें शान्तिपूर्वक सत्याग्रह के लिए तैयार कर मेवाड़ राज्य को अपनी भयंकर भूल सुधारने का एक अवसर दिया है। वास्तव में इन भ्रष्ट राज्यकर्मचारियों की तुलना में मैं राज्य का सबसे बड़ा शुभचिन्तक हूँ। पथिकजी का यह बयान उनकी प्रतिभा और राजनीति के गहरे ज्ञान का उत्तम उदाहरण था। उस बयान का भी बहुत अधिक प्रचार हुआ। पथिकजी के मुकदमे का ऐसा व्यापक प्रचार हुआ कि स्वयं महामना मदनमोहन मालवीय को आश्चर्यचकित हो जाना पड़ा। पथिकजी के मुकदमें की गूंज देश के कोने में पहुंचती थी।

राज्य पथिकजी के विरुद्ध राजद्रोह तथा प्रजा में विद्रोह की भावना फैलाने का दोषारोपण सिद्ध न कर सका। किसान तो पथिकजी को देवता की तरह पूजते थे, अतएव राज्य और ठिकाने को उनके विरुद्ध कोई भी किसान गवाह न मिला। लाला अमृतलाल ने दो चार किसानों को पकड़कर उन्हें बुरी तरह पिटवाकर और उनके साथ अमानुषिक अत्याचार कर उन्हें पथिकजी के विरुद्ध गवाही देने के लिए तैयार किया, किन्तु जब वे अदालत में आए तो उन्होंने पथिकजी के पक्ष में गवाही दी और अपने ऊपर हुए अत्याचार की शिकायत की। यही नहीं कि ठिकाने और राज्य को पथिकजी के विरुद्ध गवाही देने के लिए कोई विश्वास करने लायक गवाह नहीं मिला। उनके विरुद्ध ठिकाने और राज्य कोई कागजी सबूत भी उपस्थित न कर सके। इनके विरुद्ध कई सरकारी लेखकों की पथिकजी के प्रति भक्ति के कारण सरकारी कागजों में ही ऐसे प्रमाण मिल गए जिनसे पथिकजी की निर्दोषिता सिद्ध हो गई। अस्तु विशेष अदालत ने पथिकजी को मुक्त कर दिया।

पथिकजी और राजस्थान सेवा संघ की यह बहुत बड़ी नैतिक विजय थी। साथ ही यह भी कहना होगा कि विशेष अदालत के उन तीन जजों में वह नैतिक साहस था कि वे राज्य का रुख जानते हुए भी उससे प्रभावित नहीं हुए और उन्होंने न्याय दे दिया। मेवाड़ राज्य और ब्रिटिश सरकार इसके लिए तैयार नहीं थे। राजस्थान के अन्य देशी राज्य भी यह नहीं चाहते थे कि पथिकजी स्वतन्त्र हो जावें और राजस्थान सेवा संघ पुनः प्रजा को संगठित करे। अस्तु मेवाड़ राज्य ने अपनी आज्ञा से पुनः एक अदालत बिठाई और उसमें ऐसे व्यक्ति नियुक्त किये गये जो पथिकजी को लम्बी सजा देने में संकोच न करें। उनमें से एक दो व्यक्ति तो ऐसे थे जो कानून से नितान्त अनभिज्ञ थे। उस अदालत ने पथिकजी को दोषी ठहराकर पांच वर्ष का लम्बा कारावास दे दिया। निरंकुश शासन में न्याय विभाग प्रशासन के सामने कितना पंगु होता है इसका प्रमाण पथिकजी के मुकदमे से अच्छा और क्या मिल सकता है?

बेगुं में जो शर्मनाक और भयंकर अत्याचार हुआ वह इसलिए किया गया था कि किसान सदैव के लिए हतोत्साह हो जावें और कभी भी भविष्य में सर ऊँचा न उठा सकें। बेगुं ठिकाने के कर्मचारी और मेवाड़ सरकार पथिकजी के किसानों पर प्रभाव से इतनी भयभीत हो उठी थी कि वह किसी न किसी प्रकार पथिकजी को सजा देना आवश्यक समझती थी। जब पथिकजी

पर मुकदमा चल रहा था तो राज्य और ठिकाने की ओर से पथिकजी पर जो दोषारोपण किए गए उनमें से कुछ को पढ़कर यह स्पष्ट हो जाता है कि पथिकजी का आदेश गांवों में राज्य के आदेश से भी अधिक प्रभावशाली था। जिन मुसलमान सज्जन ने पथिकजी के विरुद्ध राज्य की ओर से पैरवी की थी, उन्होंने लेखक को बतलाया कि वस्तु स्थिति यह थी कि उस समय गांवों में राज्य सरकार की सत्ता समाप्त हो गई थी और पथिकजी का आदेश ही सर्वमान्य था।

मुकदमें में उन पर बहुत से दोषारोपण किए गए। उनमें से दो चार उदाहरण यहां देना आवश्यक है। उन पर एक दोषारोपण यह किया गया था कि वे उस क्षेत्र के शासक बन बैठे थे। उसके समर्थन में राज्य सरकार ने कुछ पत्र उपस्थित किये थे, जिनमें किसी किसान ने अपने खेत सम्बन्धी झगड़े का प्रार्थना पत्र श्री पथिकजी को भेजा था। पथिकजी ने उस पर यह आज्ञा दी कि प्रार्थनापत्र बेगुं पंचायत को जांच के लिए भेजा जाता है। कार्यकर्ता जांचकर पूरी जानकारी लिखे और पंचों की राय भी भेजे। इसी प्रकार एक पत्र और उपस्थित किया गया, उसमें किसी पंच के विरुद्ध रिश्वत लेने का अभियोग था। उस पर भी पथिकजी ने यह आज्ञा दी थी कि पंच इस मामले की पूरी जांच कर सच–झूठ को मालूम करके मेरे पास भेजे। वह व्यक्ति जिस पर रिश्वत का अभियोग लगाया गया था, उसके लिए आज्ञा थी कि फैंसला होने तक ऊपरमाल जाकर रहे।

मेवाड़ राज्य की ओर से पथिकजी पर यह अभियोग भी लगाया गया था कि उन्होंने बेगुं ठिकाने के किसानों को आज्ञा दी थी कि वह मालगुजारी न दें। इसका परिणाम यह हुआ कि ढाई वर्ष तक किसानों ने मालगुजारी नहीं दी। इस सम्बन्ध में राज्य सरकार ने पथिकजी का एक पत्र इस आशय का अदालत में उपस्थित किया था कि जो गांव मालगुजारी देने की बात कहता है उससे कह दो कि उन सबसे जनम–जनम के लिए बेटी व्यवहार बन्द कर दिया जावेगा। उनके विरुद्ध अभियोग में यह भी कहा गया कि बेगुं के महाजन रामचन्द्र ने कुछ किसानों पर अपने ऋण के सम्बन्ध में डिगरी कराई और उनके जानवरों की कुर्की की आज्ञा लेकर जब सरकारी कर्मचारी गांव में पहुंचा, उनके जानवरों पर निशान लगाए जाने लगे तो किसानों ने जानवरों को जंगल में भगा दिया और राज्य कर्मचारियों से कहा कि तुम चले जाओ। जब श्री विजयसिंह पथिक का हुकम आवेगा तब कार्यवाही होगी। इसी प्रकार बेगुं ठिकाने के जंगल विभाग के कर्मचारी गोपालसिंह ने अपने बयान में कहा था कि जंगल में लकड़ी काटने के लिए 30 औरतें तथा 50 आदमी विजयसिंह पथिक की जय बोलते आए और जब मैने विरोध किया तो उन्होंने बन्दूक और तलवार जो दीवार के सहारे रक्खी थी उसको उठा लिया और हाथ का बल्लम छीन लिया। मैने भी दरबार की आण दिलाई तो भी वे नहीं माने। यह जानकर कि वे मुझे पीटेंगे, मैने विजयसिंह पथिक की आण दिलाई तब मैं बच सका। औरतें मुझे घेरे खड़ी रहीं, मारा नहीं। जब मैने उनसे विनय की कि मेरे हथियार दे दो तो कहा कि हथियार अजमेर श्री विजयसिंह पथिक के पास हैं, वहां जाओ।

उक्त मुकदमें में ऐसी बहुत सी घटनाओं का विस्तृत विवरण है कि जिनसे यह स्पष्ट होता है कि उस समय मेवाड़ के ग्रामीण क्षेत्र में पथिकजी का आदेश एक पवित्र आज्ञा के समान स्वीकार किया जाता था। उक्त सज्जन ने लेखक को बतलाया कि उस समय की स्थिति यह थी कि वास्तव में पथिकजी वहां के शासक थे। यही कारण था कि मेवाड़ सरकार पथिकजी को अत्यन्त खतरनाक मानती थी। वर्षों से वह पथिकजी को गिरफ्तार करना चाहती थी, परन्तु

पथिकजी उनके हाथ नहीं आते थे। राज्य जानता था कि यदि इस बार पथिकजी को छोड़ दिया गया तो वे फिर कभी हाथ नहीं आवेंगे।

पथिकजी के मुकदमें के सरकारी कागजात देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पथिकजी के नेतृत्व में किसानों का संगठन ऐसा मजबूत बन गया था कि यदि वे पकड़े न जाते और लम्बे समय तक जेल में न पड़े रहते, तथा राजस्थान सेवा संघ छिन्न–भिन्न न हो जाता, तो वे गांवों का ऐसा सुदृढ़ संगठन करते कि राज्य सरकार की सत्ता किसानों की पंचायतों के समर्थन और सहयोग से ही भविष्य में चल सकती। राजतन्त्र समाप्त हो जाता और सारी शक्ति किसानों के हाथों में आ जाती। परन्तु ऐसा होना नहीं था। पथिकजी को लम्बे समय के लिए मेवाड़ सरकार ने इसी कारण जेल में रख दिया। जब पथिकजी गिरफ्तार हो गए, उन पर मुकदमा चलता रहा तथा उन्हें लम्बा कारावास हो गया, तब राजस्थान सेवा संघ पर भारी आपत्ति आ गई। 'नवीन राजस्थान' को मेवाड़, जयपुर तथा बूंदी राज्यों में आने पर रोक लगा दी गई अतएव संघ ने पत्र का नाम 'तरुण राजस्थान' रख दिया। परन्तु पथिकजी के न होने से संघ का सारा कार्य भार उसके मन्त्री श्री रामनारायण चौधरी तथा शोभालालजी पर आ पड़ा। 'तरुण राजस्थान' को प्रकाशित करना, पथिकजी के मुकदमें में दौड़ धूप करना, तथा राजस्थान सेवा संघ के अन्य कार्य उन्हें ही करने पड़े। राजस्थान सेवा संघ की आर्थिक स्थिति दयनीय हो उठी। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी राजा महेन्द्र प्रताप का एक लेख प्रकाशित करने पर श्री रामनारायण तथा शोभालाल गुप्त पर मुकदमा चला। चौधरीजी तो छूट गए परन्तु शोभालाल जी को एक वर्ष की सजा हो गई। जबकि चौधरीजी तथा गुप्तजी पर मुकदमा चल रहा था, तब 'तरुण राजस्थान' का सम्पादन श्री खेमानन्द राहत ने किया। जब चौधरी जी छूट कर आए तो धनाभाव के कारण राजस्थान सेवा संघ की स्थिति एकदम बिगड़ चुकी थी। संघ के सदस्य श्री लाढूराम जी जोशी को कानपुर पथिकजी के परम मित्र तथा राजस्थान सेवा संघ के प्रमुख सहायक श्री गणेशशंकर विद्यार्थी प्रताप सम्पादक के पास आर्थिक सहायता के लिए भेजा गया। स्वर्गीय विद्यार्थी जी ने कानपुर में संघ के लिए एक बड़ी रकम इकट्ठी करके जोशी जी के साथ भिजवाई।

राजस्थान सेवा संघ जैसी तेजस्वी और ठोस कार्य करने वाली संस्था को पथिकजी की अनुपस्थिति में धन का अभाव रहा और राजस्थान के धन–कुबेरों के रहते संघ की स्थिति दयनीय हो गयी। यह राजस्थान के लिए गौरव की बात नहीं थी। बात यह थी कि पथिकजी यद्यपि शान्त सत्याग्रह में विश्वास रखते थे परन्तु वे गांधीवादी नहीं थे। उनका कतिपय प्रश्नों पर गांधीजी से मतभेद था। राजस्थान के सार्वजनिक जीवन को फिर चाहे वह कांग्रेस कार्य हो या सभी को सेठ जमनालाल बजाज की सहायता प्राप्त थी। वस्तुस्थिति यह थी कि राजस्थान के सार्वजनिक कार्यों के लिए जो भी आर्थिक साधन प्राप्त होते थे उसका एक मात्र स्रोत्र सेठजी ही थे। राजस्थान के उद्योगपतियों तथा धनकुबेरों से जो आर्थिक सहायता प्राप्त होती थी वह भी सेठ जमनालाल बजाज के द्वारा ही होती थी। पथिकजी की नीति से कट्टर गांधीवादियों का मेल नहीं खाता था, अस्तु संघ के लिए यह स्रोत्र बन्द था। सम्भवतः पथिकजी से यह भी भूल हुई कि उन्होंने संघ के सदस्यों के त्याग, मितव्ययिता और कर्मठता की ओर ही ध्यान दिया। संघ के आर्थिक साधनों को स्थायी बनाने की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। पत्र से जो आय होती थी और जो कहीं कोई उनके कार्यों का मध्यम श्रेणी का प्रशंसक कुछ संघ को दे देता था

वही संघ का अवलम्ब था। पथिकजी की मान्यता यह थी कि यदि संघ ने उनकी नीति और सिद्धान्तों से मतभेद रखने वालों अथवा धनकुबेरों से आर्थिक सहायता ली तो संघ को एक प्रगतिशील क्रान्तिकारी संस्था नहीं बनाया जा सकेगा। सम्भवतः उनकी यह भी धारणा थी कि किसानों के संगठन कर लेने के उपरान्त अर्थ भी उन्हीं से प्राप्त किया जा सकेगा। जो भी हो उनके जेल चले जाने के उपरान्त संघ की स्थिति दयनीय हो गई। श्री रामनारायण चौधरी किसी प्रकार 'तरुण राजस्थान' को जीवित रख सके, यही बहुत बड़ी बात थी। संघ उस समय ऐसी स्थिति में नहीं था कि राजस्थान के अन्य राज्यों में कोई नवीन आन्दोलन खड़ा कर सकता।

पथिकजी की अनुपस्थिति में केवल अलवर राज्य के नीमचूणा गांव में जो गोलीकाण्ड हुआ वही एक उल्लेखनीय घटना थी। राज्य की सेना ने नीमचूणा में 1925 की ग्रीष्म ऋतु में मशीनगनों से सैंकड़ों किसानों को जिन्होंने लगान तथा बेगार के सम्बन्ध में आन्दोलन किया था, भून डाला और वे अमानुषिक अत्याचार किए जिन्हें सुनकर लज्जा को भी लज्जा आती। समस्त ग्राम में आग लगा दी गई। संघ के श्री कन्हैयालाल कलयन्त्री, लादूराम जोशी, तथा ब्रह्मचारी हरिजी भेष बदलकर नीमचूणा गए और बहुतसी जानकारी इकट्ठी कर ली। रियासत वहां किसी को जाने नहीं देती थी। उधर हिन्दुस्तान टाईम्स के एक संवाददाता ने जासूसी ढंग से महाराजा की चरित्र सम्बन्धी कमजोरियों का पता लगाकर अधिकारपूर्ण सामग्री इकट्ठी कर ली और उनका भंडाफोड़ कर दिया। भाई श्री मणिलाल कोठारी का हृदय नीमचूणा काण्ड की बर्बरता से द्रवित हो उठा। उन्होंने उस प्रश्न को अपने हाथ में लिया। एक जांच कमेटी बनी जिसके वे अध्यक्ष थे और श्री रामनारायण चौधरी मन्त्री थे। यद्यपि जो जांच की रिपोर्ट तैयार हुई वह प्रकाशित न हो सकी क्योंकि वह खो गई, परन्तु संघ ने इस काण्ड का खूब प्रचार किया। महात्मा गांधी तक ने उसकी तीव्र भर्त्सना की। कांग्रेस ने नीमचूणा काण्ड के सम्बन्ध में महात्माजी की प्रेरणा से एक प्रस्ताव भी पास किया।

पथिकजी की अनुपस्थिति में संघ कुछ अधिक कार्य न कर सका। धन और कार्यकर्ताओं का अभाव तो था ही पथिकजी के प्रभाव और संघ की शक्ति को कम करने के राजनीतिक द्वेषपूर्ण प्रयत्न भी चल रहे थे। उस समय तक भारत के राजनीतिक गगन पर महात्मा गांधी का प्रखर प्रकाश फैल चुका था। यद्यपि गांधीजी बहुत उदार थे और पथिकजी के प्रति उनकी भावना बहुत ऊँची थी परन्तु कार्यशैली तथा विचारों में थोड़ा मतभेद था। सेठ जमनालाल बजाज राजस्थान के गांधीवादी नेता थे। वे स्वयं तो राजस्थान में रहते नहीं थे परन्तु उनके नेतृत्व में अन्य गांधीवादी विचारधारा के कार्यकर्ता राजस्थान के सार्वजनिक जीवन में काम कर रहे थे। वे पथिकजी के कार्यों के प्रशंसक न थे और उनकी नीति और कार्यशैली की कटु आलोचना करते थे। उनके प्रति कहीं लेखक अनुदार न हो जावे, इसकी सावधानी रखते हुए सत्य की दृष्टि से यह तो कहना ही होगा कि चाहे बुरे विचार से न सही परन्तु उनके दृष्टिकोण और व्यवहार से संघ और पथिकजी को बहुत हानि पहुंची। पथिकजी जेल में थे इस कारण वे उसका प्रतिकार भी नहीं कर सकते थे। एक ओर मेवाड़ राज्य का, मेवाड़ के जागीरदारों का तथा ब्रिटिश सरकार का पथिकजी के विरुद्ध सम्मिलित अभियान, उन्हें बदनाम करने की कुचेष्टा, और षड़यन्त्र, तथा दूसरी ओर गांधीजी के अनुयायियों द्वारा उस पथिक विरोधी अभियान का मूक समर्थन एक ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना थी जिसका दुष्प्रभाव उस समय तो दृष्टिगोचर नहीं हुआ

परन्तु जो वास्तव में राजस्थान सेवा संघ जैसी अद्वितीय संस्था को समाप्त कर देने में सहायक हुई।

सन् 1928 में पथिकजी जेल से छोड़े गए। उनकी रिहाई के साथ ही मेवाड़ सरकार ने भविष्य के लिए रियासत में उनका प्रवेश निषिद्ध कर दिया। बिजोल्यां के किसानों के आग्रहपूर्ण निमंत्रण पर पथिकजी श्री रामनारायण चौधरी, शोभालाल गुप्त तथा अन्य कार्यकर्ताओं के साथ उन लोगों से मिलने गए। पथिकजी पर मेवाड़ में प्रवेश करने पर प्रतिबन्ध था। अतएव बिजोल्यां की सीमा से मिले हुए ग्वालियर राज्य के 'सिंगोली' इलाके के फूसरिया गांव पहुंचे। पथिकजी के दर्शनों के लिए उस प्रदेश के स्त्री–पुरुष सभी हजारों की संख्या में एकत्रित हुए। दिन भर स्त्री–पुरुषों का दर्शनार्थ तांता लगा रहा। उनकी पथिकजी के प्रति अपार श्रद्धा थी। उनकी उस श्रद्धा को शब्दों में व्यक्त कर सकना कठिन है। जैसे कोई सजीव देवता आए हों और स्त्री–पुरुष उनके दर्शनों को उमड़ पड़े हों, ऐसा था वह दृश्य। प्रत्येक स्त्री–पुरुष ने पथिकजी के प्रति अपनी श्रद्धा प्रगट की और सत्याग्रह की प्रतिज्ञा को दोहराया। पथिकजी ने उन्हें प्रोत्साहन देने वाला भाषण दिया।

मेवाड़ सरकार तथा बिजोल्यां ठिकाने ने पुनः पथिकजी को गिरफ्तार करने का षड़यन्त्र किया। बात यह थी कि सिंगोली जाने वाली सड़क का कुछ भाग मेवाड़ राज्य में पड़ता था। राज्य और ठिकाने की घुड़सवार सेना इस घात में थी कि जैसे ही पथिकजी दूसरे दिन प्रातःकाल चलें और मेवाड़ की सीमा में घुंसे उन्हें गिरफ्तार कर लिया जावे। रात्रि को ग्यारह बजे जबकि पथिकजी दिनभर के कार्यक्रम से थके हुए सोने की तैयारी कर रहे थे तो ग्वालियर में सिंगोली इलाके के पटेल सिंगोली के सरकारी क्षेत्रों से यह खबर लाए कि बिजोल्यां तथा मेवाड़ की घुड़सवार सेना उनको गिरफ्तार करने के लिए मार्ग में घात लगाए बैठी है। पथिकजी के दूसरे दिन प्रातःकाल प्रस्थान करने की घोषणा की जा चुकी थी। पथिकजी ने कार्यक्रम बदल दिया। जब रात्रि में एक बजे सारी दुनिया निद्रा ले रही थी। पथिकजी अपने साथियों सहित पैदल ही चल पड़े। वे सड़क छोड़कर खेत और जंगलों में चलते गए, और प्रातःकाल होते–होते खतरे से बहुत दूर निकल गए। मेवाड़ की सेना को दूसरे दिन पता लगा तो निराश होकर लौट गई। मेवाड़ सरकार ने ग्वालियर राज्य से लिखा पढ़ी की और ग्वालियर राज्य ने पथिकजी को यह आज्ञा दी कि वे मेवाड़ से लगे हुए दस मील के ग्वालियर राज्य के क्षेत्र में नहीं घुस सकेंगे। इस प्रकार मेवाड़ राज्य ने बिजोल्यां से पथिकजी के लिए सम्पर्क स्थापित करना असम्भव कर दिया।

जब पथिकजी जेल से छूटकर बाहर आए तो उन्होंने तुरन्त जान लिया कि राजस्थान में काम करने वाले तीनों दलों अर्थात् राजस्थान सेवा संघ, कांग्रेस तथा गांधीवादियों में सहयोग का नितान्त अभाव है, और भीतर ही भीतर विरोध की गहरी भावना काम कर रही है। पथिकजी जैसे तीक्ष्ण बुद्धि वाले राजनीतिज्ञ को यह समझने में देर न लगी कि राजस्थान का सार्वजनिक जीवन जो तेजहीन हो रहा है और राजनीतिक कार्य की गति जो अवरुद्ध हो गई है उसका एकमात्र कारण तीनों दलों का यह आपसी असहयोग और विरोध है। उस विरोध ने राजस्थान में जनशक्ति को दुर्बल और क्षीण कर दिया था। उदयपुर की जेल में पथिकजी की गांधीजी के प्रति श्रद्धा भक्ति से आगे बढ़कर बहुत कुछ उनके विचारों तक पहुंच गई थी। अस्तु पथिकजी ने

एक बार गांधीजी से मिलकर राजस्थान के आपसी विरोध को समाप्त कर यहां के राजनैतिक तथा रचनात्मक कार्य को गतिशील और तेजस्वी बनाने का निश्चय किया।

वे साबरमती गए, महात्मा गांधीजी से मिले, कई दिनों तक गांधीजी से बात हुई परन्तु सहयोग का मार्ग प्रशस्त न हो सका। यह कहना तो लेखक के लिए आज कठिन है कि वास्तव में किस बात को लेकर पथिकजी का गांधीजी से मतैक्य न हो सका परन्तु पथिकजी ने अपने अन्तिम दिनों में जो महत्वपूर्ण पत्र श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखा था उसमें उस विरोध का संकेत मात्र मिलता है। पथिकजी की मान्यता थी कि स्वतन्त्रता के संघर्ष में भारतीय पूजीपतियों का सहयोग लेना भविष्य में देश के स्वतन्त्र हो जाने पर खतरनाक सिद्ध होगा। सम्भव है कि सैद्धान्तिक रुप से अहिंसा को स्वीकार करने तथा कार्यशैली सम्बन्ध में भी कुछ मतभेद रहा हो। जो भी हो राजस्थान के लिए यह एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना थी कि पथिकजी का गांधीजी से मतैक्य न हो सका। यदि पथिकजी को महात्मा गांधीजी का वरदहस्त और समर्थन प्राप्त हो जाता तो आधुनिक राजस्थान के राजनीतिक गगन पर पथिकजी का प्रखर तेज देदीप्यमान होता और राजस्थान का राजनीतिक जीवन बहुत सतेज और प्रगतिशील होता। इसके उपरान्त पथिकजी ने देशी राज्य परिषद् में सक्रिय भाग लिया।

बड़े दिनों की छुट्टियों में बम्बई में अखिल भारतीय देशी राज्य परिषद् की बैठक हुई। बम्बई में सर्वप्रथम देशी राज्य परिषद् को देशी राज्य की प्रतिनिधि संस्था का स्वरुप प्राप्त हुआ था। देशी नरेश और ब्रिटिश सरकार दोनों ही सशंक दृष्टि से उसकी ओर देख रहे थे। इस अधिवेशन में देश के प्रत्येक भाग से देशी राज्यों की प्रजा के प्रतिनिधि आए थे। उस समय देशी राज्यों के दो संगठन विशेष रुप से क्रियाशील थे। पथिकजी का राजस्थान सेवा संघ और श्री अमृतलालजी सेठ का सौराष्ट्र मण्डल। दोनों में भेद यह था कि राजस्थान सेवा संघ मुख्यतः गांवों में कार्य करता था और देशी राज्यों में ब्रिटिश हस्तक्षेप का विरोधी था, परन्तु सौराष्ट्र मण्डल मुख्यतः नगरों में कार्य करता था और ब्रिटिश हस्तक्षेप का समर्थक था। ब्रिटिश हस्तक्षेप सम्बन्धी नीति के कारण महात्मा गांधी तथा कांग्रेस के अन्य नेताओं का परिषद् को आशीर्वाद प्राप्त नहीं था। परिषद् के संयोजक और संचालन में सौराष्ट्र मण्डल की प्रधानता थी, राजस्थान सेवा संघ का सहयोग था। श्री मणिलाल कोठारी सेवा संघ के साथ थे।

पथिकजी इस अधिवेशन में सम्मिलित हुए। समस्त देशी राज्यों के प्रतिनिधियों की आंखे पथिकजी की ओर लगी हुई थीं। ऐसा लगता था कि मानों सारे प्रतिनिधि पथिकजी को ही वास्तव में देशी राज्यों का नेता मानते हों। उनका उस अधिवेशन में अभूतपूर्व स्वागत हुआ। जैसा स्वागत पथिकजी का हुआ वैसा स्वागत मनोनीत अध्यक्ष का भी नहीं हुआ। बम्बई अधिवेशन में पथिकजी देशी राज्य प्रजापरिषद् के उपाध्यक्ष चुने गए।

जब पथिकजी परिषद् के अधिवेशन से लौटकर आए तो समाचार मिले कि भरतपुर नरेश और अंग्रेजी सरकार के सम्बन्ध बिगड़ते जा रहे हैं। बात यह थी कि वे स्वाभिमानी नरेश थे इस कारण अंग्रेज उनसे नाराज थे। साथ ही उनकी अत्यन्त खर्चीली और बिगड़ी हुई आदत के कारण प्रजा उनसे विमुख और उदासीन थी। भरतपुर नरेश तथा ब्रिटिश सरकार के इस संघर्ष में भरतपुर किसान किशनसिंह जी ने अपने विचारों और कार्यों में राष्ट्रीयता और किंचित लोकतन्त्र की झलक दिखाना आरम्भ कर दिया था। फिर क्या था उनके और ब्रिटिश सरकार में

उग्र संघर्ष खड़ा हो गया। उन्होंने राजस्थान सेवा संघ की सहायता चाही और पथिकजी को भरतपुर निमंत्रित किया। पथिकजी श्री रामनारायण चौधरी के साथ भरतपुर गए। पथिकजी से महाराजा की कई बार बड़ी स्पष्ट बातें हुईं। पथिकजी ने इस बात पर बहुत बल दिया कि प्रजा की सभी कठिनाईयों को दूर कर उसे संतुष्ट करना आवश्यक है। महाराजा के आसपास जो अवांछनीय और बदनाम व्यक्ति हैं, और जो प्रजा पर अत्याचार और उनका शोषण करते हैं, उन्हें हटाया जाये, तो संघ उनकी पूरी सहायता करेगा। परन्तु महाराजा को ब्रिटिश सरकार ने पदच्युत कर निर्वासित कर दिया और उस आघात से कुछ समय बाद ही उनका स्वर्गवास हो गया।

उसी समय कांग्रेस ने भारत के लिए विधान तैयार करने के लिए एक सर्व दल सम्मेलन बुलाया। सम्मेलन में स्वर्गीय पंडित मोतीलाल नेहरु की अध्यक्षता में विधान बनाने के लिए एक समिति नियुक्त कर दी। समिति ने एक योजना बनाई जो नेहरु रिपोर्ट के नाम से विख्यात है। लखनऊ में सर्व दल सम्मेलन का खुला अधिवेशन हुआ उसमें श्री पथिकजी, मणिलाल कोठारी, श्री रामनारायण चौधरी और श्री शोभालाल गुप्त देशी राज्यों की प्रजा के प्रतिनिधि बनकर गए थे। पथिकजी तथा कोठारीजी के प्रयत्नों का फल यह हुआ कि कमेटी ने राजाओं के इस दावे को अस्वीकार कर दिया कि उनका सीधा सम्बन्ध सम्राट से रहे और यह निर्णय किया कि वर्तमान की तरह भविष्य में भी उनका सम्बन्ध भारत की राष्ट्रीय सरकार से ही रहे।

उसी वर्ष एक अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण और दुखद घटना हुई। राजस्थान सेवा संघ में मतभेद उठ खड़े हुए। पथिकजी और श्री रामनारायण चौधरी तथा श्री शोभालाल गुप्त में गहरा मतभेद हो गया। पथिकजी एक तरफ और श्री रामनारायण चौधरी तथा श्री शोभालाल गुप्त दूसरी तरफ। मतभेद गम्भीर रुप धारण करता गया और यह स्पष्ट दिखलाई देने लगा कि संघ का संगठन बिखर जावेगा। यह अत्यन्त लज्जा और खेद की बात है कि राजस्थान के किसी भी वरिष्ठ सार्वजनिक कार्यकर्ता ने इस मतभेद को समाप्त कराकर सेवा संघ जैसी अद्वितीय संस्था को बचाने का प्रयत्न नहीं किया। सार्वजनिक जीवन में द्वेष और ईर्ष्या का इससे अधिक लज्जाजनक और दूसरा उदाहरण नहीं मिल सकता। राजस्थान सेवा संघ के परम सहायक और देशी राज्यों की प्रजा के प्रमुख सहायक स्वर्गीय श्री गणेशशंकर विद्यार्थी को जब इस गम्भीर मतभेद का पता चला तो वे बहुत बीमार थे। डॉक्टरों का मत था कि वे यात्रा न करें; परन्तु उस वीर देशभक्त का हृदय इस अप्रिय घटना से इतना क्षुब्ध हुआ कि वह अपने मन की झटपटाहट को न रोक सका और बीमारी की दशा में भागकर अजमेर आया। रुग्ण अवस्था में भी श्री गणेशशंकर ने बहुत प्रयत्न किया कि पथिकजी का श्री रामनारायण चौधरी तथा श्री शोभालाल जी से मतभेद समाप्त हो जाए। परन्तु मतभेद इतना गम्भीर रुप धारण कर चुका था कि वे सफल नहीं हुए और वर्षों तक छाया के समान साथ रहने वाले और कार्य करने वाले सहयोगी एक दूसरे से पृथक हो गए। श्री मणिलाल कोठारी ने भी इस मतभेद को दूर करने का प्रयत्न किया, किन्तु वे भी सफल न हो सके। पथिकजी श्री रामनारायण चौधरी तथा शोभालाल गुप्त अप्रिय रुप से अलग हो गए। परिणाम यह हुआ कि राजस्थान सेवा संघ और उसका मुखपत्र 'तरुण राजस्थान' श्री मणिलाल कोठारी को सौंप दिया गया। राजस्थान सेवा संघ की तो मृत्यु ही हो गई। कोठारी जी ने पत्र 'तरुण राजस्थान' को अपनी देखरेख में ले लिया और श्री जयनारायण व्यास तथा श्री ऋषिदत्त मेहता को उसका सम्पादन भार सम्भालने के लिए

आमंत्रित किया। अजमेर में पथिकजी तथा रामनारायणजी और शोभालालजी के वैमनस्य को देखते हुए उन्होंने 'तरुण राजस्थान' को ब्यावर से निकालना उचित समझा और 'तरुण राजस्थान' को वे ब्यावर ले गए।

इस प्रकार राजस्थान का एक अद्वितीय और महान तेजवान राजनीतिक संगठन समाप्त हो गया। यह राजस्थान के सार्वजनिक जीवन की अत्यन्त दुःखद घटना थी।

पथिकजी का अपने मुख्य सहयोगियों से इतना गम्भीर मतभेद किन कारणों को लेकर हुआ यह रहस्य सम्भवतः रहस्य में ही छिपा रहेगा। कारण यह है कि इस प्रश्न का उत्तर केवल दो व्यक्ति ही दे सकते हैं– श्री रामनारायण चौधरी तथा श्री शोभालाल जी। किन्तु इस सम्बन्ध में वे दोनों ही मौन रहना ही उचित समझते हैं। शोभालालजी पथिकजी के शिष्य और निकट सहयोगी थे और श्री रामनारायण चौधरी भी पथिकजी के बहुत ही नजदीक थे। आज जबकि उस दुखद घटना को बहुत लम्बा समय हो गया है तब यह भी रहस्य में छिपा है कि उस मतभेद के क्या कारण थे। आज भी दोनों सज्जन पथिकजी के अनन्य भक्त और प्रशंसक हैं।

इस सम्बन्ध में स्वर्गीय नरसिंहदासजी (बाबाजी) ने अपनी पुस्तक 'राजस्थान की पुकार' में जो कुछ लिखा है। उसका सारांश नीचे दिया जाता है–

"संघ स्थापित होने पर कुछ साथियों ने समान उद्देश्य को ही केवल संगठन के लिए आवश्यक नहीं समझा वरन संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली को स्वीकार कर संयुक्त परिवार के समान एक साथ रहने का प्रयोग आरम्भ किया। यह प्रयोग सफल नहीं हुआ और छोटी और व्यर्थ बातों को लेकर आपस में मतभेद हो गया। पारस्परिक तुच्छ विवाद में पड़कर संघ समाप्त हो गया। बिजोल्यां का संगठन सेठ जमनालालजी के और तरुण राजस्थान श्री मणिलाल कोठारी के अधीन कर दिये गये। इस प्रकार इस तेजवान संस्था का दुःखद अन्त हो गया।" बाबाजी ने लिखा है– "संघ में कार्यकर्ताओं की साधना और तपस्या इतनी ऊँची और दृढ़ थी कि वे लोग भूखे रहकर भी काम करते थे और गांधीवादी तथा कांग्रेस के कार्यकर्ता जिस कार्य पर 500 रुपये व्यय करते, संघ के कार्यकर्ता उस कार्य पर एक सौ रुपये भी कठिनाई से व्यय करते थे।"

पृथ्वीसिंह मेहता ने अपनी पुस्तक 'हमारा राजस्थान' में लिखा है कि– "1924 के बाद पथिक के जेल में बन्द रहते समय गांधीवादी पूंजीशाही नेतृत्व के कुचक्रों की बदौलत संघ में पैदा हुए आपसी कलह के कारण उसकी शक्ति क्षीण हो गई और 1928 में इन्हीं मतभेदों के कारण संघ समाप्त हो गया।" यह कहना कठिन है कि इसमें कितना सत्य है।

अस्तु राजस्थान सेवा संघ दस वर्ष तक राजस्थान में अपना प्रखर तेज फैलाकर अस्त हो गया। बिजोल्यां का संगठन सेठ श्री जमनालाल बजाज के अधीन चला गया। वे तो स्वयं उसकी देखरेख कर नहीं सकते थे। अतएव श्री हरिभाऊ उपाध्याय बिजोल्यां के मार्गदर्शक तथा निर्देशक नियुक्त किये गये। पथिकजी उससे दूर हो गए। पथिकजी के जीवन की यह सबसे बड़ी असफलता थी। जिस संगठन को उन्होंने अपने रुधिर से सींचा था वह केवल उनके हाथ से निकल ही नहीं गया वरन छिन्न–भिन्न हो गया। राजस्थान सेवा संघ की मृत्यु हो गई, 'तरुण राजस्थान' के स्वर में वह ओज नहीं रहा। मेवाड़ का किसान संगठन शिथिल पड़ गया।

षष्ठम् अध्याय

राजस्थान सेवा संघ के बाद

जब राजस्थान सेवा संघ समाप्त हो गया तो पथिकजी एक प्रकार से देशी राज्यों की राजनीति से हट गए। उसका कारण यह था कि पथिकजी की यह मान्यता थी कि यद्यपि राजस्थान में उन्नीस देशी राज्य हैं परन्तु देशी राज्यों के कार्यकर्ताओं को समस्त राजस्थान को एक इकाई मानकर ही काम करना चाहिए। इसी कारण उन्होंने किसी एक देशी राज्य को लेकर उसकी पृथक राजनीतिक संस्था को संगठित करने का प्रयत्न नहीं किया। बिजोल्यां, बेगू तथा मेवाड़ के अन्य क्षेत्र उनके मुख्य कार्यक्षेत्र रहे परन्तु उन्होंने मेवाड़ का पृथक राजनैतिक संगठन स्थापित करने की भी कभी कल्पना नहीं की। यदि वे पृथक देशी राज्यों के संगठन के पक्ष में भी होते तो भी उनके लिए उस परिस्थिति में मेवाड़ में पृथक संगठन स्थापित कर सकना सम्भव नहीं था, क्योंकि मेवाड़ राज्य ने उन पर मेवाड़ में आने पर पाबंदी लगा दी थी। राजस्थान सेवा संघ शीघ्र ही प्रभावहीन संस्था बन गई। सच तो यह हैं कि पथिकजी तथा श्री रामनारायण चौधरी आदि में मतभेद होने पर जब संघ कोठारी जी को सौंप दिया गया तो संघ मर गया। केवल 'तरूण राजस्थान' ब्यावर से निकलता रहा। उसकी आवाज में भी पहले जैसा प्रभाव नहीं रहा, वह भी प्रभावहीन हो गया।

तत्कालीन राजपूताने के विभिन्न देशी राज्यों को एक राजनैतिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक इकाई बनाकर समूचे प्रदेश के लिए कार्य करने की कल्पना पथिकजी की ही देन थी। वर्तमान राजस्थाान के वास्तव में वे ही जनक कहे जा सकते हैं। यह उन्हीं की दीर्घ दृष्टि और राजनैतिक सूझ–बूझ थी कि उन्होंने उस समय के एक सशक्त और सुसंठित राजस्थान की कल्पना की थी और राजस्थान सेवा संघ के द्वारा अपने स्वप्न को साकार करने का प्रयत्न किया था।

राजस्थान सेवा संघ के समाप्त हो जाने पर पथिकजी ने अजमेर के रेलवे वर्कशॉप के मजदूरों का कार्य अपने हाथ में लिया। उनकी कार्यक्षमता, प्रतिभा, संगठन शक्ति और राजनीतिक सूझ बूझ इतनी गहरी थी कि वे जिस कार्य को हाथ में लेते थे उसमें वेग और तेज आ जाता था। पथिकजी समाजवादी विचारधारा से प्रभावित थे अस्तु उनके लिए यह स्वाभाविक था कि वे मजदूरों को संगठित करने का प्रयत्न करते। कुछ समय में ही मजदूरों का नेतृत्व उनके हाथ में आ गया और उनके तेजस्वी नेतृत्व में अजमेर रेलवे वर्कशॉप के मजदूरों का एक प्रभावशाली संगठन स्थापित हो गया। बी॰बी॰ एण्ड सी॰ आई रेलवे वरकर्स फेडरेशन के आप जनरल सेक्रेटरी चुने गए। क्रमशः बी॰बी॰ एण्ड सी॰ आई रेलवे का मजदूर संघ इतना प्रभावशाली हो उठा कि रेलवे के वरिष्ठ प्रबन्धक और सरकार चिन्तित हो उठी। पथिकजी के नेतृत्व में रेलवे कर्मचारियों ने कई बार अपने अधिकारों के लिए संघर्ष किया और सफल हुए। जब वर्कशॉप में छँटनी का प्रश्न आया तो पथिकजी ने सरकार को चेतावनी दी और मजदूरों को भावी संघर्ष के लिए तैयार करना आरम्भ कर दिया। यदि संघर्ष छिड़े और कार्यकर्ता गिरफ्तार किए जाने लगें तो संघर्ष को किस प्रकार चलाया जाय, उसकी रुपरेखा उन्होंने तैयार कर ली, परन्तु मजदूरों के संगठन की अधिकारियों पर इतनी गहरी धाक बैठ चुकी थी कि रेलवे ने समझौता कर लिया और संघर्ष टल गया। जब शाही मजदूर आयोग अजमेर आया तो बी॰बी॰सी॰ आई रेलवे मजदूर

संघ की ओर से पथिकजी ने जो बयान दिया था वह उनकी प्रतिभा और मजदूर समस्याओं के गहन अध्ययन का द्योतक था। शाही मजदूर आयोग उनके विद्वतापूर्ण वक्तव्य से बहुत अधिक प्रभावित हुआ था। रेलवे के सर्वोच्च अधिकारी रेलवे एजेंट के वक्तव्य का उन्होंने अकाट्य तथ्यों के द्वारा ऐसा प्रभावशाली खंडन किया कि एजेंट उनका मुँह ताकता रहा और विरोध में कुछ न कह सका। पथिकजी ने उस समय स्वयं अपना निजी साप्ताहिक पत्र 'राजस्थान संदेश' निकालना आरम्भ कर दिया था जिसकी प्रान्त में गहरी धाक जम गई थी। इसके अतिरिक्त वे रेलवे बुलेटिन का सम्पादन करते थे। इन दोनों पत्रों के द्वारा वह शोषित और पीड़ितों की आवाज को सर्व साधारण तक पहुँचाते थे

यदि पथिकजी मजदूरों का कार्य ही करते रहते तो बहुत शीघ्र ही वे अखिल भारतीय स्तर के मजदूर नेता के रुप में प्रसिद्ध हो जाते और उनका मजदूर संगठन भारत का अत्यन्त महत्वपूर्ण और सबल संगठन बन जाता। परन्तु ऐसा होना नहीं था। राष्ट्रपिता गाँधी उस समय नमक सत्याग्रह आरम्भ करने की योजना बना रहे थे। सभी प्रान्तों में कांग्रेस के संगठन को भावी संघर्ष की दृष्टि से सशक्त बनाया जा रहा था। राजपूताना और मध्यभारत में कांग्रेस की स्थिति दयनीय थी। गाँधीवादी कार्यकर्ताओं और सेठजी के आपसी विरोध के कारण कांग्रेस बहुत निर्बल बन चुकी थी। उस समय कांग्रेस ने पथिकजी को राजपूताना मध्यभारत प्रान्तीय कांग्रेस का अध्यक्ष बनने का अनुरोध किया। आन्दोलन को सशक्त और सतेज बनाने के लिए पथिकजी जैसे साहसी और सफल संगठनकर्त्ता की कांग्रेस को आवश्यकता थी। पथिकजी के सामने एक जटिल समस्या उपस्थित हो गई।

बड़ी कठिनाई से पथिकजी ने एक प्रेस खड़ा किया था और 'राजस्थान संदेश' साप्ताहिक पत्र निकालने लगे थे। पत्र जम गया था और देशी राज्यों में वह लोकप्रिय हो गया था। पथिकजी को किसी भी धनी व्यक्ति का आर्थिक सहारा तनिक भी नहीं था। बड़ी कठिनाई से उन्होंने प्रेस खड़ा किया था। वे जानते थे कि आन्दोलन में गिरफ्तार होने पर प्रेस और पत्र समाप्त हो जावेगा और भविष्य में पुनः पत्र निकाल सकना सम्भव न होगा। उधर मजदूर संगठन जो कि उन्होंने बड़े परिश्रम से खड़ा किया था और जो उनके नेतृत्व में बलवान बन गया था उनके जेल में जाने से उसके बिखर जाने और निर्बल हो जाने का भय था। इसके अतिरिक्त वे यह भली भांति जानते थे कि जिन व्यक्तियों के हाथ में कांग्रेस है और जो उसमें शक्तिवान है उसके साथ उनका मतैक्य नहीं हो सकेगा और आन्दोलन के समाप्त होने पर उन्हें पुनः कांग्रेस से पृथक होना होगा। यही नहीं लगभग उसी समय उन्होंने श्रीमती जानकीदेवी पथिक से विवाह किया था। पथिकजी तो एक साधनहीन राजनैतिक तपस्वी थे, उनकी आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी, घर की व्यवस्था का कोई समुचित प्रबन्ध नहीं था। परन्तु यह सारी मजबूरियां उन्हें न रोक सकी। देश की आजादी की लड़ाई का जब बिगुल बजनेवाला हो और पथिकजी जैसे साहसी व्यक्ति से उसका सैन्य–संचालन करने के लिए कहा जावे तो वह उन व्यावहारिक कठिनाईयों को सोचकर उससे कैसे तटस्थ रह सकते थे उनहोंने प्रान्तीय कांग्रेस का अध्यक्ष पद स्वीकार कर लिया। मजदूर संगठन, 'राजस्थान संदेश' और नव–विवाहित पत्नी का मोह, उन्हें न रोक सका और वे आंदोलन में कूद पड़े। उस समय देश में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में युवक कांग्रेस द्वारा पूर्ण स्वतन्त्रता की घोषणा करने के पक्ष में थे। महात्मा गाँधी के व्यक्तिगत प्रभाव के कारण कांग्रेस ने औपनिवेशिक स्वराज्य को नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के विरोध करने

पर भी स्वीकार करने की घोषणा कर दी थी। साथ ही नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के विरोध को कम करने के लिए कांग्रेस ने यह भी घोषणा कर दी कि यदि एक वर्ष में ब्रिटिश सरकार ने औपनिवेशिक स्वराज्य देना स्वीकार नहीं किया तो कांग्रेस अपना ध्येय पूर्ण स्वतन्त्रता घोषित कर देगी। पथिकजी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के मत के समर्थक थे। उनकी भी मान्यता थी कि कांग्रेस को अपना ध्येय पूर्ण स्वाधीनता घोषित कर देश को उसके लिए तैयार करना चाहिए। उस समय जब महात्मा गाँधी कहीं जाते हुए अजमेर होकर निकले तो अजमेर के सभी कार्यकर्ता स्टेशन पर मिलने गए। मौन का दिन था अस्तु लिखकर उत्तर देते थे। पथिकजी के पूछने पर कि यदि एक वर्ष में औपनिवेशिक स्वराज्य न मिला तो आप क्या करेंगे। गाँधी जी ने उत्तर दिया कि उस दशा में अगली कांग्रेस में पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा होगी। सभी को रचनात्मक कार्यक्रम के द्वारा देश के संगठन में जुट जाना चाहिए।

1629 की लाहौर कांग्रेस में पूर्ण स्वाभीनता का लक्ष्य घोषित किया गया और देशव्यापी आन्दोलन की तैयारी की जाने लगी। पथिकजी के नेतृत्व में अजमेर में युवकों का संगठन हुआ। उस समय पथिकजी ने राष्ट्रीय आन्दोलन को जो गति दी उसकी याद आज भी लोगों के हृदय से दूर नहीं हुई। पथिकजी ने उस समय राष्ट्रीय कविताएं लिखकर जन–जागरण का अद्‌भुत कार्य किया। जब स्वतन्त्रता हमारा लक्ष्य है यह घोषणा की गई तो अजमेर में पथिकजी का भारत प्रसिद्ध 'झंडा गान' जन जन से मुखरित हो उठा।

उत्साही कांग्रेस स्वयंसेवक जब पथिकजी के 'झंडा गान' को गाते चलते तब वह अभूतपूर्व दृश्य देखकर सरकार–भक्त लोगों के हृदय में भी एक बार मातृभूमि की भावना उदय हो जाती थी।

26 जनवरी 1930 को समस्त देश में स्वतन्त्रता की प्रतिज्ञा लेने का दिवस मनाया गया था। उस दिन भारत ने एक स्वर से घोषित किया था कि हम देश को अंग्रेजो की दासता से मुक्त करने के लिए प्रतिज्ञा करते हैं। उस अवसर पर स्वतन्त्रता की प्रतिज्ञा लेते समय झंडाभिवादन गान जो सर्वत्र गाया गया वह पथिकजी की ही रचना थी।

"प्राण मित्रों भले ही गंवाना,

पर न झंडा यह नीचे झुकाना"

उस समय पथिकजी की यह चिरस्मरणीय पंक्तियां लाखों करोड़ों भारतीयों के गले से निकलकर भारत में सर्वत्र गाई गई थी। उनका झंडागान ही उनकी स्मृति चिरस्थायी बनाने के लिए यथेष्ठ था। पथिकजी ने बिजोल्यां सत्याग्रह और राष्ट्रीय आन्दोलन को तेजवान बनाने में अपनी कवित्वशक्ति का खूब उपयोग किया था। वे ' राष्ट्रीय पथिक ' के उपनाम से राष्ट्रीय कविताएं करते थे। उनकी कविताओं को गाते हुए राष्ट्रीय भावना से भरे हुए युवकों की टोलियां जब निकलती तो कायरों के हृदय में भी एक बार देश प्रेम की लहर दौड़ जाती।

पथिकजी का गृहस्थ जीवन

राजस्थान सेवा संघ के समाप्त हो जाने के उपरान्त पथिकजी ने 'राजस्थान संदेश' नामक साप्ताहिक पत्र प्रकाशित करना आरम्भ किया था। वे अकेले ही प्रेस के मैनेजर, सम्पादक

थे। आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त साधनहीन होते हुए भी उन्होंने किसी से आर्थिक सहायता नहीं चाही। किसी प्रकार एक छोटा सा प्रेस खड़ा कर लिया और पत्रकारिता के द्वारा अपने विचारों को जनता तक पहुँचाने लगे। उस समय पथिकजी अकेले थे। कैसरगंज में रहकर 'राजस्थान संदेश' निकालते तथा मजदूर संगठन तथा कांग्रेस का कार्य करते थे। घर तथा प्रेस की देखभाल करने वाला उनके पास कोई नहीं था। उनके पास ही आर्य समाज के उपदेशक श्री परमानन्द जी रहते थे। पथिकजी की उनसे घनिष्ठता थी। श्री परमानन्द जी की पहली पत्नी का स्वर्गवास हो गया था। घर को देखने वाला तथा उनके दो पुत्रों को देखने वाला कोई न था। अतएव उन्होंने ग्वालियर राज्य के सोनकच्छ गांव की एक विधवा अध्यापिका मोहन बाई से विवाह किया था। उनकी पत्नी सोनकच्छ गांव की कन्या–पाठशाला की मुख्य अध्यापिका थी। उनके साथ ही श्रीमती जानकी देवी भी कन्या–पाठशाला में काम करती थी। दोनों में घनिष्ठ मित्रता थी और वे जानकी देवी को अपनी छोटी बहिन के समान ही स्नेह करती थी। जब श्रीमति मोहन बाई ने पंडित परमानन्दजी से विवाह किया तो मई का महीना था। ग्रीष्मावकाश में जानकी देवी भी अजमेर आई और उनके विवाह में सम्मिलित हुई। कुछ दिनो वह अपने मित्र के साथ अजमेर रही। अजमेर से लौटने पर जानकी देवी जी को सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ा। विधवा विवाह में सम्मिलित होने के कारण गांव वालो ने उनका सामाजिक बहिष्कार कर दिया। वे उनका छुआ पानी भी नहीं पीते थे। अपनी अभिन्न मित्र के वियोग और गांव वालो की घृणा ने जानकी देवी जी के मन को व्यथित कर दिया। उनका मन अत्यन्त दुखी हो उठा। समाज द्वारा बहिष्कृत होने के कारण उनका गांव में कोई भी सहायक और संरक्षक नहीं रहा। यही नहीं उनके कतिपय सम्बन्धियों ने जानकी देवी को असहाय देखकर उनका रुपया जो उन्हें दे दिया था, दबा लिया। जानकी देवी बड़ी व्यथित थी। वे बाल विधवा थी। जब वे तीन वर्ष की थी तभी उनकी मौसी की लड़की का विवाह हुआ था। घरवालों ने उस लड़के के छोटे भाई से जानकी देवी का भी विवाह कर दिया। जब वे सात वर्ष की हुई तब वह लड़का सांप के काटने से मर गया। सात वर्ष की आयु में वे विधवा हो गई। उनके मकान से मिले हुए मन्दिर में एक स्कूल था वहां एक वृद्ध ब्राहमण बच्चों को शिक्षा देते थे। वे भी वहां पढ़ने लगीं, पढ़ने में रुचि होने के कारण उन्होंने मिडिल परीक्षा पास करली और उसी स्कूल में अध्यापिका नियुक्त हो गई। गुरूजी की मृत्यु के उपरान्त मोहन बाई मुख्य अध्यापिका के पद पर नियुक्त हुई जिन्होंने बाद में पंडित परमानन्द से विवाह कर लिया।

पं० परमानन्द की पत्नी चाहती थी कि उनकी सखी उनके पास ही अजमेर में रहे। उनके पति भी जानकी देवी को अपनी छोटी साली के समान ही स्नेह करते थे। इधर जानकी देवी जब से उनके विवाह में सम्मिलित हुई थी और अजमेर से लौटी तब से गांववालों के व्यवहार से बहुत दुखी थी। परमानन्द की पत्नी का आग्रह था कि जानकी देवी के लिए कोई योग्य पुरुष देखिए। एक दिन पथिकजी ने परमानन्द से कहा कि आन्दोलन छिड़नेवाला है पता नहीं कि कितने वर्षो के लिए जेल जाना पड़े। बड़ी कठिनाई से प्रेस खड़ा किया है जेल में चले जाने पर प्रेस ही समाप्त हो जावेगा और फिर भविष्य में प्रेस न खड़ा कर सकूंगा। पंडितजी ने उन्हें परामर्श दिया कि वे विवाह करलें। पथिकजी ने कहा कि मैं जेल चला जाऊँगा ऐसी दशा में उनकी देखभाल कौन करेगा। पथिकजी ने उनसे कहा कि आप उनकी चिन्ता न करें मेरी एक

साली है जो अध्यापिका हैं यदि आप उनसे विवाह करले तो वह आपका प्रेस इत्यादि सम्भाल लेगी। आप यदि जेल चले गए तो अकेले रहकर भी काम कर सकेंगी।

पथिकजी ने उत्तर दिया कि आप उन्हें बुला लीजिए उनसे बात करके ही मैं उत्तर दूँगा। मैं तो एक किसान मजदूर कार्यकर्ता हूँ मुझे एक मजदूर स्त्री चाहिए। पं० परमानन्द ने जानकी देवी को पत्र लिखा कि तुम्हारी बहिन की तबियत खराब है एक सप्ताह की छुट्टी लेकर अजमेर आ जाओ। जानकी देवी जी अजमेर आ गई। पथिकजी पं० परमानन्द के मकान पर ही उनसे मिले। बातचीत की और अपनी स्वीकृति दे दी। जानकी देवी जी की विवाह करने की कोई इच्छा नहीं थी परन्तु जब परमानन्द जी ने तथा उनकी पत्नी ने पथिकजी के सम्बन्ध में उन्हें बताया तो वे तैयार हो गई। सोनकच्छ में उनका मन उचट गया था। ऐसे विद्वान पति को पाकर वे अपनी सखी के समीप ही रह सकेंगी इस विचार से विवाह करने को सहमत हो गई।

24 फरवरी 1930 को पथिकजी से श्रीमती जानकी देवी का विवाह पं० परमानन्द ने ही वैदिक रीति से करा दिया।

विवाह के ठीक एक मास के उपरान्त 24 मार्च 1930 की रात्रि की ठीक बारह बजे पुलिस आई और पथिकजी को गिरफ्तार कर ले गई। विवाह हुए केवल एक मास ही व्यतीत हुआ था। जानकी देवी जी को यह भी पता नहीं था कि पथिकजी के घर का प्रबन्ध किस प्रकार होता हैं। वे ही प्रेस को देखते थे, और 'राजस्थान संदेश' का सम्पादन करते थे। जानकी देवी जी यह सब देखकर घबड़ा गई, रोने लगीं। पथिकजी ने सांत्वना दी कहा कि देश के लिए जेल जाने में पत्नी को प्रसन्नता होनी चाहिए। पथिकजी के साथ बाबा नरसिंहदास भी गिरफ्तार हो गए थे। दूसरे दिन पथिकजी की गिरफ्तारी के कारण अजमेर में हड़ताल हुई, जुलूस निकाला और सब राष्ट्रीय कार्यकर्ता जानकी देवी जी को बधाई और सांत्वना देने आए।

दूसरे दिन जब जानकी देवी जी जेल में पथिकजी से मिलने गई तो बड़ी कठिनाई से जेलर ने उन्हें आधा घण्टा का समय मिलने के लिए दिया। गांव की रहनेवाली भोली जानकी देवी जी उन्हें कैदी के रुप में देखकर रोने लगी। पथिकजी ने मुस्कराकर कहा तुम्हें रोना शोभा नहीं देता कुछ समय के उपरान्त तुम्हें भी यहां आना हैं। मां भारती के प्रत्येक पुत्र और पुत्री का यह पावन कर्तव्य है कि मातृभूमि की दासता की बेड़ियों को काटने के लिए अपने को बलिदान कर दें। बोले तुम किसी भी बात की चिन्ता न करना 'राजस्थान संदेश' को बन्द कर दो और प्रेस में ताला डाल दो। तुम देश का कार्य करना। मेरे कतिपय मित्र हैं मैं उन्हें लिख दूंगा वे तुम्हारी सहायता करेंगे। पथिकजी को दो वर्ष का कारावास हो गया। जानकी देवी जी ने दूसरे ही दिन अपना थोड़ा सा जेवर बेचकर तथा पथिकजी के मित्र डॉक्टर अम्बालाल से कुछ रुपए लेकर प्रेस के सभी कर्मचारियों का वेतन चुका दिया और प्रेस बन्द कर दिया। जानकी देवी जी ने ट्यूशन करली और घर का कार्य चलाने लगीं। श्री हरिभाऊ जी उपाध्याय ने भी कहलाया कि कांग्रेस से सहायता दी जा सकती है किन्तु स्वाभिमानी पथिकजी ने कांग्रेस से सहायता लेना अस्वीकार कर दिया।

जानकी देवी जी को उस समय गर्भ था। उनके पास पथिकजी का भतीजा और भतीजी भी रहते थे। भतीजे ने पढ़ना छोड़ दिया और आन्दोलन में भाग लेकर जेल चला गया। अब केवल पथिकजी की पत्नी और उनकी भतीजी रह गई। दोनों प्रातःकाल खाना बना लेती और

दिन भर पिकेटिंग करती तथा कांग्रेस का कार्य करती। पुलिस उन्हें पकड़ लेती और लारी में भरकर रात्रि में जंगल में छोड़ आती, परन्तु स्त्रियों में भी अपूर्व साहस उत्पन्न हो गया था। क्योंकि जानकी देवी जी गर्भवती थी इस कारण उनको लम्बी सजा नहीं हुई।

कालान्तर में जानकी देवी जी ने कन्या को जन्म दिया। वे बहुत बीमार हो गई परन्तु वे घबराई नहीं। ठीक होने पर वे बच्ची को लेकर जेल में पथिकजी से मिलने गई। पथिकजी ने नवजात शिशु का गहरा स्वागत किया। लगभग एक वर्ष के उपरान्त गाँधी राउंड टेबिल कान्फ्रेंस में सम्मिलित होने इंग्लैंड गए। इधर भारत सरकार ने सभी राजनैतिक बंदियों को छोड़ दिया। पथिकजी भी जेल से छोड़ दिए गए।

जब पथिकजी जेल से छूटे तो पत्र तथा प्रेस बन्द था। आते ही मकान की खोज करने लगे। परन्तु तीन चार दिन बाद पुनः गिरफ्तार कर लिए गए। दूसरी बार अधिक लम्बे समय जेल में नहीं रहना पड़ा। कुछ ही दिनों में छोड़ दिए गए। जैसे ही पथिकजी दुबारा जेल से छूटकर आए भगतसिंह और राजगुरू को फांसी हुई। सारे देश में सनसनी फैल गई। अजमेर की पुलिस पथिकजी को अत्यन्त खतरनाक समझती थी। इस कारण उनके मकान पर प्रत्येक क्षण पुलिस का पहरा रहने लगा। पथिकजी को कोई भी अपना मकान देने के लिए तैयार नहीं था। बड़ी कठिनाई से मदार गेट पर एक बड़ी इमारत किराए पर मिली। पथिकजी ने उसमें भगतसिंह के नाम पर एक वाचनालय खोला तथा प्रेस स्थापित किया और स्वयं रहने लगे।

प्रेस स्थापित करने के उपरान्त ठाकुर देशराज के नाम से 'नव संदेश' पत्र का डिकलेरेशन दिया और निकालना प्रारम्भ कर दिया। बात यह थी कि यदि पथिकजी अपने नाम से डिकलेरेशन देते तो वह स्वीकार नहीं होता। अस्तु उन्हें ठाकुर देशराज के नाम से डिकलेरेशन देना पड़ा।

पत्र को निकले कठिनाई से एक वर्ष हुआ होगा कि प्रेस और अखबार से सरकार ने दो दो हजार रुपए की जमानत मांग ली और भगतसिंह वाचनालय भी बंद कर दिया। प्रेस तथा वाचनालय की तलाशी ली गई। बहुत–सा साहित्य जो जब्त हो गया था वाचनालय में था उसे पुलिस उठा ले गई और पत्र की प्रतियां भी उठा ले गई। पुलिस बड़ी सतर्कता के साथ उनके मकान के चक्कर काटने लगी। बात यह थी कि श्री रामचन्द्र बापट तथा श्री ज्वालाप्रसाद जी पथिकजी के पास बहुत अधिक आते थे। अजमेर के कलक्टर गिब्सन पर श्री रामचन्द्र बापट ने गोली चलाई। श्री ज्वालाप्रसाद जी भी उस षड्यन्त्र में सम्मिलित थे। जिस पिस्तौल से गिब्सन पर गोली चलाई गई थी वह उन्हें पथिकजी से प्राप्त हुआ था। ज्वालाप्रसाद जी ने एक जगह लिखा हैं कि यदि हमें पथिकजी से रिवाल्वर प्राप्त न होता तो हमारे अरमान हमारे मन में ही रह जाते। बाद को उन दोनों पर केस चला और उन्हें दस दस साल की सजा हो गई। यद्यपि पुलिस पथिकजी के विरुद्ध कोई प्रमाण तो न पा सकी परन्तु पुलिस को यह संदेह हो गया कि पथिकजी का इस काण्ड में कुछ हाथ हैं। यही कारण था कि प्रेस की तलाशी हुई और प्रेस तथा पत्र से जमानत मांगी गई और पुलिस सर्तकतापूर्वक उनके मकान का चक्कर लगाने लगी।

मकान मालिक घबड़ा गया उसने अपना मकान खाली कर देने के लिए कहा। पथिकजी को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। बहुत कुछ प्रयत्न करने पर बाबू मुहल्ले में एक मकान मिला। प्रेस का सामान वहां ले गए। वहां जाकर पथिकजी ने अपनी पत्नी श्रीमती जानकी देवी

के नाम से पत्र तथा प्रेस का डिकलेरेशन दिया। वह अस्वीकृति हो गया। उसके उपरान्त उन्होंने प्रेस में काम करनेवाले एक कर्मचारी श्री दयालदास के नाम से डिकलेरेशन दिया। वह स्वीकार हो गया।

अजमेर से प्रस्थान

प्रेस तथा पत्र कुछ ही समय चल पाया था कि एक घटना घटी। आर्य समाज के मन्त्री श्री विद्याराम जी एक युवक को लेकर आए और कहा कि आपके लिए एक होशियार क्लर्क को लाया हूँ यह शॉर्ट–हैंड भी जानते हैं। यह विपत्ति में फंसे हैं रियासत ने उन्हें निकाल दिया हैं। यह अपने बच्चों और स्त्री सहित मुसलमान होने जा रहे हैं इस कारण हम उनकी सहायता करना चाहते हैं। पथिकजी ने उस व्यक्ति को ध्यान से देखा और विद्याराम जी को एकान्त में ले गए और बोले "मुझे इस पर संदेह होता हैं। इतना होशियार आदमी गरीबी के कारण धर्म परिवर्तन करे यह असम्भव हैं। यह सरकारी गुप्तचर हैं और मेरा भेद लेने आया हैं। विद्यारामजी पथिकजी के मित्र थे। उन्होंने कहा आप हर एक पर शक करते हैं यह सी०आई०डी० नहीं हैं। पथिकजी के बहुत कहने पर भी वे न माने और उन्होंने उसे प्रेस में क्लर्क रखवा दिया। आरम्भ में तो वह बहुत घुलमिल गया। एक दिन जब पथिकजी कहीं बाहर गए हुए थे उसने शिकायतों के कुछ गुप्त कागज निकाल लिए और चला गया। फिर वह कभी लौट कर नहीं आया। उसने वे कागज सरकार को दे दिए।

उन दिनों पथिकजी यकायक बीमार पड़ गए। उन्हें भयंकर निमोनिमा हो गया। वे पूर्ण रुप से स्वस्थ भी नहीं हुए थे कि एक रात्रि को पुलिस ने धावा बोल दिया और पथिकजी को गिरफ्तार कर ले गई। दूसरे ही दिन पथिकजी का मुकदमा हुआ और उन्हें 6 माह की सजा दे दी गई। उधर पुलिस ने प्रेस पर छापा मारा और उस पर ताला डाल दिया। प्रेस से जो थोड़ी बहुत आमदनी होती थी वह भी बन्द हो गई। बड़ी कठिनाई का सामना था। श्रीमती जानकी देवी ने बहुत कुछ प्रयत्न किया कि उन्हें किसी पाठशाला में अध्यापिका का स्थान मिल जावे परन्तु सरकार के भय से उन्हें कोई रखने को तैयार नहीं हुआ। पथिकजी के गिरफ्तार होने का समाचार पत्रों से जानकर उनके एक मित्र और पुराने साथी पालनपुर से ब्रह्मचारीजी आए। घर की स्थिति देखी और जेल में पथिकजी से मिले। वे अपने एक शिष्य श्री भोलानाथ चतुर्वेदी को जो रेलवे स्कूल में मास्टर थे और अजमेर टीचर्स ट्रेनिंग के लिए आए थे कह गए। श्री भोलानाथजी प्रति सप्ताह खाने पीने की सामग्री श्रीमती जानकी देवी जी के पास पहुँचाते थे। हमारे राष्ट्रीय जीवन की यह कैसी करूण कहानी हैं। जिस व्यक्ति ने जीवन के प्रत्येक क्षण मातृभूमि की सेवा की उसकी पत्नी निसहाय अवस्था में रहे और अजमेर का कोई राष्ट्रकर्मी उसकी खोज खबर भी न ले। 6 महीने के उपरान्त पथिकजी जेल से मुक्त हुए। उस समय प्रेस जब्त हो चुका था। पुलिस ने सरकारी ताला लगाकर उस पर सील लगा दी थी। पुलिस प्रत्येक क्षण पथिकजी का पीछा कर रही थी, उसकी इच्छा थी कि किसी प्रकार उसके विरूद्ध यथेष्ठ प्रमाण प्राप्त कर उन्हें लम्बे चार पाँच वर्ष के लिए सजा दिलाई जावे। बात यह थी कि सरकार की आखों में पथिकजी बहुत भयंकर व्यक्ति थे। वह उन्हें किसी न किसी प्रकार जेल में बन्द कर देना चाहते थे।

उस समय पथिकजी की आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयानीय थी। प्रेस बन्द हो जाने के कारण एक पैसे की भी आय नही थी। तत्कालीन गाँधी वादी राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं से मतभेद होने के कारण उन्हें अजमेर के राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं से भी सहायता मिलने की आशा भी नही थी। कहने का तात्पर्य यह है कि वे हर दर्जे की गरीबी से संघर्ष कर रहे थे। उस समय पथिकजी को वस्तुतः भूखे रहकर समय व्यतीत करना पड़ा, परन्तु एक वीर योद्धा की भांति उन्होनें पराजय स्वीकार नहीं की। उन्होंने समझौता नही किया। भूखे रहकर भी अपने स्वाभिमान को नही खोया।

ऐसा नहीं था कि अजमेर के राजनैतिक कार्यकर्ता उनकी विपत्तियों से अवगत न हों परन्तु यह अजमेर तथा राजनैतिक जीवन का कलंक ही माना जावेगा कि किसी ने उनकी कठिनाइयों की ओर ध्यान तक न दिया।

सरकार पथिकजी को कुचल डालना चाहती थी। सरकार ने प्रेस को नीलाम करने की आज्ञा दे दी। तीन दिन तक प्रेस को नीलाम करने के लिए बोली लगती रही किन्तु किसी ने भी प्रेस को नहीं खरीदा। एक दिन एक कबाड़ी आया और पथिकजी से बोला कि हममें कोई भी आपके प्रेस को नहीं खरीदेगा। अब पुलिस बाहर से कुछ कबाड़ियों को बुलाकर प्रेस बेचने की बात सोच रही हैं। यदि आप आज्ञा दे तो हम लोग कम से कम कीमत पर आपका प्रेस खरीद ले और उसी कीमत पर आप प्रेस हमसे पुनः खरीदलेना। पथिकजी ने उसकी युक्ति को मान लिया। चौथे दिन उस कबाड़ी ने आठ सौ रुपए में प्रेस खरीद लिया और उसी कीमत में प्रेस पथिकजी को बेंच दिया। यह कैसी विडम्बना हैं कि अजमेर में राष्ट्रकर्मी कहे जानेवालों में से किसी ने भी पथिकजी की सहायता नहीं की परन्तु जो रात दिन अपने लाभ की ही बात सोचते रहते हैं उन कबाड़ियों के मन में पथिकजी के लिए आदर और श्रद्धा थी।

प्रेस तो पथिकजी को मिल गया किन्तु उसको चलाने की आज्ञा सरकार ने नहीं दी। प्रेस बन्द ही रहा। घर का खर्च और मकान का किराया निकालना पथिकजी के लिए कठिन हो गया। सरकार पथिकजी को लम्बे समय के लिए जेल भेजने का षड्यन्त्र रच रही थी। पथिकजी के मकान पर चौबीस घण्टे पुलिस का पहरा रहता। पुलिस उनकी प्रत्येक गतिविधि पर नजर रखती थी। पथिकजी उस समय बढ़ी कठिनाई का सामना कर रहे थे।

उसी समय पथिकजी के एक दो अत्यन्त विश्वासपात्र मित्रों ने उन्हें खबर दी कि पुलिस उन पर मुकदमा चलाने के लिए बहुत अधिक छान बीन कर रही हैं। उच्च राज्य कर्मचारियों से उन्हें पता लगा कि इस बार सरकार की इच्छा हैं कि आपको किसी षड्यन्त्र में फांस कर चार पाँच वर्ष की लम्बी सजा दे दी जावे। राज्य कर्मचारियों में कुछ पथिकजी के प्रशंसक भी ये उन्होंने ही यह सूचना दी थी। उन्होंने सलाह दी कि वे थोड़े समय के लिए अजमेर छोड़ दे। व्यर्थ में लम्बे समय के लिए जेल जाने से कोई लाभ नहीं हैं। पथिकजी के मन में यह बात बैठ गई और उन्होंने अजमेर से कुछ समय के लिए हट जाने का निश्चय कर लिया। उनकी पत्नी भी उनके साथ हो गई। पथिकजी अजमेर से रतलाम गए। वहां गूजर महासभा का अधिवेशन था। उसमें सम्मिलित हो वे इन्दौर गए और सेठ हुकमचन्द की धर्मशाला में जाकर ठहरे। लेकिन पुलिस ने उनका पीछा वहां भी नहीं छोड़ा। एक सी०आई०डी० बराबर उन पर नजर रखता था। धर्मशाला का मुनीम यह देखकर कि पथिकजी के पीछे पुलिस लगी हुई हैं घबराया और उसने

धर्मशाला का कमरा खाली कर देने के लिए जोर डालने लगा। ऐसी दशा में पथिकजी स्वयं जाकर सेठ हुकमचन्दजी से मिले और बातचीत की। सेठजी ने मुनीम को आज्ञा दी कि पथिकजी जब तक वहां रहना चाहें रहने दिया जाय। उसी धर्मशाला में जैन गुरूकुल भी था। पथिकजी वहां के विद्यार्थियों के सम्पर्क में आए। वे उन्हें राजनीति तथा देश की समस्याओं की जानकारी कराने लगे। विद्यार्थी उनकी प्रतिभा और विद्वता से ऐसे प्रभावित हुए कि वे उन्हें गहरी श्रद्धा से देखने लगे। क्रमशः पथिकजी के सम्बन्ध में आसपास चर्चा फैली और बाहर के व्यक्ति विशेषकर तरूण युवक उनके पास बड़ी संख्या में आने लगे। वे पथिकजी से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्हें गुरू के समान श्रद्धा करने लगे। क्रमशः इन्दौर, मऊ, उज्जैन तथा समीपवर्ती नगरो के लोग आते, उन्हें अपने यहां ले जाते, और पथिकजी के व्याख्यान करवाते। राजनीति, भारत की समस्याओं, इतिहास तथा समाजवाद आदि विषयों पर उनके भाषण सुनकर जनता मुग्ध हो जाती। पथिकजी को स्थान स्थान से निमंत्रण आने लगे। पुलिस भयभीत हो उठी। उसने देखा कि यदि पथिकजी वहां अधिक दिनों तक टिक गए तो वे राजनैतिक जागृति उत्पन्न कर देंगे। अतएव पुलिस ने धर्मशाला वालों को तंग करना आरम्भ किया और उन पर जोर डाला कि यदि तुम पथिकजी को नहीं हटाओगे तो हम तुम पर मुकदमा चलायेंगे। पथिकजी ने सोचा कि मेरे कारण व्यर्थ में उन लोगों को तंग किया जा रहा हैं अतएव यहां से हट जाना चाहिए। उधर सनावड़ तथा उसके आसपास अतरखेड़ी गांव आदि गांवों के लोग पथिकजी को बुला रहे थे। अस्तु इन्दौर में चार महीने रहने के उपरान्त पथिकजी सनावड़ में चले आए और वहां सेठ गोपीचन्द की धर्मशाला में ठहरे। परन्तु वहां भी स्थिति वही थी जो इन्दौर में थी। पुलिस उनका पीछा कर रही थी। समीप में अतरखेड़ी आदि के किसान उन्हें अपने यहां व्याख्यान आदि के लिए ले जाते, पुलिस उन लोगों को भी तंग करती। अतरखेड़ी गांव के किसानों ने आग्रह किया कि आप यहां आ जाइए, जितनी जमीन चाहेंगे हम दे देंगे, आप अपना प्रेस भी ले आइए, हम और साधन भी जुटा देंगे। वहां के किसान भी पथिकजी से बहुत प्रभावित हो गए थे। परन्तु पथिकजी राजस्थान को छोड़ना नहीं चाहते थे। उनके मन में राजस्थान की ममता थी यद्यपि राजस्थान ने उनकी निरंतर उपेक्षा ही की थी। सनावड़ में चार महीने रहकर पथिकजी जानकी देवी जी के साथ फिर इन्दौर आए और उसी धर्मशाला में ठहरे। इन्दौर में कविराज दुर्गादानजी के भाई श्री जयसिंहजी अपने बच्चों का इलाज कराने के लिए आए हुए थे उनसे मिलना हुआ। जब उन्हें सारी स्थिति का ज्ञान हुआ कि पथिकजी आश्रय की खोज में इधर उधर भटक रहे है तो उन्होंने आग्रह किया कि आप कोटा चलिये। कोटा आपका पुराना स्थान हैं। आपकी जब तक इच्छा हो वहां रहिए। उनके बहुत अधिक आग्रह करने पर पथिकजी ने अपनी पत्नी को कोटा भेज दिया। कुछ दिनों बाद पथिकजी भी कविराज दुर्गादास जी के पास आ गए और चार मास तक वहां सपत्नीक रहे। कविराज दुर्गादान जी पथिकजी का बड़ा आदर और सम्मान करते थे। चार मास तक पथिकजी उनके पास रहे। परन्तु कहीं स्थायी रुप से रहने के लिए जगह तो निश्चित करनी ही थी। राजस्थान और विशेषकर अजमेर के लिए इससे अधिक कलंक की बात क्या हो सकती थी कि जिस व्यक्ति ने अपने जीवन का बहुमूल्य समय उसकी सेवा में बिता दिया उसे आश्रय के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान भटकना पड़ रहा था। राजस्थान उसे आश्रय भी न दे सका।

एक बार पथिकजी जब अजमेर रहते थे तब मथुरा आए थे। मथुरा में सभी खाने पीने की वस्तुएं उन्हें अजमेर की अपेक्षा सस्ती और अच्छी दिखलाई दी थी। मकान का किराया भी कम था। श्रीमती जानकी देवी ने पथिकजी से कहा कि अब हम यहां कब तक रहेंगे। पथिकजी ने कहा कि अभी अजमेर नहीं चल सकते क्योंकि मित्रों के पत्र बराबर यही आ रहे हैं कि अभी अजमेर वापस मत लौटो। जानकी देवी जी ने प्रस्ताव रक्खा कि हम लोग मथुरा क्यों न चले। वहां सब वस्तुएं सस्ती हैं, मकान का किराया भी सस्ता हैं। यदि मुझे वहां किसी स्कूल में काम मिल गया तो नौकरी कर लूंगी। पथिकजी को यह प्रस्ताव पसंद आया उन्होंने कहा कि मैं मथुरा जाता हूं, तुम अजमेर चली जाओ। मैं मथुरा में मकान ठीक करके तुम्हें खत लिखूंगा तुम सामान लेकर मथुरा आ जाना। पथिकजी ने मथुरा में मकान ठीक करके अपने एक मित्र ओमजी को अजमेर भेजा। श्रीमती जानकी देवी ने कुछ फर्नीचर तथा अन्य सामान बेंचकर मकान का एक वर्ष का किराया चुकाया और प्रेस का सारा सामान एक बैग में भरकर मथुरा ले आई। पथिकजी की आर्थिक स्थिति इतनी खराब थी कि घर का काम कैसे चले यह समस्या थी। श्रीमती जानकी देवी को चौदह रुपए मासिक पर म्यूनिसिपल बोर्ड की कन्या पाठशाला में मुख्य अध्यापिका पद को स्वीकार करना पड़ा। ये दो मील पैदल चलकर चौदह रुपए मासिक के लिए पाठशाला तक जाती थी। आर्थिक कठिनाइयों ने पथिकजी तथा उनकी पत्नी को इतना अधिक दबाया कि जानकी देवी ने चौदह रुपए मासिक की नौकरी करना ही श्रेयस्कर समझा। पथिकजी ने प्रेस चलाना चाहा किन्तु डिकलेरेशन स्वीकार नहीं हुआ। जानकी देवी जी दो मील पैदल चलकर स्कूल प्रातः जाती और दोपहर बाद लौटतीं। यद्यपि वे खाना बनाकर जाती किन्तु पथिकजी उनके लौटने तक भोजन नहीं करते। पथिकजी का परिवार उस समय कठिन अभावों से संघर्ष कर रहा था। परन्तु फिर भी वे इतने स्वाभिमानी थे कि किसी से सहायता की याचना नहीं की। कुछ समय उपरान्त जानकी देवी जी ने कम किराए का मकान ले लिया। उसके नीचे के हिस्से में प्रेस रख दिया और ऊपर के हिस्से में वे रहने लगे। एक गाय मोल ले ली और किसी प्रकार वे लोग अपनी गुजर करने लगे।

यद्यपि उस मकान का किराया केवल आठ रुपए मासिक था किन्तु उनके लिए वह भी कठिन था। पथिकजी राजस्थान की ओर चले गए थे। जानकी देवी जी के मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि यदि किसी प्रकार कोई मकान ले लिया जाये तो किराए से पीछा छूटे। जहां वे रहती थी वहीं एक हनुमानजी का मन्दिर था उस मकान में केवल एक कोठरी में हनुमानजी की मूर्ति थी और शेष खंडहर था। मकान मालिक तो मर गया था उसका लड़का बम्बई रहता था। यद्यपि वह उस मकान को बेचना चाहता था किन्तु मुहल्लेवाले उसे बिकने ही नहीं देते थे। जानकी देवी जी ने उसे बम्बई से बुलाया और पथिकजी को पत्र लिखा। वे भी आ गए। तीन सौ रुपए पर मकान तय कर लिया। जानकी देवी जी के पास एक दो सोने के जेवर थे वही बेचकर उन्होंने मकान ले लिया। कुछ रुपए बच गए उससे पति पत्नी ने दो कच्चे कोठे बनाए और तीन छप्पर डलवाए। कच्चे कोठों की दीवारे स्वयं पथिकजी तथा जानकी देवी जी ने अपने हाथो से बनाई। किराए से मुक्ति मिली। उधर जानकी देवी जी के वेतन में कुछ वृद्धि हुई तब उन दोनो की गुजर होने लगी। वास्तव में पथिकजी उन दिनों एक परिश्रमी मजदूर का जीवन व्यतीत करते थे। कच्चे मकान को लीप पोतकर साफ रखना तथा अन्य कार्य करना यही उनका क्रम था। परन्तु शीघ्र ही पथिकजी प्रेस आगरा ले गए और वहां से 'नव संदेश' साप्ताहिक पत्र

निकाला। पथिकजी ने उन्हें आगरा बुलाया क्योंकि पथिकजी अकेले थे, अखबार का हिसाब रखने वाला उनके पास कोई न था। यद्यपि जानकी देवी जी अपनी नौकरी छोड़ना नहीं चाहती थी किन्तु पति आज्ञा को टाल भी न सकी। मथुरा की नौकरी छोड़कर आगरा आ गई। आगरा में वे अखबार का हिसाब भी रखती और एक पाठशाला में नौकरी भी करती। गर्मियों की छुट्टियों में मथुरा आकर कच्चे मकान की अपने हाथ से मरम्मत कर तथा लीप पोत कर वे पुनः आगरा चली आती।

पथिकजी का 'नव संदेश' शीघ्र ही उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों तथा राजस्थान में लोकप्रिय हो उठा था। पथिकजी के ओजपूर्ण, विद्वतापूर्ण और गम्भीर अग्रलेखों और टिप्पणियों तथा पीड़ितो के दुख दर्दो को प्रकाश में लाने की उनकी सहज प्रवृत्ति ने पत्र को लोकप्रिय बना दिया। 'नव संदेश' ने शीघ्र ही प्रमुख साप्ताहिक पत्रों में अपना स्थान बना लिया।

किन्तु पथिकजी को जीवन में सतत संघर्ष करना ही बना था। 1942 में "भारत छोड़ो" आन्दोलन छिड़ा। भला सरकार 'नव संदेश' जैसे पत्र को कैसे छोड़ती। सरकार ने 'नव संदेश' तथा प्रेस से भारी रकमों की जमानत मांग ली। पथिकजी के पास पैसा कहां था जो जमानत दे सकते। जो एक मजदूर का जीवन व्यतीत कर रहा हो वह कहां से जमानत देता। परिणाम यह हुआ कि प्रेस और अखबार बन्द हो गया। आय के साधन समाप्त हो गए। मकान का पंद्रह रुपया मासिक किराया देना पड़ता था और जानकी देवी जी को मिलते थे केवल बीस रुपए मासिक। आय का एकमात्र साधन केवल उनका वेतन था। विकट परिस्थिति का सामना करना पड़ रहा था। उस वर्ष वर्षा अधिक हुई। इस कारण मथुरा का कच्चा मकान गिर गया। चारो ओर से विपत्ति ने परिवार को घेर लिया। पथिकजी सोचने लगे कि अब क्या किया जाय। जानकी देवी जी ने सम्मति दी कि अभी आन्दोलन चल रहा हैं। न जाने प्रेस और अखबार कब तक बन्द रहेगा। प्रेस के कारण मकान का किराया और देना पड़ेगा अस्तु यदि एक मशीन बेच दी जावे और उससे मथुरा के मकान में एक दो पक्के कमरे बनवा लिए जावे तो प्रेस का शेष सामान वहां रहेगा। कम से कम किराए की ही बचत होगी। पथिकजी की समझ में यह बात आ गई। एक मशीन ढाई हजार में बेच दी। उससे पुरानी ईटे सस्ते दामों पर लेकर जैसे बना वैसे बहुत कम खर्च करके मकान को रहने योग्य बना लिया। जानकी देवी जी ने आगरा की नौकरी छोड़कर मथुरा में आर्यसमाज की पाठशाला में बीस रुपए मासिक पर नौकरी कर ली। एक दो ट्यूशन करके किसी प्रकार गुजर चलाने लगी। आधे मकान को किराए पर देकर उसके किराए से मकान का पलस्तर करवाया और नल इत्यादि लगवाकर मकान को रहने योग्य बना लिया।

पथिकजी ने अब सोचा कि राजस्थान अथवा मध्यभारत में कहीं आजीविका के लिए जमीन लेकर खेती की जावे और साथ ही किसानो में कार्य किया जावे। वे चाहते थे कि किसानो को संगठित कर उनमें राजनैतिक चैतन्य जागृत किया जावे और ब्रिटिश सरकार तथा देशी राज्यों से टक्कर ली जावे। इस उद्देश्य से वे राजस्थान और मध्यभारत की ओर चले गए।

पथिकजी ने ग्वालियर राज्य में कोटा के समीप सुवासरे में कुछ जमीन खरीदी और खेती प्रारम्भ की। परन्तु जो देश के कार्य को जीवन का मुख्य उद्देश्य मानता हो वह किस प्रकार खेती में सफल हो सकता था। जमीन में बीज डलवाकर वे चल देते। किसानों में संगठन

कार्य तथा राष्ट्रीय कार्य जब भी उन्हें आवाहन करता वे खेती के लिए रूके नहीं रहते। परिणाम यह हुआ कि वास्तव में वे कभी खेती कर नहीं सके। हां मंदसौर तथा समीपवर्ती प्रदेश में कांग्रेस तथा किसान संगठन का कार्य अवश्य उनके प्रयत्न और नेतृत्व से बहुत सतेज हो उठा।

यद्यपि पथिकजी को परिस्थितिवश राजस्थान छोड़ना पड़ा। राजस्थान के राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं ने इस बात की भी चिन्ता न की कि राजस्थान में जनजागरण उत्पन्न करने वाला वीर सेनानायक कैसी विपरीत परिस्थितियों में राजस्थान से दूर अभावों से संघर्ष कर रहा हैं। परन्तु पथिकजी को राजस्थान से गहरा मोह था, वे राजस्थान का ही स्वप्न देखते थे। जब वे मंदसौर में कांग्रेस कार्य कर रहे थे तब उनमें पुनः अजमेर में आकर कार्य करने की तीव्र इच्छा जागृत हुई। वे मन्दसौर से अजमेर आ गए। पुरानी मन्डी में मकान लेकर उन्होने मथुरा से प्रेस का सामान मंगवा लिया। कुछ सामान उधार ले लिया तथा प्रेस और पत्र निकालने की योजना बना ली। जानकी देवी जी को लिखा। वे नौकरी से त्यागपत्र देकर मथुरा से अजमेर आ गई। पहला अंक निकला ही था कि बिजोल्यां से बुलावा आया। वहां ऊपरमाल विद्यापीठ का वार्षिक अधिवेशन था। बिजोल्यां के लोगों ने श्री अश्वनी कुमार जी को उन्हें लाने के लिए भेजा। वार्षिक अधिवेशन के अध्यक्ष पद को स्वीकारकर पथिकजी जानकी देवी जी के साथ बिजोल्यां गए। वार्षिक अधिवेशन बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। जब पथिकजी चलने लगे तो ऊपरमाल के किसानों ने उन्हें रोका। जानकी देवी जी को बिजोल्यां रहने की इच्छा नहीं थी। कारण यह था कि अखबार निकल चुका था। दूसरे बिजोल्यां में रहने का कोई साधन नहीं था। पथिकजी ने किसानों के सामने अपनी कठिनाई रखी। किसानों ने कहा आप इसकी चिन्ता न करें। अपके रहने और खर्च का प्रबन्ध हम करेंगे। बात यह हैं कि सरकार हम पर मनमाने कर लगा रही हैं, हमारी कठिनाइयां बढ़ गई हैं। आप हमें उनसे मुक्त करावें। इसलिए हम आपको बिजोल्यां रखना चाहते हैं। पथिकजी ने किसानों से कहा कि मैं आपकी सेवा करने को तैयार हूँ किन्तु मैं अपने निजी व्यय के लिए आप लोगों पर निर्भर नहीं रहना चाहता। आप मुझे कहीं थोड़ी जमीन दिलवादे तो मैं अपने निजी व्यय से निश्चित हो जाऊं।

इसी उद्देश्य से बिजोल्यां राव साहब का बाग पाँच वर्ष के लिए ठेके पर लिया। अजमेर में प्रेस और पत्र की तनिक भी चिन्ता न कर किसानों के काम में जुट गए। उस बाग से कोई भी आय नहीं होती थी। खर्चा और आमदनी बराबर होता था। मथुरा के मकान का तीस रुपया मासिक जो किराया आता उससे गुजर होती थी। सन् 1951 के प्रथम चुनाव में पथिकजी विधान सभा के लिए खड़े हुए। आश्चर्य और खेद की बात है कि कांग्रेस ने उन्हें अपना टिकट नहीं दिया। जिस व्यक्ति ने जीवन भर देश के लिए कष्ट उठाए संघर्ष करता रहा उससे किसी ने यह भी नहीं पूछा कि आप खड़े हो। उनके विरूद्ध राव साहब को खड़ा किया गया। कांग्रेस प्रत्याशी के प्रभाव और राव साहब के पैसे के सामने लोगों ने उचित और अनुचित नहीं देखा। पथिकजी हार गए और बिजोल्यां राव विजयी हुए।

उधर श्रीमती जानकी देवी जी को वहां का जलवायु अनुकूल नहीं पड़ा। ऊपर से उनको एक साथ नौ नहरू (एक प्रकार का लम्बा कीड़ा) निकल आए। जिसमे उनको अपार कष्ट हुआ। फिर पथिकजी घर पर तो रहते नहीं थे। अस्तु जानकी देवी जी बिजोल्यां से मथुरा चली आई, आर्य समाज की पाठशाला में पुनः नौकरी कर ली।

पथिकजी भी कोटा इत्यादि स्थानों पर घूमकर अजमेर आ गए। इस बीच में पथिकजी देहली में राष्ट्रपिता गाँधी से भी मिले थे। गाँधी जी के मन में जो कुछ देश में हो रहा था उससे बड़ी निराशा और व्यस्था थी, उन्हें कांग्रेस से भी बड़ी निराशा थी। गाँधी जी ने पथिकजी से कहा कि तुम राजस्थान में ही बैठकर पुनः संगठन करो। गाँधी जी से प्रेरणा लेकर वे पुनः राजस्थान में जमकर कार्य करने के लिए अजमेर आए। अजमेर आकर उन्होंने एक साप्ताहिक समाचार पत्र 'नव संदेश' एक मासिक पत्रिका 'अनुसंधान' तथा देश में बौद्धिक और विचार क्रान्ति उत्पन्न करने के लिए और शोध कार्य करने, राजनीतिक और ऐतिहासिक साहित्य उत्पन्न करने, तथा नवीन क्रांति को मूर्त रुप देने के लिए कार्यकर्ताओं को तैयार करने के लिए, 'राजस्थान सेवाधाम' संस्था को स्थापित करने की योजना तैयार की। उसी के साथ उन्होंने "राजस्थान किसान संघ" नामक संस्था को भी जन्म देने का प्रयत्न किया, जिससे कि वे एक बार पुनः राजस्थान के किसानों को संगठित कर सच्चे जनतन्त्र की स्थापना कराने में सहायक हो सकें। इन संस्थाओं को स्थापित कराने की घोषणा भी प्रकाशित कर दी गई थी। पथिकजी एक बार पुनः क्रान्ति की विचारधारा को पुनर्जीवित करना चाहते थे।

विचारशील राजस्थानियों के लिए उपरोक्त संस्थाओं को स्थापित करने के सम्बन्ध में पथिकजी ने जो विज्ञप्ति निकाली थी उसमें उन्होंने अपने विचारो को व्यक्त करते हुए लिखा था – "क्रान्ति का कार्य समाप्त हुआ।" प्रत्येक क्रान्ति के दो भाग होते हैं। पहला पराधीनता से मुक्ति पाना, दूसरा पराधीनता और लम्बे संघर्ष से समाज में जो अज्ञान–जन्य अनेक दुर्गण आ जाते हैं एवं वास्तविक मानवी संस्कृति की जगह जो कृत्रिम तथा विघटनकारी तत्व जड़ पकड़ लेते हैं उन्हें विचार क्रान्ति के द्वारा नष्टकर, वास्तविक मानवी संस्कृति को प्रतिष्ठित करना। इसीलिए महाभारत के बाद भी श्री कृष्ण भगवान को श्रीमद्भगवतगीता के द्वारा विचार क्रांन्ति करने की आवश्यकता हुई थी। क्योंकि जब तक समाज में विचार क्रांति न हो तब तक केवल कानूनो के द्वारा न कोई व्यवस्था स्थायी हो सकती है न शासन और यह विचार क्रांति सबसे जल्दी होती हैं, देश के अपने इतिहास के वैज्ञानिक पुनरूद्धार द्वारा।

हमें मालूम है कि हमारे देश के पुराने क्रांन्तिकारियों को भी क्रांन्ति के इन दोनों अध्यायों का ज्ञान था। किन्तु स्वतन्त्रता का संघर्ष लम्बा चलने के कारण उनमें से अधिकांश दूसरे अध्याय के विचारों को साथ ही लेकर इस संसार से विदा हो गए। पिछली पीढ़ी में वैसे विचारों का प्रायः प्रभाव हैं। यही कारण हैं कि क्रांन्ति का पहला अध्याय समाप्त होकर स्वराज्य होते ही अधिकतर ने यह समझ लिया कि क्रांन्ति का कार्य पूरा हो चुका। इस विचार से उनके विचारों की प्रगति रूक गई और जिस पानी का बहाव या आगे बढ़ना रूक जाता हैं, उसमे सड़ाव पैदा हो जाना स्वाभाविक ही हैं। वही स्थिति हमारे सामने हैं। उस पर जहां एक ओर हम निश्क्रिय हो गए हैं और स्वार्थपरता में फंस गए हैं, वहां दूसरी ओर कुछ देशी ओर विदेशी शक्तियों इस बात का सिर तोड़कर प्रयत्न कर रही हैं कि इस विचारक्रांन्ति के अध्याय का मार्ग ही बन्द कर दिया जाय। यह स्थिति देश और हमारी स्वतन्त्रता के लिए, विशेषकर आज की विश्व की परिस्थिति में कितनी भयावह हैं, इसका अन्दाजा विचारशील व्यक्ति आसानी से कर सकते हैं।

अतः आवश्यकता हैं कि इस सम्बन्ध में तत्काल कदम उठाया जाय और उसका प्रारम्भ 'राजस्थान' ही करे। किसी भी क्रांन्ति का जन्म व्यक्तियों से ही होता हैं और फिर यदि उसकी

दिशा ठीक हुई तो वह सारे समाज और राष्ट्र को आकर्षित कर लेता हैं। इसी दृष्टि से हम राजस्थान सेवाश्रम को जन्म दे रहे हैं।

— (विजयसिंह पथिक)

राजस्थान सेवाश्रम सम्बन्धी विज्ञप्ति से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि पथिकजी देश में चल रही पदलोलुपता, राजनैतिक दांव पेच, आपाधापी, और स्वार्थपरता से दुखी थे और वे देश में विचार क्रांति उत्पन्न करने के लिए आतुर और व्यग्र थे। महात्मा गाँधी से प्रेरणा पाकर वे राजस्थान में एक बार पुनः संगठन करना चाहते थे।

अतएव वे अजमेर में उचित स्थान की तलाश में थे जहां वे प्रेस स्थापित कर सकें और पत्र निकाल सकें। गर्मियों के दिनों में उसी दौड़–धूप में पथिकजी को लू लग गई और ज्वर हो गया। ज्वर में निमोनिया हो गया। जानकी देवी जी मथुरा में थी उन्हें यह सोचकर सूचना नहीं भेजी कि वे घबरा जावेंगी। मई में स्कूल बन्द होते ही जानकी देवी मथुरा से अजमेर पहुंची। देखा कि पथिकजी बीमार हैं। पथिकजी के मित्र डाक्टर अम्बालालजी को बुलाया। इलाज आरम्भ हुआ किन्तु दशा नहीं सुधरी।

पथिकजी को बीमारी की हालत में भी राष्ट्रीय कार्य की धुन थी। जब डाक्टर साहब आते तो कहते डाक्टर साहब मुझे जल्दी निरोग कीजिए। देश का बहुत काम करना हैं शीघ्र ही पत्र निकालना हैं। मैंने विज्ञप्ति दे दी हैं। किन्तु दूसरे ही दिन रात्रि को थोड़ी दशा खराब हो गई। उन्हें पिछली बातें याद आ रही थी। कभी कहते हैं कि स्टेशन पर कुछ आदमियों का प्रबन्ध करना हैं। बहुत से हथियार प्रमुख–प्रमुख स्थान पर रक्खे हैं। ऐसा न हो कि हथियारों का किसी को पता लग जावे। ट्रेन छूट जावे। वह रात्रि उसी प्रकार क्रांन्तिकारी जीवन की बातों को याद करते करते निकली। प्रातःकाल होते ही डाक्टर साहब आगए उन्होंने इंजेक्शन लगाया और दवा पिलाई। किन्तु दशा गिरती ही गई। दिन के बारह बजे तक अच्छी तरह से बाते करते रहे। उस दिन एकादशी थी। बारह बजे के उपरान्त उनकी वाणी लड़खड़ा गई और दिन के दो बजे बिना किसी घबराहट और परेशानी के शान्त भाव से वे चिरनिद्रा में सो गए। 28 मई 1954 को उस महान क्रांन्तिकारी ने महाप्रयाण किया। अन्त समय भी उन्हें केवल देश में नवीन विचारक्रांन्ति को जन्म देने की ही धुन थी।

पथिकजी की मृत्यु का समाचार समस्त अजमेर में फैल गया। उनकी अर्थी के साथ विशाल जनसमूह था। उनका अन्तिम संस्कार उनकी धवल कीर्ति के साथ ही बड़ी शान से हुआ। नगर भर में हड़ताल हुई। सरकारी कार्यालय बन्द हो गए।

उनके स्वर्गवासी होने के उपरान्त उनकी पत्नी ने बहुत प्रयत्न किया कि उनको अजमेर में ही कोई कार्य मिल जावे जिससे कि अजमेर में रहकर अपने स्वर्गीय पति की बीस पच्चीस पुस्तकों का वे प्रकाशन करवा सकें, और सम्भव हो तो पथिकजी के मित्रों और प्रशंसको के सहयोग से पथिकजी की अन्तिम इच्छा को पूरा करने के लिए उनके स्मारकस्वरुप आश्रम की स्थापना की जा सके। परन्तु यह होना नहीं था। बात यह हैं कि देश के स्वतन्त्र हो जाने के उपरान्त राजनीति देशसेवा का कार्य नहीं अपितु लाभदायक पेशा और व्यापार बन गया हैं। उसमें लाभ हानि का लेखा जोखा रक्खा जाता हैं। राजनैतिक कार्यकर्ता यह मानने लगे हैं कि

अब त्याग तपस्या, साधना, बलिदान की आवश्यकता नहीं रही। पुरस्कार प्राप्त करने अपने स्वार्थो को दूर करने और पदोन्नति करने का समय आया हैं। अस्तु सार्वजनिक जीवन में आपाधापी मची हुई हैं, दूसरे को गिराकर स्वयं आगे बढ़ जाने की प्रवृत्ति इतनी अधिक बढ़ गई हैं कि दूसरों के अच्छे कार्यो की सराहना करना तो दूर दूसरो को गिराने के घृणित से घृणित प्रयत्न किए जाते हैं।

ऐसी दशा में श्रीमती जानकी देवी का यह प्रयत्न कि पथिकजी का साहित्य प्रकाशित हो और उनके स्मारक आश्रम की स्थापना हो सके किस प्रकार सफल हो सकता था। वह प्रयत्न तो असफल हुआ ही यह भी सम्भव न हो सका कि जानकी देवी जी ही को अजमेर में कोई जगह मिल जाती जिस पर कार्य करते हुए वे अजमेर में रहकर इस दिशा में कुछ प्रयत्न कर सकती और पथिकजी का साहित्य प्रकाशित करवा सकती। कई महीने व्यर्थ प्रयत्न करने के उपरान्त जानकी देवी जी को विवश हो पुनः मथुरा लौटना पड़ा। राजस्थान अपने क्रांन्तिकारी नेता की स्मृति को स्थायी बनाने का प्रयत्न करना तो दूर उनकी पत्नी को अपने यशस्वी पति के कार्यक्षेत्र में आश्रय भी न दे सका।

श्रीमती जानकी देवी जी के मन मे अपने स्वर्गीय पति की रचनाओं को प्रकाशित कराने की तीव्र अभिलाषा थी। परन्तु वे विवश थी। उनके पास आर्थिक साधन नहीं थे।

इसी बीच पथिकजी के निकटस्थ सहयोगी और शिष्य दैनिक हिन्दुस्तान के सह सम्पादक श्री शोभालाल गुप्त ने राजस्थान सरकार से पथिकजी की रचनाओं के प्रकाशन के लिए आर्थिक सहायता की याचना की। श्री शोभालाल गुप्त ने एक 'पथिक स्मारक समिति' का भी गठन किया। पथिक स्मारक समिति के अध्यक्ष स्वयं श्री शोभालाल गुप्त थे, मन्त्री 'नवजीवन' उदयपुर के संपादक श्री कनक मधुकर तथा बाबा नरसिंहदास जी (वे अब स्वर्गवासी हो गए) अजमेर, मास्टर श्री शम्भूदयाल सकसेना कोटा और श्रीमती जानकी देवी जी उसकी सदस्य थी। श्री शोभालाल गुप्त के प्रयत्नों के फलस्वरुप राजस्थान सरकार ने पाँच हजार रुपए पथिक साहित्य के प्रकाशन के लिए तथा दो हजार रुपए श्रीमती जानकी देवी पथिक के निज के निर्वाह के लिए देना स्वीकार किए।

यद्यपि अजमेर में स्वर्गीय पथिक का कोई भी स्मारक न बन सका परन्तु मथुरा की नगरपालिका ने पथिकजी के मकान के समीप की सड़क का नाम 'पथिक–मार्ग' रखकर पथिकजी की स्मृति के प्रति अपनी नम्र श्रद्धा और सम्मान प्रकट किया।

पथिकजी के कोई संतान तो थी नहीं। दो कन्याएं उत्पन्न हुई परन्तु वे अपने शैशव काल में ही मर गई। उनके बड़े भाई का एक पुत्र श्री नत्थूसिंह उनके पास रहा था और उनके विचारों से विशेष रुप से प्रभावित था। उसने पथिकजी के पैतृक ग्राम गुठावली में विजयसिंह पथिक विद्यालय की स्थापना कर अपने स्वर्गीय चाचाजी की पुण्यस्मृति को चिरस्थायी बनाने का प्रयत्न किया हैं।

बिजोल्यां के कार्यकर्ता अपने स्वर्गीय क्रांन्तिकारी नेता और किसानों के उद्धारकर्त्ता को नहीं भूले। पथिकजी के मित्र और सहयोगी श्री साधु सीताराम दास तथा श्री भंवरलाल पांडे के

विशेष प्रयत्न से बिजोल्यां में पथिक स्मारक का निर्माण हुआ। बिजोल्यां वालो ने अपने स्वर्गीय नेता की मूर्ति की स्थापना कर उनके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की।

यद्यपि पथिकजी का भौतिक शरीर नहीं रहा परन्तु बिजोल्यां के किसान अपने उस नेता से युगो–युगों तक प्रेरणा लेते रहेंगे। राजस्थान पथिक का चिर ऋणी रहेगा। भारत के स्वतन्त्र होने के उपरान्त पथिकजी का कोई उपयोग नहीं किया गया। वे उपेक्षित रहे यह बात उनके मन को अखरती हैं जो पथिकजी के व्यक्तिगत स्नेही और मित्र हैं। परन्तु राजस्थान के जागरण के उस अग्रदूत का प्रेरणामय जीवन आने वाली पीढ़ियों को सदैव प्रेरणा देता रहेगा। जब आज के ऊँचे पदों पर आसीन बहुत से राजनीतिज्ञों को जनता भूल जावेगी, उस सुदूर भविष्य में भी पथिक के प्रति भारत की भावी पीढ़ियां अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करती रहेंगी और उनके कार्यो से प्रेरणा लेती रहेंगी।

सप्तम् अध्याय

पथिकजी का व्यक्तित्व और विचार

पथिकजी को राष्ट्रीयता और देशभक्ति की भावना विरासत में मिली। उनके पितामह ने ब्रिटिश सरकार को उखाड़कर मातृभूमि को स्वतन्त्र करने के लिए रणक्षेत्र में हंसते हंसते अपना बलिदान दिया। उनका परिवार 1857 के प्रथम स्वातन्त्र्य युद्ध में लम्बे समय तक संघर्ष करता हुआ भटकता रहा था। उनके पिता और माता ने अंग्रेजों से खुलकर मोर्चा लिया था। बाल्यकाल से ही उनमें देश को स्वतन्त्र करने की भावना कूट–कूटकर भर दी गई थी। यही कारण था कि बालकपन में ही पथिकजी के मन में सरकारी नौकरी से घृणा हो गई थी और देश को स्वतन्त्र करने के लिए अपने को बलिदान कर देने का उन्होंने संकल्प किया था।

अपने गांव की पंचायत के रुप में सतेज और प्रभावशाली किसान संगठन की उनके कोमल मन पर गहरी छाप पड़ी थी। वे समझ गए थे कि यदि किसानों को ठीक तरह से संगठिन किया जा सके तो ऐसी अजेय जन शक्ति का विकास किया जा सकता हैं कि उसके सामने सत्ताधारी सरकार को पंगु और अशक्त बनाया सकता हैं।

युवक होने पर पथिकजी पर क्रान्तिकारी देशभक्तों का गहरा प्रभाव पड़ा। उस समय के चोटी के क्रान्तिकारी देशभक्तों से उनकी मित्रता थी और उनके संसर्ग में उन्होंने संगठन करने, जनसाधारण में देशभक्ति की भावना भरने की क्षमता प्राप्त की थी और त्याग और बलिदान का पाठ पढ़ा था। क्रान्तिकारी दल के सक्रिय और प्रमुख सदस्य होने के कारण उनमें धैर्य, साहस, वीरता, और कष्टसहिष्णुता आदि गुण बहुत मात्रा में विकसित हुए थे। उन्होंने राजनीति और इतिहास का गम्भीर अध्ययन किया था, इस कारण उनके राजनीतिक कार्य के पीछे केवल देशभक्ति की भावना और जोश ही नहीं था। उनकी राजनीति उनके गम्भीर अध्ययन और समाज के विभिन्न वर्गो की मनोवृत्ति की विस्तृत जानकारी पर आधारित थी।

बिजोल्यां आन्दोलन में जिस अद्‌भुत संगठन शक्ति, साहस, राजनैतिक दूरदर्शिता और शौर्य का उन्होंने प्रदर्शन किया वह उनकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचायक था। जनता के मनोविज्ञान को जितना वे समझते थे उतने विरले ही राजनीतिक कार्यकर्ता समझते होंगे।

बिजोल्यां आन्दोलन के समय वे महात्मा जी के सम्पर्क में आए और उन पर महात्माजी के महान व्यक्तित्व का भी प्रभाव पड़ा। परन्तु वे अन्त तक महात्माजी के इस विचार के समर्थक नहीं बन सके कि राष्ट्रीय आंदोलन में पूँजीपतियों का योग देश के लिए हानिकारक नहीं होगा। अस्तु वे शत–प्रतिशत गाँधीवादी विचारधारा को तो नहीं स्वीकार कर सके परन्तु इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि वे पूज्य बापू की अहिंसा तथा विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था के प्रशंसक और समर्थक बन गए थे।

जब पथिकजी अज्ञातवास में थे टाटगढ़ जेल से निकलकर अपने को छिपाते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटक रहे थे तभी उनके मन में यह बात घर कर गई थी कि जब तक साधारण जनता को, किसान और मजदूर को संगठित नहीं किया जावेगा और आर्थिक आधार पर राष्ट्रीय आन्दोलन नहीं चलाया जावेगा तब तक राष्ट्रीय आन्दोलन सतेज और

प्रभावशाली नहीं होगा। यही कारण था कि उन्होंने किसानों और पीड़ितो में काम करने का निश्चय किया।

किसानों और पीड़ितों में काम करने के लिए उन्होंने तैयारी भी की थी। उन्होंने अपना जीवन एक किसान और मजदूर जैसा बना लिया था। उनका खान–पान, रहन–सहन किसानों जैसा ही था। वे किसानों की भाषा में ही उनसे बात करते थे। जब वे छिपे छिपे किसानों के मकानों में रहते थे तो उन्हें यह कोई नहीं कह सकता था कि वे किसान नहीं हैं। उनमें किसानों की बोली बोल सकने की अपूर्व क्षमता थी। जिस स्थान पर रहते वहां की बोली को बहुत जल्दी सीख लेते।

ग्रामीण जनता के मनोविज्ञान के वे अद्‌भुत जानकार थे। गीतों का ग्रामीण जनता में प्रचार करने के लिए जैसा सफल प्रयोग उन्होंने किया वैसा सफल प्रयोग विरले ही राजनैतिक नेताओं ने किया होगा। बिजोल्यां सत्याग्रह में भजनों और गीतों का प्रचार कार्य में जैसा प्रभावशाली उपयोग उन्होंने किया वह उनकी पैनी दृष्टि का एक सुन्दर उदाहरण हैं। वे स्वयं ग्रामीण बोली में उद्‌बोधक गीतों की रचना करते। श्री माणिक्यलाल वर्मा, श्री प्रेमचन्द भील, प्रज्ञाचक्षु भंवरलाल स्वर्णकार जिनमें भी वे कवित्व शक्ति देखते उनको उत्साहित कर उनका उपयोग आन्दोलन को सतेज बनाने में करते थे। जब बिजोल्यां की स्त्रियां, बच्चे और पुरुष वर्माजी का "पंछीड़ा" प्रेमचन्द जी का "मान मान मेवाड़ा राणा" आदि गीतों को गाते तो किसानों में उत्साह की लहर दौड़ जाती। पथिकजी के नेतृत्व में जब बिजोल्यां सत्याग्रह हुआ तो उस बीहड़ पर्वतीय वन प्रान्त की उपत्यकायें उनके तथा उनके सहयोगियों के रचे हुए गीतों से मुखरित हो उठी थी।

पथिकजी एक अत्यन्त सफल शिक्षक भी थे। विद्यार्थियों के जीवन को मोड़ देने की उनमें अद्‌भुत क्षमता और कला थी। उन्होंने जो बिजोल्यां में जाकर पहले पाठशाला चलाई थी उनके द्वारा उन्होंने बिजोल्यां के बालकों में देशभक्ति की भावना कूट–कूटकर भर दी थी। बिजोल्यां आन्दोलन में जब पहले पहल बड़े बूढ़े उससे दूर रहना चाहते थे पथिकजी तथा उनके आंदोलन को भय और शंका की दृष्टि से देखते थे, उस समय उनके शिष्य ही आन्दोलन के प्रथम सैनिक बने और अन्त तक वे बालक और युवक आंदोलन के प्रमुख कार्यकर्ता और सहायक बने रहे। जब बिजोल्यां सत्याग्रह सफल हुआ और राज्य से समझौता हो गया तो स्वयं पथिकजी ने एक लेख में उन बालकों के अद्‌भुत कार्यो की, आन्दोलन को सफल बनाने में उनकी महान देन को, बड़े ही प्रशंसात्मक शब्दों में याद किया था।

पथिकजी की संगठन शक्ति का तो उनके विरोधी भी लोहा मानते थे। जिन्होंने राजस्थान सेवा संघ के संगठन और कार्यपद्धति को नजदीक से देखा हैं और जिन्होंने बिजोल्यां और बेगू की किसान पंचायतों के संगठन का अध्ययन किया हैं वे जानते हैं कि पथिकजी की संगठन करने की क्षमता अपूर्व थी। किसान पंचायतों के द्वारा उन्होंने एक जनराज्य की ही स्थापना कर दी थी। ठिकाने और राज्य सरकार की सत्ता को उन्होंने जनसत्ता की स्थापना द्वारा सफल चुनौती दी थी। जब उन पर मेवाड़ सरकार ने ऐतिहासिक मुकदमा चलाया था उस समय उनके प्रबल विरोधी बेगू के मुंसरिम श्री लाला अमृतलाल ने यही दोषारोपण किया था कि पथिकजी उस प्रदेश के स्वयं शासक बन बैठे थे।

राजस्थान सेवा सेघ का संगठन उन्होंने देशभक्त सन्यासियों जैसा बनाया था। अत्यंत सादा जीवन, कठोर साधना और निरंतर देश के कार्य में लगे रहनेवालों का वह संगठन था। संघ के सम्बन्ध में श्री रामनारायण चौधरी ने एक स्थान पर लिखा हैं– "मैं दावे के साथ कहता हूँ कि गाँधीजी के आश्रम से पथिकजी का राजस्थान सेवा संघ कई दृष्टियों से बहुत आगे था।" नेता को अपना जीवन अपने सहयोगियों के लिए आदर्श ही ऐसा बनाना चाहिए। यही कारण था कि पथिकजी ने अपने जीवन में असीम सादगी को स्वीकार किया था। जब राजस्थान सेवा संघ समाप्त हो गया और पथिकजी अकेले पड़ गए तब भी पथिकजी का सादा जीवन लोगों को आश्चर्य में डाल देता था। एक बार राजस्थान के एक प्रमुख व्यक्ति उनसे राजनैतिक विचार विमर्श करने गए। उन्हें यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि पथिकजी स्वयं रोटियां सेक रहे थे और सब्जी नहीं थी केवल कांदा (प्याज) की चटनी बनाई थी। इसी प्रकार श्री अश्वनी कुमार चित्तौड़ा एम०ए0 जब अजमेर पथिकजी को ऊपरमाल बिजोल्यां विद्यापीठ के वार्षिक समारोह पर आमन्त्रित करने गए तो वे भोजन कर रहे थे। श्री अश्वनी कुमार ने 'पथिकजी की साहित्य साधना' शीर्षक लेख में लिखा हैं–

"सर्व प्रथम पथिकजी को मैने अजमेर में देखा तो हतप्रभ रह गया। ऐसे मेधावी राजनीतिज्ञ और साहित्यिक व्यक्ति क्या इसी प्रकार रहते हैं। भोजन के समय दाल और तीन चार अनाज मिले हुए आटे की रोटी उन्होंने मेरे सामने खाई।"

वास्तव में पथिकजी जीवन भर अभावों से संघर्ष करते रहे। उनका सादा और कठोर जीवन किसी भी तपस्वी के लिए ईर्ष्या की वस्तु हो सकता हैं। कठिनाइयों को सहन करते हुए भी वे अपने आदर्श और सिद्धान्तों से कभी विचलित नहीं हुए।

काम करने की उनकी क्षमता अपूर्व थी। श्री रामनारायण चौधरी ने अपनी पुस्तक 'वर्तमान राजस्थान' में लिखा हैं कि अस्वस्थ होते तो भी वे सोलह और अठारह घण्टे काम करते थे, न स्वयं चैन लेते और न दूसरों को चैन लेने देते। वे स्वयं कठोर श्रम करते और साथियों से भी कठोरतापूर्वक श्रम लेते थे।

पथिकजी ओजस्वी और अत्यन्त प्रभावशाली वक्ता थे। जब वे बोलते तो श्रोता थोड़ी देर के लिए मुग्ध हो उनके विचारों की धारा में बह जाते। उनके भाषण में एक राजनीतिज्ञ का ओज और दार्शनिक की विद्वता का गाम्भीर्य प्रकट होता था। भाषा पर उनका ऐसा अधिकार था कि जिस प्रकार के श्रोता होते वे वैसी ही भाषा का प्रयोग करते।

पथिकजी एक बहुत ऊँचे दर्जे के लेखक, पत्रकार, कवि, साहित्यकार थे। इतिहास और राजनीति का उन्होंने गम्भीर अध्ययन किया था। कई भाषाओं के वे पंडित थे। जो व्यक्ति कि बालकपन में ही घर–बार छोड़कर मातृभूमि की स्वतन्त्रता को प्राप्त करने के लिए क्रान्तिकारी बना था और जो उस दिन से मृत्यु पर्यन्त संघर्ष ही करता रहा, एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकता रहा, जिसने सामन्तशाही, देशी नरेशों और अंग्रेजी सरकार से लोहा लिया और जो अपने ही सहयोगी देशभक्तों की उपेक्षा और अन्याय का शिकार बना और देश के स्वतन्त्र हो जाने के उपरान्त उसकी ओर किसी ने ध्यान भी नहीं दिया, अभावों से संघर्ष करता हुआ वह व्यक्ति इतनी भाषाओं का ज्ञान, राजनीति और इतिहास का गम्भीर अध्ययन और अनेक ग्रन्थों का सृजन कैसे कर सका यह मुझ जैसे शिक्षक और लेखनी का धन्धा करने वाले को भी

आश्चर्य में डाल देता हैं। बात यह थी कि पथिकजी अपने संघर्ष और विपरीत परिस्थितियों की चिन्ता न कर जब भी उन्हें तनिक भी समय मिलता उसे साहित्य सृजन में लगाते थे। साहित्य रचना के लिए कुछ समय तो उन्हें कारावास में मिला था और शेष साहित्य उन्होंने कारावास से बाहर दौड़ते भागते लिखा था।

निरंतर सतत संघर्ष के विश्वविद्यालय में पथिकजी का शिक्षण हुआ था। जिसे आराम का जीवन कहा जाता हैं वह उन्हें जीवन में एक दिन भी प्राप्त नहीं हुआ। यही कारण था कि वे मानवी स्वभाव के कुशल पारखी बन गए थे। विपत्तियां और कष्ट उनके मन को छूते तक न थे और कठोर परिश्रम और सादगी उनके चिर साथी बन गए थे। वर्षो तक जंगलों और पहाड़ो में छिपे रहने और ऊबड़ खाबड़ प्रान्त में रहने के कारण उन्हें प्रकृति के रहस्यों का बहुत अधिक ज्ञान हो गया था। जंगल की जड़ी–बूटियों का तो उनको अदभुत ज्ञान था। वे जंगल की जड़ी–बूटियों और साधारण देशी दवाओं से इलाज करने में बहुत दक्ष और कुशल थे। बिच्छू इत्यादि के काटने पर तो वे रोगी के कष्ट को तुरन्त नष्ट कर देते थे। जब वे अजमेर छोड़कर तत्कालीन मध्यभारत (आज का मध्य प्रदेश) में भटक रहे थे तो उन्होंने गम्भीर रोगियों का सफलतापूर्वक इलाज किया था। उन्होंने आयुर्वेद का भी अध्ययन किया था।

पथिकजी स्वावलम्बन के घोर पक्षपाती थे। दूसरो पर निर्भर रहना यहां तक कि सार्वजनिक कार्य में भी बाहर से सहायता प्राप्त करना उनको रूचिकर नहीं था। बिजोल्यां तथा बेगू सत्याग्रह आन्दोलन की विशेषता यह थी कि उन्होंने उन बड़े और दीर्घकालीन आन्दोलनों के लिए भी कभी किसी पूँजीपति के समक्ष भिक्षा नहीं मांगी। आन्दोलन के लिए उन्होंने किसानों को ही सहायता देने के लिए तैयार किया। उन्होंने बिजोल्यां में 'मुट्ठी फंड' प्रचलित किया था। प्रत्येक किसान प्रतिदिन मुट्ठी भर अनाज पंचायत और राजस्थान सेवा संघ के लिए निकालता था। उस अनाज से जो आय होती उससे व्यय चलता था। आन्दोलन में एक पैसा भी व्यर्थ व्यय न हो वे इसकी बड़ी सावधानी रखते थे। वे स्वयं व्यय करने में जैसे कठोर मितव्यी थे वैसी मितव्यता की अपेक्षा वे अपने सहयोगियों से रखते थे। आज बहुत सुनने में आता हैं कि कार्यकर्ता सार्वजनिक धन का दुरुपयोग करते हैं परन्तु पथिकजी के कठोर नेतृत्व और अनुशासन में राजस्थान सेवा संघ के सार्वजनिक धन को पवित्र धरोहर के रुप में ही माना जाता था। यदि वे चाहते तो स्वराज्य फंड से अथवा श्री बजाज से राजनैतिक वृत्ति लेकर राजनैतिक सेवा कार्य कर सकते थे किन्तु उन्होंने इसकी कभी कल्पना भी नहीं की।

जब राजस्थान सेवा संघ समाप्त हो गया और पथिकजी एकाकी पड़ गए तब भी उन्होंने यह स्वीकार नहीं किया कि वे किसी से अपने निर्वाह के लिए धन ले लें। इन्दौर, मंदसौर, सनावड़ और बिजोल्यां में किसानों तथा अनेक साधन सम्पन्न व्यक्तियों ने उनसे आग्रह किया कि वे वहां रहकर उनका संगठन करें, देश का कार्य करें और अपने निर्वाह का भार उन्हें वहन करने दें। परन्तु स्वावलम्बन में अधिक आस्था रखने वाले पथिकजी ने उन सब प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया। जानकी देवी जी नौकरी करती और पथिकजी अखबार निकालकर अथवा खेती के द्वारा जीविका उपार्जन करने का प्रयत्न करते। जीविका उपार्जन का कार्य उनके लिए गौण होता था। राष्ट्र का कार्य ही उनके लिए मुख्य था। प्रेस तथा अखबार तो राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं का संगठन करने की भावना छिपी हुई थी। जब उन्होंने मध्यभारत में "सुवासरा" में खेती के लिए भूमि ली थी तो उनका उद्देश्य केवल अपना जीवन निर्वाह ही नहीं था वे वहां

एक आश्रम स्थापित कर स्वावलम्बी कृषि आश्रित देशभक्त कार्यकर्ताओं का आश्रम स्थापित करना चाहते थे। उनका विश्वास था कि यदि राष्ट्रीय आन्दोलन को पूँजीपतियों की सहायता से चलाया गया तो देश में पूँजीपतियों का सार्वजनिक जीवन पर प्रभाव छा जावेगा और स्वतन्त्र होने पर सर्व साधारण को आर्थिक और राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त होने के स्थान पर पूँजीपतियों का वर्चस्व स्थापित हो जावेगा। यही कारण था कि वे राष्ट्रीय आन्दोलन में पूँजीपतियों की आर्थिक सहायता स्वीकार करने का विरोध करते थे और राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं के लिए स्वावलम्बन आवश्यक मानते थे।

पथिकजी का विरोध

राजस्थान के लिए यह बात सदैव दुर्भाग्यपूर्ण और कलंक की मानी जावेगी कि पथिकजी को केवल जागीरदारों, देशी राज्यों और ब्रिटिश सरकार का अन्याय और अत्याचार ही सहन नही करना पड़ा उन्हें अन्य राष्ट्रकर्मियों, देशभक्तों और अपने सहयोगियों के विरोध और अन्याय का भी शिकार होना पड़ा। पथिकजी जैसे साहसी और वीर योद्धा के लिए भारत की स्वतन्त्रता के शत्रुओं का विरोध प्रसन्नता और आत्मसंतोष की बात थी परन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन में लगे हुए अपने ही सहयोगियों के विरोध और उनके प्रति किए गए अन्याय ने उनके मन को क्षोभ और पीड़ा से भर दिया था।

बात यह थी कि जब पथिकजी ने बिजोल्यां सत्याग्रह प्रारम्भ किया था जो कि भारत का प्रथम लगानबन्दी आन्दोलन था तभी से राजस्थान के राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं का एक वर्ग उनका विरोधी था। पथिकजी उस किसान आन्दोलन को छिपकर चलाते थे इसमें उनका महात्माजी से मतभेद था। परन्तु उस समय के देशी राज्यों की जो स्थिति थी, उसमें प्रकट रुप से कोई व्यक्ति आन्दोलन का संचालन नहीं कर सकता था। महात्माजी से पथिकजी के इस मतभेद का उपयोग उनका विरोध करने में खूब किया गया। परन्तु उस समय पथिकजी का क्रान्तिकारी तेज इतना अधिक प्रकाशवान था कि वह निर्बल विरोध उस तेज को धुंधला न कर सका। दुर्भाग्यवश पथिकजी श्री जमनालाल बजाज के विश्वासभाजन भी न बन सके। उसका कारण पथिकजी की यह मान्यता और आग्रह था कि वे सही अर्थो में क्रान्तिकारी भावनाओं के पोषक नहीं हो सकते और उनके द्वारा प्रभावित राजनैतिक संगठन सच्चे अर्थो में क्रान्तिकारी नहीं हो सकता। महात्माजी के विश्वासभाजन होने के कारण तथा राजस्थानी होने के नाते राजस्थान के सार्वजनिक जीवन पर श्री जमनालाल बजाज का गहरा प्रभाव था। साथ ही जो सार्वजनिक संस्थाएं फिर चाहे वे राजनैतिक हों अथवा रचनात्मक कार्य करने वाली हो, सेठ जमनालाल बजाज से मतभेद होने के कारण भी पथिकजी का विरोध और अधिक बलवान होता गया।

जब पथिकजी को लम्बा कारावास हो गया और उदयपुर में कैद कर दिए गए तो बेगुं ठिकाने के मुंसरिम लाला अमृतलाल, शाहपुराधीश श्री नाहरसिंह, मेवाड़ सरकार तथा ब्रिटिश सरकार ने तो पथिकजी के विरूद्ध खूब प्रचार किया ही उनके यश और सफलता से ईर्ष्या करनेवाले कतिपय सार्वजनिक कार्यकर्ताओं ने भी उनकी पीठ पीछे उनका गुप्त रुप से विरोध करना शुरु किया और वे राजस्थान सेवा संघ में दरार डालने में सफल हो गए। उनके जेल से बाहर आने पर संघ टूट गया। पथिकजी के साथी बिखर गए और वे एकाकी पड़ गए। अजमेर की राजनीति में उन जैसे व्यक्ति के लिए कोई स्थान नहीं था। अस्तु वे भटकते रहे।

मेवाड़ तथा देशी राज्य उनके प्रमुख कार्यक्षेत्र थे, वहां उन पर प्रतिबन्ध लगा हुआ था। अतएव वे अपने कार्यक्षेत्र में बहुत लम्बे समय तक न जा सके, इस कारण वे अपने कार्यक्षेत्र से दूर पड़ गए। यह बात बड़े आश्चर्य की है कि पथिकजी पर जब वे 1928 में जेल से छोड़े गए उसी समय मेवाड़ प्रदेश की पाबन्दी लगादी गई, किन्तु मेवाड़ के सार्वजनिक कार्यकर्ताओं ने कभी यह आवश्यकता नहीं समझी कि वे इस बात के लिए आन्दोलन करे कि पथिकजी पर से पाबन्दी उठाई जावे। मेवाड़ प्रजामण्डल बना। उसका मेवाड़ राज्य से संघर्ष भी हुआ। उत्तरदायी सरकार के लिए संघर्ष हुआ किन्तु प्रजामण्डल ने भी पथिकजी पर से प्रतिबन्ध उठाने की मागं नहीं की। यह कहना तो कठिन हैं कि मेवाड़ के सार्वजनिक कार्यकर्ताओं की इस उदासीनता का क्या कारण था किन्तु लेखक को पथिकजी का अपने मित्र और सहयोगी बिजोल्यां के साधु सीताराम दास के नाम एक पत्र मिला था उसमें उन्होंने इस पर प्रकाश डाला था। पत्र में लिखा था कि मुझे विदित हुआ हैं कि मेवाड़ प्रवेश की पाबन्दी उठाई जावे। परन्तु उदयपुर में शिक्षित वर्ग का इस कार्य में सहयोग मिल सकता हैं अस्तु आप तथा मित्रों को इस सम्बन्ध में कुछ करना चाहिए। मेवाड़ सरकार मुझ पर से पाबन्दी उठाने के लिए तैयार हो जावेगी।

जब जन आन्दोलन सफलता के समीप पहुंच गया और देश भी स्वतन्त्रता की मंजिल तक पहुंच गया और मेवाड़ में उत्तरदायी सरकार की स्थापना के चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगे तब कहीं जाकर बिजोल्यां में मेवाड़ प्रजामण्डल के अधिवेशन पर पथिकजी पर से मेवाड़ प्रवेश की पाबंदी हटा लेने की सरकार से प्रार्थना की गई जिसे मेवाड़ सरकार ने तुरन्त मान लिया और पथिकजी पर से मेवाड़ प्रवेश न करने की आज्ञा वापस ले ली गई।

मेवाड़ प्रजामण्डल के बिजोल्यां अधिवेशन (1947) में पथिकजी सम्मिलित हुए थे। जब किसानों का प्रिय नेता और रक्षक बिजोल्यां पहुंचा तो बिजोल्यां के किसान हर्षातिरेक से विहल हो उठे। जिस प्रकार भक्त देव दर्शन के लिए आतुर होते हैं उसी प्रकार पथिकजी के दर्शनो के लिए स्त्री–पुरुष उमड़ पड़े। परन्तु कुछ सार्वजनिक कार्यकर्ताओं को यह नहीं पचा। मेरे एक परिचित सार्वजनिक कार्यकर्ता ने जो बिजोल्यां अधिवेशन में उपस्थित थे मुझे कहा कि कुछ व्यक्ति वहां ऐसे भी थे जो यह नहीं चाहते थे कि पथिकजी को अधिक मान दिया जावे।

कहने का तात्पर्य यह हैं कि पथिकजी का विरोध केवल देशी राज्य, सामन्त और ब्रिटिश सरकार ने ही नहीं किया वरन उनके साथियों और राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं ने भी किया। किसी भी योद्धा के लिए शत्रुओं की चोट सहना आसान हैं परन्तु मित्रों और सहयोगियों की चोट सहना कठिन हैं। यही पथिकजी के साथ हुआ।

पथिकजी के अन्तिम दिनों में तो एक वर्ग ने इस प्रकार का भी प्रचार किया था कि पथिकजी प्रतिक्रियावादी हैं और सामन्तशाही के पोषक और समर्थक हैं। पथिकजी ने श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र में इस ओर तीखा संकेत किया हैं। जिस व्यक्ति ने जीवन भर शोषण और अत्याचार का विरोध किया, जो पूँजीवाद और सामन्तवाद को नष्ट करने के लिए जीवन पर्यन्त संघर्ष करता रहा, उसके विरूद्ध ऐसा घृणित प्रचार किया गया।

चित्तौड़ निवासी पथिकजी के पुराने मित्र श्री भीमराज वाड़ोलिया जिन्होंने चित्तौड़ से प्रकाशित 'ललकार' में पथिकजी की जीवनी प्रकाशित की थी, लिखा हैं–

"स्वार्थी वर्ग ने जब उनके अन्तिम जीवन में उनके विरूद्ध प्रचार किया और जहर उगला तब एक बार दुखित हृदय से मैने उनसे कुछ प्रश्न कर लिए। तब उस वीर ने अपनी वीर गम्भीर लेखनी से जो शब्द लिखे उसका बहुत संक्षिप्त परिचय अपने पाठकों को देता हूँ।

तरीख 12 फरवरी 1950 के एक पत्र में पथिकजी ने लिखा हैं– तुम्हारा पत्र पढ़कर मुझे आश्चर्य भी हुआ और हंसी आई। यदि इतने लम्बे परिचय के बाद भी तुम मुझे न पहचान सके तो अब क्या उपाय हो सकता हैं। यदि मैं प्रत्येक व्यक्ति के फैलाए अपवाद का खुलासा करने लगूं तो आज की राजनीति में आधा समय इसी को देना पड़ जाय। ऐसे अपवाद से सत्य दबता नहीं इसीलिए मैं उसकी उपेक्षा करता हूँ। रहा मेरा संगठन और उसका ध्येय सो वह जो तीस साल पहले था वही आज भी हैं। जब तक वह पूर्ण न हो जावेगा तब तक मुझे उसमें कोई परिवर्तन करने की जरूरत नहीं मालूम होती। उसमें जो कोई बाधक हो उसका सामना करना ही हैं। परिणाम की चिन्ता नहीं। यहां तो जो कुछ होना है, कर्तव्य की दृष्टि से जब जीवन का तीन चौथाई भाग एक पथ पर बीत चुका है तो थोड़े से शेष समय के लिए और वह भी अनावश्यक परिवर्तन कोई बुद्धिमान तो नहीं करेगा। यों तो दुनिया में बहुत से बदल रहे हैं।

– पथिक"

18 अक्टूबर 1953 को पथिकजी ने श्री घाड़ोलिया को जो पत्र लिखा था उसमें पथिकजी के मन में जो पीड़ा थी वह स्पष्ट प्रलक्षित होती हैं–

"एक दम सारी स्थिति विपरीत बन गई हैं। जिन लोगों के हाथों में इस समय सत्ता और साधन हैं, वे जहां सत्ता और धन के लिए परस्पर लड़ रहे हैं और जीवन के पवित्रतम सिद्धान्तों का बलिदान कर रहे हैं, वहां उनमें दूसरो से धन और सत्ता छीनने की ही नहीं, दूसरों के कामों का श्रेय लूटने की भी धुन सवार हो गई हैं और इसीलिए आज ऐसे कार्यो में बाधाओं का कोई ठिकाना नहीं हैं। झूठे इतिहास गढ़े जा रहे हैं। तिलक, रासबिहारी और नेताजी सुभाष भुलाये जा चुके हैं। फिर औरों की तो बात ही क्या है?

– पथिक"

बात यह थी कि पथिकजी अपने प्रारम्भिक जीवन में जब सशस्त्र क्रान्ति की योजना बना रहे थे उस समय वे बहुत से देशी नरेशों, सामन्तों के सम्पर्क में आए थे। राजस्थान के कतिपय देशभक्त राजे और महाराजे उनके प्रशंसक थे। खरवा नरेश गोपालसिंह उनके मित्र और सहयोगी थे। जब टाटगढ़ से पथिकजी भागे तो अजमेर मेरवाड़ा तथा मेवाड़ के कुछ जागीरदारों ने ही उनको छिपाकर रक्खा और उनकी रक्षा की थी। ओछड़ी और पुठौली ठाकुर तो अन्त समय तक उनके अनन्य मित्र और प्रशंसक थे। ऐसी दशा में यह स्वाभाविक ही था कि कतिपय जागीरदार उनके प्रशंसक और भक्त होते। उनके सम्बन्ध का उनके विरोधियों ने उनके विरूद्ध प्रचार करने में उपयोग किया।

पथिकजी की मेवाड़ प्रवेश पर से जब पाबन्दी उठाली गई और वे बिजोल्यां आए तब उनके प्रशंसक और भक्तों ने उन्हें एक थैली देने का निश्चय किया था। उनके प्रशंसक और भक्तों में सर्वसाधारण नागरिक, किसान और जागीरदार सभी थे। किन्तु वह थैली बिजोल्यां में न दी जा सकी और उदयपुर में जगदीश चौक की एक सार्वजनिक सभा में भेट की गई। यह 18

अप्रैल 1947 की बात हैं। सभा में जागीरदार भी यथेष्ट संख्या में उपस्थित थे। यह वह अवसर था कि जब राजनैतिक क्षितिम पर घटनाचक्र तेजी से धूम रहा था। प्रजामंडल और क्षत्रिय महासभा में राजनैतिक संघर्ष चरम सीमा पर पहुच गया था। शान्ति और आनन्दी दो युवको के बलिदान ने वातावरण में तीव्र असंतोष भर दिया था। स्वभावतः मेवाड़ प्रजामंडल के प्रति जनता में श्रद्धा और विश्वास बढ़ गया था और सभी संकेत इस बात की घोषणा कर रहे थे कि सत्ता शीघ्र ही प्रजामंडल तथा जनसेवकों के हाथ में आने वाली हैं। उसी समय उदयपुर में जगदीश चौक की सार्वजनिक सभा में पथिकजी की अमूल्य सेवाओं उनके क्रान्तिकारी कार्यो और उनके निस्पृह जीवन पर प्रकाश डाला गया। कतिपय जागीरदारों ने भी उनकी प्रशंसा की। उस घटना को लेकर पथिकजी के विरूद्ध यह प्रचार जोरो से किया गया कि पथिकजी अब जागीरदारों से मिल गए हैं और राजतन्त्र एवं सामन्तवाद के समर्थक बन गए हैं। नई पीढ़ी के तरूणों ने जो कि पथिकजी के सम्पर्क में नहीं आए थे और उनके कार्यो से परिचित नहीं थे उन पर इस प्रचार का बुरा प्रभाव पड़ा।

पथिकजी के विरूद्ध जब यह प्रचार हो रहा था तब वे नितान्त साधनहीन और एकाकी थे। उनके पास न तो कोई सहायक था और न कोई पत्र जिससे वे उस घृणित अपवाद का निराकरण कर सकते।

पथिकजी का प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा विरोध होते देखकर जिन लोगों ने सार्वजनिक सभा में थैली भेंट की थी वे भी उनसे विमुख हो गए। जब सभा में थैली भेंट की गई तो पथिकजी ने उसे अमानत के रुप में एक सज्जन को रखने को दे दी और सभा में घोषणा की कि वे उसका उपयोग साहित्य प्रकाशन अथवा जन सेवा में करेंगे। निर्णय योग्य मित्रों की राय से बाद में करेंगे। परन्तु बाद मे वह धन भी पथिकजी को नहीं मिला। पथिकजी को दी गई थैली भी पचा ली गई।

स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद हमारे राष्ट्रीय जीवन में एक आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ हैं। जो लोग राष्ट्रीयता के पुजारी होने का दावा करते हैं यदि उनके साथ कल का शोषक, निरीह जनता का उत्पीड़क कोई पूँजीपति अथवा राजा या महाराजा आ जाता हैं तो वह देशभक्त, प्रगतिशील और राष्ट्र सेवक कहा जाता हैं और जिसका उनसे मतभेद होता है वह प्रतिक्रियावादी और राष्ट्र विरोधी घोषित कर दिया जाता हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि क्रान्ति के सफल होने पर जब सत्ता क्रान्तिकारियों के हाथ में आती है तब सम्भवतः ऐसा ही होता हैं। ब्रिटेन में जब राजतन्त्र के विरूद्ध जनतन्त्र विजयी हुआ था तब बहुत से महत्वाकांक्षी राजनीतिज्ञों ने अपने प्रतिस्पर्द्धियों पर यह आरोप लगाकर कि वे राजा के साथ मिले थे उन्हें अपने मार्ग से हटाकर अपना मार्ग प्रशस्त कर लिया था। फ्रांस की राज्य क्रान्ति के समय बहुत से क्रान्तिकारियों को फांसी पर चढ़वाकर चतुर और महत्वाकांक्षियों ने अपनी सत्ता स्थापित करने का मार्ग प्रशसत किया था। बौलशैविक क्रान्ति के सफल होने पर प्रसिद्ध क्रान्तिकारी महान आत्मा प्रिंस कोपाटकिन जब 41 वर्षो के बाद स्वदेश लौटा तो उनकी नितान्त अवहेलना की गई और उसे उपेक्षित जीवन व्यतीत करने पर विवष होना पड़ा। लेनिन का प्रिय और अत्यन्त विश्वासभाजन, क्रान्ति का सर्वश्रेष्ठ नेता और सोवियत रूस की सेना का जन्मदाता ट्राटस्की देश से केवल निकाल ही नहीं दिया गया वरन स्टालिन के एजेन्टों द्वारा मरवा डाला गया। इतिहास दुहराया जा रहा था।

परिशिष्ट

पथिकजी के मुकदमें, बिजोल्यां, बेगुं आन्दोलन तथा राजस्थान सेवा संघ के सम्बन्ध में मेवाड़ राज्य सचिवालय के रिकॉर्ड तथा तत्कालीन समाचार पत्रों से मिले हुए तथ्यों को यहां इस उद्देश्य से संकलित किया गया है कि उसकी प्रमाणिकता सिद्ध हो सके और पथिकजी के कार्यों पर अधिक प्रकाश पडत्र सके।

जुर्माना न देने के सम्बन्ध में पथिकजी का उत्तर

जब पथिकजी को उच्च न्यायालय ने मुक्त कर दिया और उच्च न्यायालय के निर्णय की अवहेलना करके तत्कालीन शासकों ने एक दरबारी चाटुकारों का कमीशन बिठाकर उन्हें पांच वर्ष की सजा दिलाई तो उक्त कमीशन ने कारावास के अतिरक्ति पांच सौ रुपयों का जुर्माना भी किया गया और उसके न देने पर दो मास के कारावास की आज्ञा दे दी थी। जब पथिकजी की सजा समाप्त होने पर आई तो राज्य ने उनसे पूछा कि जुर्माना देंगे अथवा नहीं, उसका उत्तर नीचे लिखा है जो मेवाड़ के मुहकमा खास के रिकॉर्ड से लिया गया है।

जवाब पथिक विजयसिंह

"तमाम दुनिया में अगर कैदी जेल के कवायद के खिलाफ कोई काम न करे और जेल हुकाम को उसके खिलाफ कोई शिकायत न हो तो वह कुछ छूट पाने हकदार हो जाता है। मेवाड़ में भी मामूली मामलों तक में एक माह में दो रोज दिए जाते हैं और मेरे खिलाफ जेल हुकामों को कोई शिकायत नहीं है। बस मेरे इस हक के 42 महीनों के 84 दिन होते हैं। अगर सब न गिनकर सेंट्रल जेल के ही दिन गिने जावें तो 19 माह के 38 दिन होते हैं। अलावा बरी मैंने एक घण्टे रोज चर्खा चलाया है और जो सूत काता है वह जेल को दिया है। मुमकिन है मेरी सजा सादी होने से इसका हिसाब बाकायदा नहीं रक्खा गया हो लेकिन इसे जानते सब हैं और यह ऐसी बात है जिसे इंसाफन कोई भी नज़रअन्दाज नहीं कर सकता।

ऐसी हालत में जुर्माना वसूली का सवाल उठना ही ताज्जुब की बात है, लेकिन अगर इन दोनों बातों को सामने लाने पर भी वसूली जरुरी समझी जाए या दो महीने और कैद रखने की राज्य की मर्जी हो तो मेरे पास इसके सिवाय कोई जवाब नहीं है न कि मेरे पास जुर्माना अदा करने को कोई मिलकियत है और न अदा करना मैं इंसाफन मुनासिब समझता हूँ और इसीलिए दो माह कैद भुगतने को तैयार हूँ।

हाँ उस हालत में एक बात और अर्ज करुंगा। इस मकान की गरमी नाकाबिले बरदास्त साबित हुई है। इसके बारे में मैं बराबर शिकायत भी करता रहा हूँ लेकिन सुनवाई नहीं हुई। नतीजा यह है कि हर साल सारा खून खराब हो जाता है। पारसाल भी 6 माह इलाज कराना पड़ा था और इस साल भी 6 माह से हो रहा है। हाथों की सारी चमड़ी ऐसिटिक ऐसिड से जला देनी पड़ी है। इसलिए अगर यह तकलीफदेही भी सजा में शामिल न हो तो इन दो माह

के लिए या तो मुझे किसी ठण्डी जगह तबदील कर दिया जाय या यहां ऐसा सुभीता कर दिया जाए कि इस बार तकलीफ न हो। फक़्त।''

—विजयसिंह पथिक

सैण्ट्रल जेल

पथिकजी की रिहाई के उपरान्त मेवाड़ सरकार ने बिजोल्यां के सम्बन्ध में जो निर्णय लिए, उनकी सूचना देते हुए श्री ट्रैंच महोदय ने अंग्रेजी में राव साहब बिजोल्यां को जो पत्र लिखा था, उसका हिन्दी अनुवाद—

कैम्प ऊँटाला

15—4—1927

प्रिय राव साहब,

कल हमारे बिजोल्यां सम्बन्धी सम्मेलन में मेरे विचार से नीचे लिखे निर्णय किये गये थे। मैं उन निर्णयों का सार लिखकर भेज रहा हूँ।

1. विजयसिंह पथिक को रिहाई के बाद मेवाड़ की सीमा पर ले जाया जावे और पुनः मेवाड़ राज्य में प्रवेश पर पाबंदी लगा दी जावे।
2. रामनारायण चौधरी को मेवाड़ से निष्कासित कर दिया जावे और पुनः मेवाड़ राज्य में प्रवेश की मनाही कर दी जावे।
3. माणिक्यलाल वर्मा की पिछली हरकतों को देखते हुए ठिकाना उन्हें बुलाकर उनसे एक बाण्ड लिखावे कि भविष्य में वे रामनारायण चौधरी से उनके मेवाड़ में शैक्षणिक तथा राजनीतिक कार्यों के सम्बन्ध में कोई पत्र व्यवहार नहीं करेंगे।
4. जो भी बाहर के अध्यापक स्कूलों में काम करते हैं, उन सबसे महकमा खास से स्वीकृत शर्तों के अनुसार अच्छे व्यवहार की जमानत ली जावे।
5. अन्य सभी स्थानीय और बाहरी अध्यापकों तथा 'समाज सुधारकों' को इस समय छोड़ दिया जावे परन्तु उनके आचरण पर दृष्टि रक्खी जावे।
6. ठिकाने को तुरन्त अपने स्कूल खोल देने चाहिए और इस आशय की घोषणा किसानों में कर देनी चाहिए।

आपका विश्वासभाजन

ट्रैंच

पथिकजी पर मेवाड़ में प्रवेश की मनाही का आदेश

श्री एकलिंगजी

श्री रामजी

नवम्बर, 17456।।

सिद्ध श्री अदालत जिला ..... जोग राज श्री महकमा खास लिखी अप्रंच।। मुलजिम विजयसिंह पथिक उर्फ बी0एस0 पथिक, जिसके निस्तब बगावत के मुकदमें में सजा तजबीज हुई और जो कि अनकरीब रिहा होने वाला है। उसका आइन्दा के लिए इलाके मेवाड़ में दाखिल होना मुनासिब न मालूम होने की वजह से करार पाया कि उसका इलाके मेवाड़ में दाखिला बंद किया जावे। इसलिए लिखी जावे है कि अगर यह शख्स इलाके मेवाड़ में पाया जावे तो फौरन उसको गिरफ्तार कर हस्ब जाब्ता कार्यवाही करें और यहां भी रिपोर्ट करें। सम्वत 1987 बैशाख वदी 6 ता0 23–4–1927 ईसवी।

नोट

इस माफिक हाकिमान जिला पुलिस गिराई के नाम जारी किया गया।

रेकार्ड मुहकमा ख़ास उदयपुर

ए0जी0जी0 हॉलैंड का महाराणा फतहसिंह के नाम प्रसिद्ध पत्र

जब पथिकजी पर मुकदमा चल रहा था उसी समय अंग्रेज सरकार तत्कालीन स्वाभिमानी मेवाड़ नरेश महाराणा फतहसिंह को सिंहासन से हटाने का षड़यन्त्र रच रही थी। हम पथिकजी की कार्यप्रणाली के सम्बन्ध में पहले ही कह आए हैं। वे राज्य सरकार तथा ब्रिटिश सरकार क्या सोच रही है और उसका अगला कदम क्या होगा? यह जानने का प्रयत्न करते थे और वे उसके लिए अपने गुप्तचर इन विभागों में रखते थे। जब पथिकजी पर उदयपुर में मुकदमा चल रहा था तो किसी प्रकार उन्हें तत्कालीन ए0जी0जी0 हॉलैंड का वह धमकी भरा पत्र महाराणा फतहसिंह के नाम मिल गया जो कि उन्हें सिंहासन से हटने के सम्बन्ध में लिखा गया था। उन्होंने उस पत्र को अपने मुकदमें में बचाव के सम्बन्ध में उपस्थित किया था। उस अत्यन्त गोपनीय पत्र के इस प्रकार प्रकट हो जाने से भारत सरकार के राजनीतिक तथा विदेशी विभाग में एजेन्सी के कार्यालयों में हड़कम्प आ गया था। देश भर में एक सनसनी फैल गई थी और देशी नरेश तथा देशी राज्य भय मिश्रित आश्चर्य से चिन्तित और चकित हो गए थे। पथिकजी ने उस पत्र को किस प्रकार और किसके द्वारा प्राप्त किया, यह तो आज तक किसी को ज्ञात नहीं है परन्तु उप पत्र को अपने बचाव में न्यायालय के समक्ष उपस्थित करके उन्होंने समस्त देश का ध्यान उस और आकर्षित किया था और सारे देश में सनसनी फैली दी थी।

मूल अंग्रेजी पत्र की प्रतिलिपि

राजपूताना एजेन्सी

कैम्प उदयपुर

तारीख 17 जुलाई 1921

डी0डब्ल्यू0 1/55

मेरे सम्मानित मित्र,

योर हाईनेस के उस सम्वाद के उत्तर में जो कि श्रीमान ने पण्डित सुखदेव प्रसाद के द्वारा मेरे पास भेजा है। योर हाईनेस को हिज ऐक्सीलैंसी वायसराय महोदय का संदेश लिखित रुप में भेज रहा हूँ जो कि मौखिक रुप से श्रीमान को पहले बतलाया जा चुका है।

हिज ऐक्सीलैंसी वायसराय की सम्मति यह है कि मेवाड़ की जो गम्भीर स्थिति है उसे देखते हुए यह अत्यन्त वांछनीय है कि श्रीमान हाईनेस भविष्य में राज्य शासन में सक्रिय भाग न लें। पिछले कई वर्षों से श्रीमान ने राज्य का समस्त प्रशासन कार्य अपने हाथों में केन्द्रित करने का असम्भव प्रयत्न किया। राज्य प्रशासन में सुधार की आवश्यकता है इस बात की ओर भारत सरकार ने निरन्तर आपका ध्यान आकर्षित किया किन्तु आपने उस परामर्श को स्वीकार करने की कोई तत्परता नहीं दिखलाई। श्रीमान की शारीरिक शक्तियों के क्षीण होने के साथ–साथ ही राज्य में भी अभूतपूर्व राजनीतिक अशान्ति का उदय हुआ। और राज्य के प्रकाशन में जो दोष और त्रुटियां थीं जिन्हें पहले प्रजा विवशता के कारण सहन करती थी, आज वह उनकी खुले

रुप में आलोचना और विरोध करती है। प्रशासन के यह दोष प्रायः राज्य के सभी विभागों में है और जनसंख्या के सभी वर्गों को प्रभावित करते हैं। राज्य भर में फैले हुए इस विस्तृत जन–असंतोष का लाभ आन्दोलनकारी उठा रहे हैं। हिज ऐक्सीलैंसी की सम्मति में इस आन्दोलन के फलस्वरुप स्थिति में ऐसे गम्भीर कारण उपस्थित हो गए हैं कि जो केवल मेवाड़ राज्य के लिए ही गम्भीर आपत्तिजनक नहीं वरन् सभी देशी राज्यों तथा ब्रिटिश भारत के लिए भी घोर आपत्तिजनक है। यही कारण है कि जिनसे प्रभावित होकर हिज ऐक्सीलैंसी इस निर्णय पर पहुंचे कि अब वह समय आ गया है कि श्रीमान हाईनैस अपने पुत्र के पक्ष में राज्य–सिंहासन छोड़ दें। श्रीमान की बढ़ती हुई आयु को दृष्टि में रखते हुए यदि श्रीमान स्वेच्छा से यह कदम उठावेंगे तो इसको ऐसा रुप दिया जावेगा कि श्रीमान ने बढ़ती हुई आयु के कारण यह इच्छा प्रकट की है और उसका परिणाम यह होगा कि उस सम्बन्ध में ऐसी चर्चा नहीं होगी कि जो श्रीमान अरुचिकर हो। मुझे पिछले चार दिनों में श्रीमान हाईनैस से इस सम्बन्ध में बात करने से ज्ञात हुआ है कि श्रीमान हिज ऐक्सीलैंसी वायसराय महोदय के परामर्श को स्वीकार करने को तैयार नहीं है। यद्यपि श्रीमान महाराजकुमार साहब को अथवा उच्च राज्य अधिकारियों को थोड़ा अधिकार श्रीमान हाईनैस के हाथ में रहना अत्यन्त आवश्यक और अपरिहार्य है। श्रीमान से प्रार्थना है िकइस सम्बन्ध में भविष्य में एक मास तक कोई कार्यवाही न की जावे जिससे कि आपको यह सोचने का पूरा समय मिले कि आप हिज ऐक्सीलैंसी की प्रार्थना का क्या उत्तर दें।

मैं श्रीमान हाईनैस के विचारों से भारत सरकार को तार भेज कर अवगत कराऊंगा जो कि आज सायंकाल चार बजे भेज दिया जावेगा, यदि मुझे उनसे पूर्व श्रीमान का और दूसरा सन्देश उत्तर की शर्तों में परिवर्तन करने का नहीं मिला। इसके आगे जैसे ही मुझे भारत सरकार से नवीन निर्देशन मिलेगा मैं श्रीमान को उसके मन्तव्य से तुरन्त अवगत करुंगा।

अन्त में भारत सरकार ने पूछना चाहा है, प्रस्ताव संख्या 462 आर0 गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया विदेशी तथा राजनीतिक विभाग दिनांक 29 अक्टूबर 1920 जिसकी एक प्रतिलिपि श्रीमान के पास है और इस संदर्भ में एक प्रतिलिपि उक्त प्रस्ताव की साथ में भेजी जा रही है कि यदि उक्त प्रस्ताव में प्रस्तावित कार्यवाही करना वर्तमान परिस्थिति में आवश्यक हो जावे तो क्या श्रीमान यह पसन्द करेंगे कि नए विधान के अन्तर्गत जांच आयोग स्थापित न किया जावे? भारत सरकार की यह इच्छा है कि वह जहां तक सम्भव हो कोई ऐसा काम न करे जिससे श्रीमान हाईनैस को व्यर्थ में पीड़ा और मनोव्यथा हो।

मैं यह प्रगट करना चाहता हूँ कि मैं श्रीमान के प्रति बहुत ऊँची भावना रखता हूँ और श्रीमान हाईनैस का एक सच्चा मित्र होने का दावा करता हूँ।

हस्ताक्षर आर0ई0 हॉलैंड

उपरोक्त पत्र में पथिकजी द्वारा अपने मुकदमें में न्यायालय में प्रकट कर देने पर राजनीतिक जगत में भूकम्प आ गया। खुफिया पुलिस ने आकाश पाताल एक कर दिया। मेवाड़ के उच्च अधिकारियों यहां तक कई बड़े उपरावों को बुलाकर उनसे जांच की गई परन्तु भारत सरकार यह पता न लगा सकी कि पथिकजी को यह पत्र कहां से मिला।

कमीशन, जिसने पथिकजी को सजा दी

यह तो हम पहले ही कह आए हैं कि जब मेवाड़ की मंहद्राज सभा (उच्च न्यायालय) के विद्वान जजों ने पथिकजी पर विद्रोह का अभियोग स्वीकार नहीं किया तो तत्कालीन महाराजकुमार ने एक कमीशन की नियुक्ति की जिसका उद्देश्य किसी प्रकार पथिकजी को लम्बी सजा देना था। उस कमीशन में जो व्यक्ति रक्खे गये थे उससे यह स्पष्ट होता है कि कमीशन का बैठाने का उद्देश्य ही यह था कि उनको सजा दी जा सके। कमीशन के सदस्य नीचे लिखे हैं–

पं0 धरमनरायन (मन्त्री) श्री प्रभाषचन्द्र चटर्जी (मन्त्री) मामा अभानसिंह, कोठारी बलवंतसिंह, मेहता जगन्नाथसिंह, जगन्नाथसिंह ढ़ींकरया, तथा श्री अश्वनी कुमार, बाद को दरबार ने अपनी ओर से श्री चन्द्रनाथ को भी कमीशन में शामिल कर दिया।

इस कमीशन में प0 धरमनरायन तथा श्री प्रभाषचन्द्र चटर्जी मेवाड़ राज्य के मन्त्री थे। पथिकजी अपने पत्र में तथा सम्पादकीय टिप्पणियों में उनके ऊपर तीखा प्रहार करते थे। इस कारण वे उनसे बहुत चिढ़े हुए थे। फिर वे राज्य के मन्त्री होने के कारण उच्च न्यायालय में पथिकजी पर मुकदमा चलाने वाले थे। कोठारी बलवन्तसिंह, मामा अभानसिंह, जगन्नाथ मेहता, जगन्नाथ ढ़ींकरया तथा चन्द्रनाथ स्वयं जागीरदार थे। फिर उनकी शिक्षा नाम मात्र की ही थी। इनमें से सम्भवतः कोई भी मिडिल तक पढ़ा नहीं था। कानून का ज्ञान तो दुर्लभ ही था। केवल अश्वनी कुमार ही एक ऐसे व्यक्ति थे जो कि कानून का ज्ञान रखते थे।

कमीशन का विरोध करते हुए पथिकजी ने महाराजकुमार को लिखा था "महंद्राज सभा के जजों की राय को स्वीकार कर आपको मुझे रिहा कर देना चाहिए था किन्तु इसके विरुद्ध अब मेरे अज्ञान में मेरे मामले पर विचार करने के लिए एक कमीशन नियुक्त कर दिया गया है। मुझे इसकी अब तक नियमानुसार कोई सूचना नहीं मिली हैं कि यह कमीशन किस उद्देश्य से, किस नियम के अनुसार और किन अधिकारों के साथ नियुक्त हुआ है। न मुझे इसके सम्बन्ध में अपनी आपत्तियां पेश करने का अवसर दिया गया है। इतना ही नहीं यह कार्यवाही कानूनी संसार में सर्वथा अभूतपूर्व है। इसका यह परिणाम तो प्रगट ही है कि मुझे अकारण कारावास में रहना पड़ रहा है।

Vijay Singh Pathik

पथिक जी द्वारा रचित साहित्य

पथिक जी की बहुत सी रचनाएँ है, जिनमें से कुछ प्रकाशित हो सकी है और कुछ अप्रकाशित है, जिनकी सूची निम्न प्रकार है-

प्रकाशित

1. जेल में दिया ऐतिहासिक बयान
2. चुनाव पद्धितियां और जनसत्ता
3. पथिक प्रमोद (कहानी संग्रह)
4. पथिक विनोद (कविता संग्रह)
5. प्रहलाद विजय (खण्डकाव्य)
6. सुखिया–सुरेश (नाटक)
7. What are Indian States

अप्रकाशित (मौलिक)

1. अजयमेरू (ऐतिहासिक उपन्यास)
2. आलोचना
3. पथिक प्रमोद (कहानी संग्रह)
4. उलट–पुलट (हास्य–व्यंग्य)
5. कल्पना–कल्लोल (गद्यकाव्य) भाग एक एवं दो
6. गणपति (ऐतिहासिक नाटक)
7. गणराज्य पद्धति
8. गाँव के हकीमजी (चिकित्सा)
9. जीवन–स्मरण (आत्मकथा)
10. नारी जाति का इतिहास
11. पथिकजी के जेल के पत्र
12. पथिक निबंधावली (भाग एक एवं भाग दो)
13. पथिक प्रमोद (कहानी संग्रह) (दूसरा भाग)
14. पथिक विनोद (कविता संग्रह दो एवं तीन)
15. बिकरा भाई (राजनैतिक उपन्यास)
16. भारतीय राजनीति के तत्व
17. राजस्थान की मूल संस्कृति
18. रामलाल (नाटक)
19. वांछनीय जीवन (निबंध)
20. वेदों में विश्व इतिहास
21. वैज्ञानिक वेदांत–दर्शन
22. स्वराज (राजनैतिक सिद्वान्त)
23. पथिक जी के पत्र

अनुवाद (प्रकाशित)

1. अध्यापक और अभिववादक (टाल्सटाय की प्रसिद्व पुस्तक)
2. गरीबों का स्वराज (प्रिंस क्रोपाटकिन की प्रसिद्व पुस्तक 'कौ क्वेस्ट आव ब्रेड')

सम्पादित पत्र

1. राजस्थान केसरी
2. नवीन राजस्थान
3. तरूण राजस्थान
4. राजस्थान संदेश
5. नव–संदेश

विजय सिंह पथिक शोध संस्थान

ग्रेटर नोएडा (उत्तरप्रदेश) फोन : 9313203731